अनुवाद की व्यावहारिक समस्याएं: हिन्दी और मलयालम के विशेष संदर्भ में

ANUVAD KI VYAVAHARIK SAMASYAYEM: HINDI AUR MALAYALAM KE VISESH SANDARBH MEM

Thesis submitted to the Cochin University of Science and Technology for the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

By

PRAMEELA K.P.

Prof. & Head of the Dept.
Dr. P. V. VIJAYAN

Supervisor :
Dr N.G. DEVAKI

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI-682 022

1993

D E C L A R A T I O N

I hereby declare that the thesis entitled "ANUVAD KI VYAVAHARIK SAMASYAYEM - HINDI AUR MALAYALAM KE VISESH SANDARBH MEM" has not previously formed the basis of the award of any degree, diploma, associateship, fellowship or other similar title or recognition.

PRAMEELA K.P.

DEPARTMENT OF HINDI,
COCHIN UNIVERSITY OF
SCIENCE AND TECHNOLOGY,
KOCHI - 22.

C E R T I F I C A T E

This is to certify that this thesis is a bonafide record of work carried out by **PRAMEELA K.P.** under my supervision for P hD Degree and no part of this thesis has hitherto been submitted for a degree in any University.

Devaki
DR. N. G. DEVAKI.
(Reader in Hindi)
SUPERVISING TEACHER.

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF
SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI - 22.

पुरोवाक्

भारतीयता के संदर्भ में हिन्दी का संपर्क देश की समस्त भाषाओं से हो रहा है । इसी तौर पर हिन्दी के साथ हिन्दीतर भाषाओं की भेदात्मकता का अभिनिर्धारण आवश्यक हो उठा है । इससे 'एकता' की स्वाभाविक व गहरी रेखा मालूम हो जाएगी । हिन्दी के साथ हिन्दीतर भाषा की भेदात्मकता के उन बिंदुओं की तलाश आवश्यक है जिससे होकर हिन्दी तथा हिन्दीतर भाषा, परस्पर अधिगम्य किया जा सके । हिन्दी भाषा, हिन्दीतर भाषाओं से लाभान्वित हो और हिन्दीतर भाषाएं, हिन्दी से । यही इस छोटे परिश्रम की पहली प्रेरणा रही है ।

आपसी समन्वय वर्तमान की सख्त ज़रूरत है । एक, दूसरे का संबल रहना और पनपना, फिर फूलना फलना जीवन का मामूली नियम है । इस नियम के अनुसार भाषाई महिमा भी मातृभाषा तक सीमित नहीं रहती । लेन-देन व आयात-निर्यात से चीज़ों, साधनों व संस्कृतियों के साथ अभिव्यक्ति की स्वच्छधारा भी बह गयी । किसने किसको बहा दिया ? मात्र यही शंका है ।

मातृभाषा एक सीमित सामाजिक यथार्थ है । उसे व्यापक सामाजिक संदर्भ तथा राष्ट्रीय महत्व से जोडने केलिए अनुवाद अपेक्षित है । व्यक्ति, अपने समाज का अंग होने के साथ साथ राष्ट्र का नागरिक और देशस्नेही सामाजिक होता है । मातृभाषा उसकेलिए साध्य होते हुए भी अन्य भाषाओं का मार्ग है ।

केरल की निवासी होने के साथ मातृभाषा मलयालम तथा भारत की नागरिक होने के नाते राष्ट्रभाषा हिन्दी शोधार्थिनी की प्रिय भाषाएं रही हैं । व्यापक तौर पर भारतीयता की इन दोनों पहलुओं को अनुवाद के संदर्भ में तुलना करना इसी वजह से शोधार्थिनी का विषय बन गया ।

भाषाविषयक लेन-देन की प्रक्रिया के मूल में मनुष्य की आकांक्षाएं वर्ततान हैं । सारग्रहण, वस्तुकथन तक सीमित रहते वक्त मूल को, उसी ढंग में समझने व आस्वादन करने की लगन पैदा हुई । इसलिए अनुवाद की परिभाषा तथा प्रक्रिया के पीछे वही प्रवृत्तियां देखने को मिलती हैं, जो वाणी की व्युत्पत्ति के प्रारंभ में वर्तमान थी । परजीवन की झांकियों का विश्लेषण स्वजीवन को अर्थवान और पूर्ण बनाने की पहली सीढी है । दूसरे शब्दों में, अनुवाद की प्रासंगिकता अशंकित है ।

शोध की व्यावहारिक दृष्टि के अनुसार सिद्धान्तों के साथ व्यावहारिकता भी इस कार्य की पूर्ति केलिए माध्यम रहा है । प्रायोगिक शोध बहिर्मुखी होता है, सिद्धान्त अन्तर्मुखी । इन दोनों के समन्वय की अपेक्षा शोधार्थिनी को बराबर महसूस हुई । अत: इसपर ध्यान देकर अध्यायों का सृजन और वर्णन किया है । इसमें प्रस्तुत विषय 'अनुवाद की व्यावहारिक समस्याएं हिन्दी और मलयालम के विशेष संदर्भ में' से विदित होता है ।

अनुवाद भाषाविषयक कार्य होने के कारण, लेखक सापेक्ष या व्यक्ति सापेक्ष प्रक्रिया है । व्यक्तिवाणी की निजो विशेषताएं उसमें रहती हैं । अनूदित सामग्री के आस्वादन में इन्हीं वैयक्तिक कमज़ोरियों पर शिकायत सुनने को मिलती है । अत: सिद्धान्तों तथा व्यावहारिक कार्यों का ज्ञान एक हद तक मालूम है तो अनुवाद को बाहरी या प्राथमिक त्रुटियां दूर होगी । इस दृष्टि से यह अध्ययन प्रस्तुत किया है ।

पहला अध्याय हिन्दी एवं मलयालम भाषाओं की तुलनात्मक विशेषताएं हैं । हिन्दी - मलयालम आपसी अनुवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में झांक कर भाषाओं के सामान्य प्रयोगों में आनेवाले नियम और रूपवैविध्य को औपचारिक व अनौपचारिक रूप में तुलनात्मक प्रतिपादन किया है । हिन्दी तथा मलयालम भाषाई विशेषताओं का श्रोत संस्कृत है । इसलिए भाषाई विकास के अनेकवर्षीय इतिहास ने मानवसंस्कृति के साथ इन दोनों भाषाओं को भी एकता के सूत्रों से बांध दिया ।

भाषा बहता नीर है । उसके परिवर्तन के विभिन्न आयामों - ध्वनियां, व्याकरण, शब्दावली, मुहावरे, लोकोक्ति, आदि - की चर्चा अनिवार्य है । इनमें भाषा का नियम है व्याकरण । दूसरा अध्याय उस पर केन्द्रित अनुशीलन 'हिन्दी तथा मलयालम व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन ' है ।

व्याकरण का मुख्य ध्येय उक्ति व अनुभव के अनुसार यथासंभव तत्वों को व्यावहारिक बनाना है, न कि नियमों में भाषा को जकड़ना । इस व्यापक दृष्टि को हिन्दी -मलयालम के आपसी अनुवाद में प्रयुक्त करके व्याकरण के समस्त अंगों का तुलनात्मक विश्लेषण यहां प्रस्तुत किया है । हिन्दी व्याकरण की कमियां व खामियां, साधारण भाषा-प्रयोगों में भ्रामकता पैदा करती हैं । अनुवाद के संदर्भ में इसकी संख्या और बढ जाती है । मलयालम में व्याकरण के नियमों की वैचारिक दृष्टि, हिन्दी से मलयालम में अनूदित साहित्य को अपेक्षाकृत सरल व पूर्ण बना देती है ।

प्रभाव के सामान्य परिणाम कीदृष्टि से आधुनिक युग में व्याकरण से बढकर संरचना को महत्ता दी जाती है । यह ठीक भी लगता है । संक्षिप्त अभिव्यक्ति में सच्चा व पूर्ण अनुभव - यही भाषा का जीवन व प्रयोजन है । इसलिए बोलनेवालों द्वारा आनेवाला परिवर्तन ठीक नहीं है । भाषा की शुद्धता इसी संरचना के आधार पर निर्धारित की जाती है । इस महत्वपूर्ण बात को ध्यान में लेकर हिन्दी और मलयालम वाक्यसंरचना की चर्चा ' अनुवाद में हिन्दी और मलयालम वाक्यसंरचना ' शीर्षक तीसरे अध्याय के रूप में प्रस्तुत की है । एक ही भाषा की विभिन्न वाक्य संरचना हो सकती है । उन सबकी यथासाध्य उद्धृत करने का प्रयास किया है । भाषा की संरचना का प्रभाव बढाने केलिए अनेक पोषक तत्वों का प्रयोग होता है - जैसे, अलंकार, छन्द, शब्दशक्ति, लोकोक्ति, मुहावरे । हर एक भाषा के उपयुक्त पोषक तत्व निजी विशेषताओं से युक्त रहने के कारण

अनुवाद में सर्वाधिक दिक्कत पैदा करनेवाले अंग हैं । इन सबका अध्ययन व तुलनात्मक विश्लेषण इस अध्याय का विषय रहा है ।

संरचना के निर्धारण में संदर्भ का महत्व अक्षुण्ण है, जिसकी बुनावट पर उसकी गति केन्द्रित भी । इसी कारण से भाषा एक ढांचा है, व्यवस्था भी । उसकी एक वैज्ञानिक दृष्टि रहती है । इसलिए अनुवाद से भाषाविज्ञान का निकट संबन्ध है । इसी कारण से हिन्दी-मलयालम भाषाओं के अनुवाद में उद्भूत भाषावैज्ञानिक समस्याएं उदाहरण सहित चौथे अध्याय में प्रस्तुत की है । दोनों भाषाओं में अनूदित सामग्री के अध्ययन व परीक्षण केलिए इस विश्लेषण की परम आवश्यकता है । अनुवाद कला, विज्ञान और शिल्प होने के साथ साथ भाषावैज्ञानिक अंग है, जो वर्तमान केलिए सर्वाधिक उपयुक्त व प्रयुक्त है ।

व्याकरण, संरचना तथा भाषावैज्ञानिकता से पूर्ण उक्ति का प्रभाव अनुपम होता है । प्रभाव के वास्ते इन तीनों का सम्मिलित रूप 'शैली' भाषा के सौन्दर्य की रक्षक है । वही उसका वैभव है । जातीय संस्कृति व उसके शीलप्रदर्पण की महिमा से मण्डित क्षेत्रीय व देशीय भाषाओं के अनुवाद में शैली की समस्या कठिनतर रहती है । यह संरचना का अलग चरण है, जिसको परभाषा में के शब्दों व रूपों में बांधना आयास-पूर्ण है । भाषा में इन स्तरों की जड़ें गहराई तक पहुँची हुई है । कभी मूल भाव पकड़ में आता है, कभी नहीं । अत: लेखक, विधा, विषय और भाषा सापेक्ष सृजन का अनुवाद प्रासंगिक होने के कारण ग्रास होता है, साथ ही दिक्कतपूर्ण । हिन्दी व्यापक प्रदेश की भाषा होने के कारण शैलीविषयक अध्ययन का बहुआयामी स्तर व रूप है । अनुवाद की पृष्ठभूमि में इसका परम प्रयास 'हिन्दी और मलयालम में अनूदित साहित्य के आधार पर उनकी शैलीपरक समस्याएं ' नामक पांचवें अध्याय के रूप में हुआ है ।

छठे अध्याय 'हिन्दी और मलयालम अनुवाद की समस्याएं - प्रयोजनमूलक भाषा के परिप्रेक्ष्य में' प्रयोजनमूलक भाषानुवाद पर केन्द्रित है । हिन्दी राष्ट्रभाषा होने के कारण उसका देशीय व अन्तर्देशीय परिप्रेक्ष्य है । इसी भूमिका में वह प्रगति के पथ पर वेगमयी है । उसके विकास में कार्यालयी, वैज्ञानिक, तकनीकी और व्यावहारिक विषय निरन्तर उगते है, विकसित होते हैं । उनकी क्षेत्रीय भाषा मलयालम में लाना आवश्यक है । विचारात्मक विषयों में पत्राचार, कृषि, व्यापार-व्यवसाय आदि के साथ फिल्म आदि मनोरंजन के विषय भी इनमें अनूदित होते हैं । महिमामयी, पूर्ण साक्षर केरल के विचारों- भावों तथा संकल्पनाओं-आकांक्षाओं के अनुवाद में उद्भूत शैलीगत समस्याओं पर वैज्ञानिक दृष्टि डालते हुए हिन्दी का रूप संपर्कभाषा से होकर राष्ट्रभाषा तक जिस प्रकार विकासप्राप्त है, उसका आकलन यहाँ प्रस्तुत है । हिन्दी के इस विकास के पीछे वर्तमान प्रेरणाओं में क्षेत्रीय भाषाओं का स्थान है, जिसमें मलयालम का प्रमुख स्थान है ।

हिन्दी और मलयालम में अनूदित साहित्य को ध्यान में रखकर उनकी पूर्णता की शिकायतों पर भी ध्यान रखना है । आशय विनिमय और वितरण मानव संस्कृति को एकता का रास्ता है । पर आजकल भाषाई स्वार्थ व कट्टरता उसे अनधिगम्य बनाता है । इस पर मिलनेवाले विचार-विमर्श अनन्तिम है । यहीं शिकायतों को दूर करने के हेतु अनूदित सामग्री की समीक्षा अति आवश्यक लगती है । और भाषाई कट्टरता को भाषाई सहिष्णुता में बदलकर मिश्र संस्कृति के सपने को साकार बनाना होगा ।

कुलमिलाकर शोधार्थिनी अपने सामाजिक यथार्थ को अन्य सामाजिक संदर्भों से जोडने की रीति की पोषक है । मातृभाषा के साधन को राष्ट्रभाषा का साध्य बनाने केलिए जुटाना और उसकी अस्मिता को बनाए रखते हुए भावात्मकता को समग्रता देना हमारा कर्तव्य रहा है । अनूदित सामग्री तथा अनुवाद का विषय इसकेलिए माध्यम रहा है ।

इस प्रयास में कई लेखकों, अनुवादकों, चिन्तकों तथा वैयाकरणों की सृष्टि एवं दृष्टि मेरेलिए सहायक रही हैं । उनके सुचिन्तन का सतत सहचारी होकर अपना काम पूरा किया है । सिद्धान्तों व विचारों के साथ उदाहरणों में भी दुहरापन आ गए हैं । क्यों कि हमारा प्रयास सुष्टु, सच्चे और अच्छे उदाहरण देने में हुआ है, न कि असुन्दर, अनाकर्षक व अव्यावहारिक । भाषा और उसके अंगों की अलग अलग चर्चा हुई, तो भी भाषा के अंगों की उससे अलग न रख सकता है । अत: विचारों का पुन: कथन और पुन: प्रस्तुतीकरण जानबूझकर स्पष्टता और पूर्णता की कसौटी पर किया है ।

इस प्रयास में मुझे विभागाध्यक्ष श्री ·डॉ ·पी ·वी ·विजयनजी तथा शोध निर्देशक श्रीमति डॉ देवकीजी से प्रेरणा व दिग्दर्शन मिलते रहे, उनके प्रति मैं नतमस्तक हूँ । अन्य विभागीय चेतना भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में मेरेलिए उत्साहवर्धक रही है, उनकेप्रति मैं हमेशा ऋणी रहूँगी ।

आगे के पन्नों में यदि त्रुटियों या कमियों का एहसास हुए तो इस अल्पबुद्धि को माफी देना ।

नतमस्तु ,

प्रमीला

समर्पण

उन्हीं प्रतीक्षाओं को, जिन्होंने इसकेलिए मुझे बाध्य बनाया था,

उन्हीं प्रकाशपुंजों को, जिन्होंने बार-बार मुझे रास्ता दिखाया था,

उन्हीं सांत्वनाओं को, जिन्होंने हमेशा मुझे अंचल दिया था। ।

प्रकाशित लेख

इस शोध के आधार पर शोधार्थिनी द्वारा निम्नलिखित शोधलेख प्रकाशित हो चुके हैं :-

विषय	पत्रिका	वर्ष	अंक
1. आर्य-द्रविड़ भाषाएं-समन्वय के झरोखे से	हिन्दी प्रचार समाचार	55	12
2. पारिभाषिकता का अवांछित भ्रम	ज्योत्स्ना	44	2
3. अनुवाद: मूल्यांकन की अनिवार्यता	ज्योत्स्ना	(स्वीकृत)	

विषयसूची

अनुवाद की व्यावहारिक समस्याएं - हिन्दी और मलयालम के विशेष संदर्भ में

पहला अध्याय अनुवाद में हिन्दी एवं मलयालम भाषाओं की तुलनात्मक विशेषताएं (1 - 12)

राष्ट्रभाषा हिन्दी - भारत में मलयालम - हिन्दी-मलयालम का आपसी संबन्ध - हिन्दी-मलयालम अनुवाद की परंपरा - अनुवाद की व्यावहारिक दृष्टि - हिन्दी व मलयालम तुलनात्मक विशेषताएं - निष्कर्ष ।

दूसरा अध्याय हिन्दी तथा मलयालम व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन (13 - 51)

भाषा, अनुवाद और व्याकरण - अनुवाद में चर्चित व्याकरणिक अवयव - हिन्दी-मलयालम ध्वनियां - उच्चारण एवं वर्तनी की तुलना - लिप्यंकन और लिप्यंतरण - शब्द समूह - भाषानुवाद में शब्दों का विभिन्न रूप - अनुवाद और पदादान - शब्दों का वर्गीकरण - हिन्दी शब्द प्रकरण - मलयालम शब्द प्रकरण - हिन्दी-मलयालम लिंग व्यवस्था - वचन प्रकरण - कारक-विभक्ति विवेचन - सर्वनाम - क्रिया - संयुक्त क्रिया - कृदन्त - क्रिया विभाग - प्रकार - प्रयोग - पेरेच्चं - सहायक क्रिया एवं अनुप्रयोग - विशेष प्रयोग - कालरचना में क्रिया का रूप - वर्तमान काल - भूत काल - भविष्यत् काल - विशेषण - क्रिया विशेषण - संबन्धबोधक - समुच्चय बोधक - निष्कर्ष ।

तीसरा अध्याय अनुवाद में हिन्दी और मलयालम वाक्यसंरचना (52 - 66)

वाक्य: अनुवाद की इकाई - अनुवाद में वाक्य की विशेषताएं - वाक्य संरचना: प्रकार - वाक्यरचना की विभिन्न कोटियां - वाक्यरचना में वाच्य और प्रयोग - वाक्य रचना के पोषक तत्व - हिन्दी-मलयालम मुहावरे तथा लोकोक्तियां - हिन्दी-मलयालम मुहावरों का अनुवाद

हिन्दी-मलयालम अनुवाद में कहावतें - वाक्यगठन और अनुवाद - हिन्दी और मलयालम वाक्य संरचना की सामान्य विशेषताएं - निष्कर्ष ।

चौथा अध्याय   हिन्दी तथा मलयालम अनुवाद की भाषावैज्ञानिक समस्याएं (67 - 78)

भाषाव्यापार और भाषाविज्ञान - अनुवाद में ध्वनिविज्ञान - भाषण, ध्वनि, स्वराघात, स्वरकंपन और लय की अभिव्यंजना - भावाधिक्य अथवा बलाघात के संदर्भ में ध्वनियां - ध्वनि अनुकार शब्दों की समस्या - भाषण ध्वनियों का मुख्य मूल्य - रीति की अभिव्यंजना - अनुवाद और रूपविज्ञान - शब्दरूप का अंतर - शब्दवर्ग का अन्तर - अनुवाद और वाक्यविज्ञान - वाक्य की बाह्य एवं आन्तरिक संरचना - वाक्य के निकटस्थ अवयव - प्रयोगविधि - अनुवाद और अर्थविज्ञान - काल-स्थान संदर्भ - शब्दशक्ति - पर्याय - सांस्कृतिक आधार - अनुवाद में अर्थवत्ता की विभिन्न कोटियां - सूचनापरक - संघातपरक - विधानपरक - स्थानपरक - एककालिक - बहुकालिक - और तुलनात्मक - अनुप्रयुक्त - व्यतिरेकी भाषाविज्ञान - हिन्दी-मलयालम वाक्यरचना में भाषावैज्ञानिक दृष्टि - निष्कर्ष ।

पांचवां अध्याय   हिन्दी और मलयालम में अनूदित साहित्य के आधार पर उनकी शैलीपरक समस्याएं (79 - 94)

अनुवाद में शैली - शैली के विभिन्न पक्ष - विभिन्न शैलियां - शैलीगत समस्याएं और समाधान - चयन - ध्वनिचयन - शब्द चयन - रूपचयन - वाक्यचयन - विचलन की समस्या - अप्रस्तुतयोजना - समान्तरता - ध्वन्यात्मक बलाघात - बिंब-प्रतीक - नाद सौन्दर्य - आंचलिकता - हिन्दी-मलयालम का अनूदित साहित्य संदर्भ - काव्यधारा - निष्कर्ष ।

छठा अध्याय हिन्दी और मलयालम अनुवाद की समस्याएं - प्रयोजनमूलक भाषा के परिप्रेक्ष्य में (95 - 113)

प्रयोजनमूलक भाषा: स्वरूपगठन और अनुवाद - भाषान्तरण में प्रस्तुत प्रयोजनमूलक भाषा के रूप - प्रशासन व राष्ट्रव्यवहार की भाषा - शिक्षा और धर्म की भाषा - विधि तथा न्यायव्यवस्था की भाषा - विज्ञान व प्रौद्योगिकी की भाषा - शोध व अनुसंधान की भाषा - व्यापार-व्यवसाय की भाषा - संचार व पत्रकारिता की भाषा - फिल्म तथा कलाविषयक भाषा - अन्तर्राष्ट्रीय संबन्धों का भाषारूप - प्रयोजनमूलक भाषा: समस्याएं और समाधान - भाषा का मानकीकरण -एक दृष्टि - मशीनी अनुवाद - निष्कर्ष ।

उपसंहार (114 - 117)

परिशिष्ट हिन्दी और मलयालम में अनूदित साहित्यसूची (118 - 120)

सहायक ग्रन्थसूची (121 - 132)

****** ******

पहला अध्याय

अनुवाद में हिन्दी एवं मलयालम भाषाओं की तुलनात्मक विशेषताएँ

हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है । इसी कारण से उसकी महत्ता और गरिमा उसके नाम पर निहित है । हिन्दी का स्वरूप विकासशील है । वह हमारी संस्कृति और सभ्यता की अभिन्न अंग है । भारत की आध्यात्मिक परंपरा में हिन्दी की भूमिका महत्वपूर्ण है ।

क्षेत्र की दृष्टि से हिन्दी पूरे मध्यदेश की भाषा है, जो भारत के ऐतिहासिक एवं धार्मिक जागरण की पृष्ठभूमि रही है । पूरे हिन्दी प्रदेशों और अन्यान्य बोलियों के क्षेत्र में आजकल परिनिष्ठित हिन्दी खडीबोली का ही साहित्यिक तथा संवैधानिक कार्य चल रहा है । आदान-प्रदान की प्रक्रिया से जुडी हुई भाषा के रूप में भी हिन्दी पूरे भारत में अपना गौरव रखती है । जनतन्त्र की आधारशिला के रूप में हो, या राष्ट्रीय एकता की सुदृढ नींव के रूप में हो, हिन्दी की शक्ति एवं क्षमता अन्य भारतीय भाषाओं से अधिक है । इसलिए 'हिन्द रूपी देह की धडकन हिन्दी है, हिन्द के विस्तार की अभिव्यक्ति हिन्दी है, हिन्द अर्थात् भारतवर्ष पुरुषार्थ है और हिन्दी उसकी संस्कृति है[1]।'

हिन्दी भारतीय जनमानस की अभिव्यक्ति का महान माध्यम है । 'उसकी लचीलापन, शिक्षण की सहजता, ध्वनियों और लिपि की सरलता की वैज्ञानिकता एवं अंतत: देश के अपेक्षाकृत एक बडे भूभाग मध्यदेश का उसका क्षेत्र उसकी प्रतिष्ठा के कारण है[2]।'

राष्ट्रभाषा हिन्दी

हिन्दी की विकासयात्रा संघर्षपूर्ण रही है । अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद के समान उनकी भाषा की पंजा भी मज़बूत थी । आजकल उस मुट्ठी से बाहर स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखने में वह सफल हो गई है । लेकिन इसकी दावा हम नहीं कर सकते कि वह ~~पूर्ण एवं~~ संपूर्ण है । आधुनिक युग में संविधान की मान्यताप्राप्त राजभाषा के स्वरूप की समृद्धि एवं श्रीवृद्धि बनाए रखने केलिए उसका मानकीकरण हुआ है । क्यों कि जिस प्रकार मनुष्य की मूलगत प्रवृत्तियों को नए लक्ष्य से जोड कर हम उसके अप्रत्यक्ष आदर्श और प्रत्यक्ष कर्म का निर्माण करते रहते हैं, उसी प्रकार भाषा की नैसर्गिक वृत्तियों से नए भाव, नई वस्तु, नए विचार जोडकर हम उसे नए रूपों से संबद्ध करते हैं[3]। वहीं भाषा की उपयोगात्मक एवं प्रगतिशील

- -

1 .आलोक कुमार रस्तोगी - व्यावहारिक राजभाषा पृ . 12 .
2 .धनंजय शर्मा - हिन्दी अपेक्षाएँ और संभावनाएँ भाषा 1962 पृ . 54 .
3 .महादेवी वर्मा - इस्पात राजभाषाभारती 1987 पृ . 15 .

पहलू है । इस नए रूपगठन में मुख्यत: राष्ट्रीयता की अपेक्षा विद्यमान रही है। साथ ही पश्चिमी प्रभाव, स्वतन्त्रता संघर्ष और स्वतन्त्रता प्राप्ति, भारत का औद्योगिकीकरण, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं से अनुवाद का दबाव, वैज्ञानिक प्रगति आदि का हाथ रहा है ।[1] आज के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी राजकाज की ही नहीं, जनतन्त्र की भी मूलमन्त्र है । अत: औपचारिक रूप में ही नहीं, व्यावहारिक दृष्टि से भी सांस्कृतिक निष्ठा और परंपरा निर्वाह का दायित्व उसपर है । व्यावहारिक-साहित्यिक पहलुओं में उसका स्थान संसार के सबसे बडे दूसरे राष्ट्र की अभिव्यक्ति के रूप में है ।

भारत में मलयालम

सह्याद्रि की छांह में सस्यश्यामल केरलभू कोमल तरुणी की तरह अपने वैभव की गरिमा में सिर ऊंचा कर स्वच्छ तथा सुन्दर हँसी के साथ खडी है । वह अपने अतीत की रजतरेखाओं से भारत के इतिहास को ओझल कर देती है, अपने अंचल की रमणीय सौन्दर्य से भारत के हरितपटल पर रंग फैलाती है, अपनी जनता की संस्कृति व राष्ट्रीयभावना के पाठ से भारतीय नागरिकता की नमूना घोषित करती है ।

शासन वैविध्य के कारण केरल का अतीत बडा रोचक रहा है । विभिन्न राजाओं तथा सामन्तों के अधीन रहती हुई जनता में विभिन्न संस्कारों की नींव घनीभूत हो गई । इन्हीं संस्कारों का बहिस्फुरण उसकी अभिव्यक्ति में मिलता है । अन्य द्राविड भाषाओं की तुलना में केरल की भाषा में दिखायमान बहुआयामी वैविध्य और वैशिष्ट्य का यही कारण है । आगे चलकर उनके इन बहुआयामी विशेषताओं से भारतीय संस्कृति का मेलमिलाव तथा क्रमिक विकास दिखाई पडता है । क्यों कि, यद्यपि भाषाकी दृष्टि से मलयालम केरल की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है तो भी मलयाली पूरे भारत में दिखायमान है । अत: मलयाली केलिए भारत की कोई भी भाषा स्वीकृत व समझदार होगा । इसका कारण मलयालम की भाषाई विशेषताएं हैं ।[2]

केरल वीरगाथाओं तथा लोकगाथाओं के साथ जनश्रुतियों तथा किंवदन्तियों का देश है । परशुराम की परसा की पुत्री, जहाँ तक विश्वप्रसिद्ध कालिदास के परम कवित्व की झाँकियों में भी प्रस्तुत हुई है ।[3] उन केरलीयों के विशिष्ट संस्कारों तथा रीति-रिवाज़ों में परप्रान्तीय तथा पराराष्ट्रीय जनता की लगन उठाने का यही कारण है । आधुनिक काल में तो रोज़गार की खोज में निकले दिल्लगी केरलीयों

---

1 भोलानाथ तिवारी - हिन्दी भाषा की सामाजिक भूमिका पृ. 77

2 के.एम.जार्ज - निबन्ध संग्रह पृ. 202.

3. कालिदास - रघुवंश चतुर्थ सर्ग, कालिदास ग्रन्थावली पृ. 46.

'तस्या नौ के विसर्पद्भिरपरान्तजयोद्यतै
रामास्त्रोत्सारितो प्यासीत्सह्यलग्न इवार्णव: ।।53।।
भयोत्सृष्ट विभूषाणां तेन केरल योषिताम्
अलेषु चमूरेणुश्चूर्ण प्रतिनिधिकृत: ' ।।54।।

के भाव , विचार, आदर्श और भाषा, कोई भी राज्य या राष्ट्र के लोगों केलिए आकांक्षा एवं रुचि के विषय हैं । यहाँ अनुवाद का इतिहास और संस्कृतियों की लेन-देन का सिंहद्वार खुला है ।

भाषा की दृष्टि से देखें तो केरल की जनता का यह भाग्य रहा है कि उनकी भाषा व्यापक है । साथ ही अन्य भाषा की भावाभिव्यक्तियों को आत्मसात करने में वह कभी नहीं हिचकती । ऐसा होते हुए भी वह निजी भाषाई गरिमा रखती है । स्वतन्त्र व्याकरण की दृष्टि से मलयालम स्पष्ट नींव से युक्त सुदृढ भाषा है । संस्कृत के अपेक्षाकृत प्रभाव होते हुए भी मलयालम अपनी निजता नहीं खोती । इसकी और एक विशेषता है कि पूरे केरल में इसका एक ही रूप 'मलयालम' मिलता है । प्रान्तीय प्रभाव की अपेक्षा इसकी विशेष बोली चर्चित नहीं है ।

हिन्दी - मलयालम का आपसी संबन्ध

राष्ट्रभाषा का स्वरूप अपने आप में विशिष्ट है । आर्यभाषा के इतिहास में इसकी विकासयात्रा मिलती है । हिन्दी संस्कृत की दुहिता होने पर भी अपनी निजी विशेषताएँ रखती है । समस्त भारतीय भाषाओं में हिन्दी की यह विशेषता रही है कि वह भारत की जनवाणी है, राज भाषा है, संपर्क-भाषा भी ।

स्वरूप और व्यावहारिकता की दृष्टि से हिन्दी की महत्ता है कि वह जिस तरह लिखी जाती है, उसी तरह बोली जाती है । अक्षरात्मक लिपि होने के कारण वर्तनी भी सुविधाजनक है । प्रयोगलालित्य ने हिन्दी को सुन्दर बनाया है ।

क्षेत्र की तुलना में मलयालम सीमित प्रदेश की भाषा है । हिन्दी का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है । मलयालम की साहित्यिक संपत्ति अनुपम है । द्रुतगति से विदेशी शब्दग्रहण करने की इसकी व्यावहारिक प्रवृत्ति विस्मयजन्य है ।

मलयालम का , पुरातनकाल से ही इंडो-आर्य परिवार की भाषाओं से सीधा संबन्ध रहा है । इसी कारण से वर्षों पहले ही अनेक विदेशी-देशी भाषाई विशेषताओं से मलयाली परिचित थे । कहा जाता है कि मलयालम का, संस्कृत से पैतृक सा तथा आदिकालीन द्रविडभाषा से मातृक सा संबन्ध है । व्युत्पत्ति की दृष्टि से इसकी जड़ें द्रविड परिवार में अडिग है तो विकास की दृष्टि से संस्कृत की उदारता ने इसको वैभवपूर्ण बनाया है ।

केरल में हिन्दी प्रचार का इतिहास काफी पुराना है । वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रभाषा प्रचार-प्रसार के वर्षों पहले हिन्दी का व्यवहार केरल में शुरू हुआ था । इसके अनेक कारण थे

धार्मिक और सांस्कृतिक अनुष्ठानार्थ उत्तर तथा दक्षिण के बीच आपसी तीर्थयात्रा पुरातन काल से होने लगी थी । केरल के यात्री उत्तर में केदारनाथ, गंगोत्री, काशी, अयोध्या, प्रयाग आदि पुण्यस्थानों में जाते थे तो उत्तर के लोग कन्याकुमारी, कालटी, गुरुवायूर जैसे पुण्य तथा धार्मिक स्थानों के दर्शन केलिए आते थे । उनकी इन यात्राओं में संपर्कभाषा की भूमिका हिन्दी ही निभाती थी ।

मलबार (केरल का उत्तर भाग) में सुलतानी सलतनत - हैदर अली तथा टीपुसुल्तान - के समय अन्य मुसलमानी सत्ताओं के साथ आपसी संपर्क केलिए हिन्दी या हिन्दवी का ही व्यवहार होता था । इसने भी हिन्दी के उपयोग के रास्ते को खुला दिया ।

कला और साहित्य का संचार भी भक्ति प्रवाह के साथ साथ होने लगा था । तिरुवितांकूर के राजा 'स्वातितिरुनाळ' विभिन्न भाषाओं के ज्ञाता थे । हिन्दी में उनके करीब 40 गीत मिले हैं[1]। इनका समय सन् 1813 ई को-लेकर है । इसी प्रकार मलयालम के युगद्रष्टा एवं लोकप्रिय कवि 'कुंजन नंबियार' ने भी अपने 'स्यमंदकं तुल्लल ' में कुछ ऐसे हिन्दी शब्दों का (तरकारी, पत्ता जैसे) प्रयोग किया था , जो उससमय प्रचलित थे । उस समय इस तरह की भाषा को 'गोसाई भाषा' कहलाती थी [2]। क्यों कि केरल में उस समय की आरंभकालीन हिन्दी , गोसाईयों (तीर्थाटनार्थ आनेवाले साधु-संत) की भाषा थी ।

वाणिज्य व्यवहार भी हिन्दी की व्यावहारिक उपयोग को बढावा देने का कारण बन गया है । कोच्चिन तथा कोषिक्कोड के बंदरगाहों में हिन्दी बोलनेवाले व्यापारी पहले ही काम करते थे । यद्यपि उनकी भाषा खिचडी रहती थी, मूलतः उसकी प्रगामी प्रवृत्ति हिन्दुस्तानी भाषा के निकट की थी ।

अतः हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार का सूत्रपात केरल में दशाब्दियों पहले हुआ था । यद्यपि आरंभकालीन प्रयाण उतना तेज़ नहीं था, तो भी परवर्ती काल में, उसकी व्यावहारिक उपयोग की अपेक्षा ने उसको तीव्रगामी बना दिया । स्वतन्त्रता-प्राप्ति के दिनों में यह अपेक्षा राष्ट्रीय महत्व को बन गई । अहिन्दीतर भाषा-भाषी भी हिन्दी हिन्दी को राष्ट्रीय अस्मिता की वाहिका घोषित कर अडिग आस्था से हिन्दी प्रचार करने लगें ।

औपचारिक रूप में, दक्षिण में हिन्दी प्रचार का आरंभ सन् 1918 ई. में हुआ । उसके बाद अब तक हिन्दी प्रचार और प्रसार केलिए अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए । भाषाप्रसार की इस वृत्ति ने भाषा-संपर्क और भाषा-प्रभाव को बढा दिया । मलयालम में भी, शैशवावस्था का हिन्दी प्रभाव और तेज़ होकर

- -

1 डॉ भगीरथ मिश्र - भाषाविवेचन पृ. 120

2. भोलानाथ तिवारी - संपर्कभाषा हिन्दी पृ. 112.

प्रकट होने लगा । विभिन्न कुल की भाषाएँ होने पर भी हिन्दी व मलयालम की अतुलपूर्ण समता अन्वेषकों को आश्चर्य में डालनेवाली है । इसी समता ने अनुवाद कार्य को भी सरल बना दिया है ।

हिन्दी-मलयालम अनुवाद की परंपरा

18 वीं शताब्दी में ही हिन्दी तथा मलयालम भाषा के बीच शब्दों का लेन-देन होने लगा था । केरल में आए व्यापारियों, पण्डों तथा यात्रियों की दैनिक व्यवहार की खिचडी भाषा में एक ओर मलयालम शब्दों का मेलमिलाप हुआ तो विपरीत में हिन्दुस्तानी शब्दों का उपयोग केरल की तत्कालीन भाषा में हुआ । लेकिन अनुवाद की अटूट कड़ी 19 वीं सदी में ही आरंभ हुई । वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी विकास और प्रचारण-प्रचलन के उद्देश्य से किए जाने वाले अनुवादों की दृष्टि से कोई भी आधुनिक भाषा अछूती नहीं है । एक ओर अनुवाद वैज्ञानिक ज्ञानप्रसारण है तो दूसरी ओर उसी के माध्यम से ही सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता है । मिट्टी की गंध आनेवाली कृतियों का अनुवाद आपसी संपर्क का वातायन है । कहीं-कहीं यह सूत्र ढीला पड जाता है, तो भी भारतीय भाषाओं में कोई भी ऐसा नहीं, जिसमें अनुवादकार्य नहीं हुआ । अतः 'भारतीयता' के विकास में अनुवाद की विदूरलक्षी देन रही है ।

धर्मप्रचार की दृष्टि से विभिन्न भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद बहुत पहले निकले थे । संस्कृत के आध्यात्मिक ग्रन्थों - महाभारत, रामायण आदि - का अनुवाद भी विभिन्न रूपों में निकले हैं । उसके बाद कालिदास की विशिष्ट कृतियों का आंशिक या भावानुवाद निकले । 19 वीं सदी के आरंभकाल में अनुवाद की गति तेज़ हुई । उस समय की सभी लोकप्रिय और श्रेष्ठ रचनाओं का यथाशीघ्र अनुवाद निकालने की बोलबाला थी । अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में बंगला की कृतियों का ढेरसारे अनुवाद हिन्दी तथा मलयालम में निकले ।

स्वतन्त्रता के बाद अनुवाद राष्ट्रीय आवश्यकता बन गई है । सर्वप्रमुख बात यह है कि स्वतन्त्रता के पहले जहाँ अंग्रेज़ी और भारतीय भाषा के अनुवाद पर निर्भर होना पडा था, उसके स्थान पर अब हिन्दी ने स्थान ले लिया है । वहीं से लेकर हिन्दी, अंग्रेज़ी और प्रान्तीय भाषा की धुरी भी है । यद्यपि अंग्रेज़ी की पराधीनता अब भी एक बडे हद तक हम पर है तथापि कर्तव्य होने के वास्ते हम उसे मानते हैं ।

प्रत्येक भाषा की अपनी विशेषताएँ होती हैं । कभी कभी स्रोतभाषा का स्वरूप जटिल होता है, जिसे लक्ष्यभाषा में उभारना काफी कठिन है । अन्य भारतीय भाषाओं के आपसी अनुवाद की कठिनाई की तुलना में हिन्दी-मलयालम अनुवाद सरल अवश्य है । ऐसा होने पर भी 'अनुवाद' होने के नाते कहीं-कहीं दिक्कत होती है । स्वरूप और संरचना के स्तर पर दोनों भाषाओं में काफी समानताएँ है, असमानताएँ भी । अतः ये दोनों, वाक्यगठन की रीति और प्रस्तुति

की सरलता में शंका व सादृश्य दिखानेवाली आधुनिक भाषाएं हैं ।

अनुवाद की विधि के दौरान जो भाषिक समन्वय होता है, उसके विभिन्न स्तर होते हैं । जैसे ध्वनि, वर्ण, शब्द, अर्थ, वाक्यसंरचना, मुहावरा, रूपरचना आदि ।[1] इन सब अंगों का समन्वयन भाषा के विकास में सहायक है । ऐतिहासिक, अनुसंधानपरक अथवा तुलनात्मक महत्व के सभी मानक ग्रन्थों का अनुवाद विविध उद्देश्य को लेकर है । अखिल भारतीयता के परिवेश में इन अनुवादों की महत्ता एकता के माध्यम को लेकर है । आंचलिक सामीप्य की घनिष्ठ विशिष्टताएं प्रान्तीय पाटों को तोडकर विभिन्न इलाकों में पहुँच जाती है समग्रता तथा भावात्मक एकता लाने में इसका सुदृढ स्थान है । इसी प्रवृत्ति ने केरल की अभिव्यंजना में प्रस्तुत संस्कृति और सभ्यता की झाँकियों को पूरे भारतीय परिवेश का बना दिया है ।

अनुवाद की व्यावहारिक दृष्टि

आज का युग 'अनुवाद का युग' कहा जाता है । क्योंकि वह समय सापेक्ष प्रक्रिया है । उनकी कठिनाईयाँ निपटने केलिए कुछ सिद्धान्त बनाना और उसका पालन करना व्यावहारिक दृष्टि नहीं । पग-पग में बदलनेवाली भाषा और कोस-कोस मे बदलनेवाली रीति के कारण सिद्धान्त या नियम ढीला पड जाता है । भाषा का प्रवाह नियमों से रोका नहीं जा सकता । क्यों कि अन्तर्मुखी नियमों से बढकर, उपयोग बहिर्मुखी रहता है । व्यवहार केलिए ~~सही~~ ऐसी वृत्ति की अनिवार्यता है । यहाँ भाषा व्याकरणिक नियमों से आबद्ध भावाभिव्यक्ति मात्र नहीं, मस्तिष्क के सूक्ष्मतम विचारों का ढेर भी है । उसके उपयोगात्मक प्रस्तुतीकरण केलिए सूक्ष्म तथा प्रयोगशील क्षमता की आवश्यकता है । आन्तरिक भावों के स्वरूप निर्धारण, बहिर्जगत में जोडनेवाली संभावनाओं से ही भाषा की महिमा एवं व्यावहारिकता आंका जा सकती है ।

भाषा का जीवन-मरण प्रयोक्ताओं के बीच होता है । उपयोक्ताओं के हाथ मे उसका विकास-स्वरूप पलता है । सामान्य दृष्टि से मानक भाषा वही होती है जो सर्वमान्य की हो । वहाँ सिद्धान्त के साथ व्यवहार का भी मेलमिलाव हो ।

यह कहा जाता है कि एक सटीक अनुवाद केलिए सरलता, अर्थसंपुष्टता, लक्ष्यभाषा की अनुरूपता आदि गुण आवश्यक है[2]। वैज्ञानिक विषयों के अनुवाद में इन गुणों की काफी महत्ता है, वहाँ भाषा एक साधन मात्र है, आशय या अर्थ-प्रसारण ही उद्देश्य है । इसकी व्यावहारिक क्षमता तथा अर्थव्याप्ति भी समझना चाहिए, तभी अनुवाद सहज होगा ।

हिन्दी राजभाषा होने के कारण केन्द्र और उसके कार्यालयों के बीच में पत्राचार का माध्यम भी है । अतः हमारी संपर्कभाषा भी हिन्दी बन गई है ।

---

1. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवादः भाषाएं, समस्याएं पृ. 19.
2. विविध लेखक - विवर्तनम् पृ 187.

केरल की जनता भारत में अन्य क्षेत्रों की तुलना में पूर्णतः साक्षार है । बेकार लोग भारत तथा विदेशी राष्ट्रों में जाकर जीवनयापन करते हैं । वहाँ उनकी चिन्तनाओं को वाहिका के रूप में हिन्दी का विकासहोने लगा है । शिक्षा प्रणाली में भी त्रिभाषासूत्र अपनाने के बाद हिन्दी की अस्मिता ओझल हुई है ।

साधारणतः हिन्दी-मलयालम में व्यावहारिक अनुवाद होते हैं, होना चाहिए – (1) सृजनात्मक साहित्य लोकप्रिय श्रेष्ठ रचनाएँ । इसमें विभिन्न सृजनात्मक विधाओं के कथ्य और शिल्प का भावान्तरण-भाषान्तरण होता है । कहानी हो या उपन्यास, नाटक हो या निबन्ध, सब स्रोतभाषा की जनता के सांस और पसीने से भरे होते हैं । उदाहरण केलिए 'रविवर्मा' से अनूदित वैकम मुहम्मद बषीर के उपन्यास 'एन्टुप्पाप्पाक्कोरानेण्डार्न्नु' का 'दादा का हाथी' नामक अनुवाद केरलीय जीवन की स्पन्दित तस्वीर है । उन जीवन्त केरलीय मुखड़े को हिन्दी पाठक भी भूल नहीं सकते । यहाँ अनुवाद मानसिक माँग भी होती है ।

साहित्यिक तथा समीक्षात्मक ग्रन्थों का अनुवाद अविकसित और अपेक्षाकृत पीछे रहनेवाली किसी भी भाषा में अत्यन्त आवश्यक है । क्योंकि आलोचना के नए आयामों से सही मूल्यांकन संभव है । तुलनात्मक अध्ययन केलिए अन्य साहित्यिक कृतियों की आलोचनाओं के अनुवाद की बड़ी आवश्यकता है । इसी दृष्टि से विभिन्न भाषाओं के साहित्यिक इतिहास के अनुवाद निकलते हैं ।

(2) ज्ञानवर्धक ग्रन्थ – वैज्ञानिक और तकनीकी के साथ प्रौद्योगिकी से संबद्ध प्रत्येक राज्य या प्रान्त के अनेकों ज्ञानवर्धक विषय होते हैं, जिनका राष्ट्रीय या सार्वभौमिक प्रसारण वांछनीय है । प्रान्त के विशिष्ट अतीत से जुड़ी हुई अनेक सांस्कृतिक तथा सामाजिक कार्य होते हैं जो अन्य भाषा-भाषियों केलिए अज्ञान का विषय हो । ज्ञानान्तरण के उद्देश्य से ही चिकित्सा, ज्योतिष तथा कला संबन्धी अनेक पुस्तकों का अनुवाद हो रहा है ।

अनुवाद की कसौटी केलिए बिक्री की संभावना भी सोचने का विषय होता है । इसलिए प्रसिद्धिप्राप्त लेखक की कृति को अनुवाद केलिए चुना जाता है । जो भी हो, भाषा की दुर्बलता को दूर कर उसकी क्षमता बनाए रखने के साथ साथ मानसिक, सामाजिक जहाँ तक राष्ट्रीय उन्नयन केलिए भी अनुवाद का परोक्ष योगदान है ।

उपयोगिता की दृष्टि से भाषा की समृद्धि केलिए विभिन्न भाषाई अंगों का रूपायन होता है । हिन्दी और मलयालम में यह विकासशील प्रवृत्ति चालू है । भाषा के नितपरिवर्ती स्वरूप का मानकीकरण करके, उसके एक व्यवहृत, सर्वस्वीकृत, परिनिष्ठित रूप का एकीकरण आवश्यक है । व्यवहार में सतर्क होकर, त्रुटियों को न्यूनतम बनाकर उपयोक्ताओं के बीच उसकी एकरूपता

बनानी चाहिए । उसकेलिए विभिन्न पक्ष को लेकर विवेचन करना होगा ।

सामान्यतः एक भाषा से दूसरी भाषा तक की यात्रा में कुछ कठिनाईयाँ होती हैं । व्यावहारिक उपयोग के धरातल पर देखें तो पुन: सर्जना का यह काम महत्तम है । 'मानवता के विकास केलिए, आपसी सौहार्द और प्रेमपूर्ण व्यवहार केलिए दूसरे राष्ट्रों और प्रदेशों के निवासियों की अच्छाईयाँ सोखने केलिए, अनुवाद की महती आवश्यकता है[1]।' अनुवाद दो भाषाओं के बीच ऐसी सेतु का कार्य है, जिसमें केवल भाषान्तरण नहीं, बल्कि मानसिक तथा भावात्मक संप्रेषण भी होता है । चिन्तन का प्रकाशन मूल अभिव्यक्ति में होता है तो दूसरी बारी चिन्तन का प्रकाशन, अनूदित सामग्री में होता है । वह भाषापरिवहन से बढ़कर क्रियात्मक भावपरिवहन है । अभिव्यक्ति की विशिष्ट अर्थशक्ति अनूदित को मौलिक से भी विशिष्ट बनाने योग्य निकलेगी ।

अत: अनुवाद चिन्तन और अभिव्यक्ति का आदान है । सामाजिक महिमा विशेष, रूप बदलकर संप्रेषित होता है । वहाँ स्पन्दित हो उठता है - सभ्यता, संस्कृति, बुद्धि और आत्मा के संयोजन का अनन्तशीतल प्रवाह । उसकी अनन्त संभावनाओं को पहचानने केलिए स्रोत तथा लक्ष्यभाषा के सामान्य तात्विक अन्तर का ज्ञान सहायक होगा ।

<u>हिन्दी व मलयालम तुलनात्मक विशेषताएँ</u>

1 .व्युत्पत्ति की दृष्टि से हिन्दी आर्य परिवार की भाषा है जबकि मलयालम द्रविड़ परिवार की । इसी कारण से हिन्दी में मूलतः आर्य परिवार की विशेषताएँ मिलती हैं, मलयालम में द्रविड़कुल की । आर्यभाषा संस्कृत से 50 प्रतिशत से अधिक शब्द लेने पर भी मलयालम ने भाषा के रूप में अपनी निजता नहीं खोयी ।

2 .हिन्दी व्यापक प्रदेश की भाषा होने के कारण उसकी विभिन्न बोलियाँ मिलती हैं । ये प्रान्तीय भाषाभेद बढाती हैं । मलयालम में देश्यभेद से उत्पन्न औचारणिक विशेषताओं के बावजूद कोई बोली नहीं । हिन्दी की बोलियों की व्यापकता की तुलना में मलयालम में वैविध्य नगण्य है ।

3 .दोनों भाषाओं के स्वरों की तुलना में मलयालम दीर्घस्वर 'ऍ' और 'ऑ' हिन्दी में नहीं है ।

4 . मलयालम के व्यंजनों में 'ष़', 'ऱ', 'ळ' आदि ध्वनियाँ भी हिन्दी में नहीं हैं । आधुनिक मलयालम-हिन्दी अनुवाद में इन अक्षरों की माँग बढ़ गई है । लिपिचिह्न नहीं होने के कारण नीचे नुक्ता लगाकर प्रयुक्त करने की रीति अब प्रचलित हो गई है ।

5 .संयुक्त व्यंजनों में मलयालम में सर्वप्रचलित 'ट्ऱ' हिन्दी में नहीं है ।

---

1 डॉ.आलोक कुमार रस्तोगी - व्यावहारिक राजभाषा पृ.106.

6 हिन्दी की व्यावहारिक विशेषता में यह कही गई है कि जिस तरह वह बोली जाती है, उस तरह लिखी भी जाती है । लेकिन हिन्दी की इस विशेषता को मलयालम के संदर्भ में ले लें तो उसकी सीमा दिखाई पड़ती है । मलयालम में शब्दान्त्यव्यंजनों के स्वररहित रूप का ही उच्चारण होता है । उच्चारण या तो चिल्लान्त (जैसे - कण्णन्)[1] होता है, नहीं तो संवृतान्त (जैसे - पूर्वं, कर्तं)[2] हिन्दी में स्वरसहित रूप लिखकर स्वररहित उच्चारण किया जाता है । कलम, राम जैसे शब्दों का उच्चारण कलम्, राम् जैसा है ।

7 मलयालम में भाववाचक संज्ञा या विशेषण के बदले क्रिया के संबन्ध-वाची कृदन्तीय पदों का व्यवहार भी है, जो उपयोग की दृष्टि से सरल है । हिन्दी में इसकी रूपरचना अलग और अपेक्षाकृत लंबी है । जैसे -

पाटियवन - जिसने गाया है, वह ।

चाटियवन - जो कूदा है, वह ।

8 · प्रकृति और प्रत्यय दोनों अलग से पहचानने की विधि दोनों भाषाओं में है, यद्यपि मलयालम में 'एन्टे, एन्नुटे' जैसे रूपवैविध्य तथा हिन्दी में 'मुझे, हमें' जैसे संयोगात्मक रूप है ।

9 · मलयालम में वचन प्रत्यय अलग से पहचाना जा सकता है । वचन नियमों की असमानता के कारण हिन्दी में इसकी प्रस्तुति भी शंकामय है । जैसे -

कन्नुकळ - आँखें

कैकळ - हाथ

कालुकळ - पैर

10 लिंगवचनानुसार क्रिया में आनेवाले परिवर्तन मलयालम में नहीं है । क्रिया की एकरूपता भाषा में सरलता लाती है । जैसे -

अवन् वरून्नु - वह आता है ।

अवळ वरून्नु - वह आती है ।

अवर् वरून्नु - वे आते/आती हैं ।

11 नपुंसक लिंग नहीं होने के कारण हिन्दी में उस संबन्धी व्यवस्था भी नहीं । हिन्दी में केवल दो ही लिंग है । उनकी रचना में भी कठिनाई होती है । हिन्दी लिंग नियम बहुत ढीले हैं । मलयालम के सभी अप्राणिवाचक शब्द नपुंसक लिंग के हैं ।

12 · अलिंग बहुवचन मलयालम की एक विशेषता है ।[3] जैसे -

वृद्ध (स्त्री), वृद्धन् (पु ·), वृद्धर् (अलिंग बहुवचन)

13 · नपुंसक लिंग केलिए मलयालम में साधारणतः बहुवचन प्रत्यय नहीं लगाया जाता । कहीं-कहीं जो प्रयोग मिलता है, वह निन्दा का सूचक है ।[4] जैसे -

- -

1 · वासुदेवभट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ · 108 ·

2 देशमंगलम रामकृष्णन - भाषाशास्त्रदर्पणम् पृ · 130 ·

3 · ए · एन · मूस्सत् - द्राविड़भाषाशास्त्रम् पृ · 17

4 · सी · वी · वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम् पृ · 72

अवनुमार , अवळुमार (ये मानक भाषा के अंग नहीं हैं)

14. हिन्दी में लिंग की तरह वचन की स्थिति भी अन्विति के स्तर पर है । यथा कर्ता और क्रिया के अन्वय में, कर्म और क्रिया के अन्वय में तथा विशेषण, विशेष्य के अन्वय में ।[1] हिन्दी में लिंग रचना रूप के अनुसार है, लेकिन मलयालम में अर्थ के अनुसार । मलयालम में कर्ता प्राय: लिंग का नियामक है ।

15. मलयालम में, संज्ञा की तरह सर्वनाम के साथ भी विशेषण जोड सकता है । हिन्दी में इसकी अभिव्यक्ति केलिए व्याक्षेपक सर्वनाम तथा अंगवाक्य की सहायता होती है ।[2]

16. व्याक्षेपक सर्वनाम का यथा संरचनात्मक प्रयोग मलयालम में नहीं है ।[3]

17 उत्तम पुरुष सर्वनाम का श्रोतारहित रूप हिन्दी में नहीं है ।[4]

18. बिना प्रश्नवाचक सर्वनाम से क्रियाओं के साथ निपात जोडकर प्रश्न पूछने की रीति मलयालम में है ।[5] इसका हिन्दी अनुवाद संभव होते हुए भी उसमें वाक्यक्रम बदल जाता है । जैसे -

अवनु पोयो ? - क्या वह गया ?

19. निषेध की सूचना केलिए मलयालम में एकाधिक रूप मिलते हैं । जैसे - 'अल्ल, इल्ल' ।

20. हिन्दी भाषा की वाक्यसंरचना के प्रमुख अंग है - संबन्धवाची सर्वनाम । मलयालम में संबन्धवाची सर्वनाम नहीं है, कृदन्तीय संज्ञापद से सरल वाक्यरचना होती है ।[6]

21 क्रिया के साथ प्रत्यय जोडकर विधि तथा निषेध रूप बनाने की रीति मलयालम की आम विशेषता है । निषेध वाक्यरचना में काफी वैविध्य मलयालम में मिलते हैं, उनके हिन्दी अनुवाद में दिक्कत पैदा होती है । जैसे - वन्निल्ल, वरन्निल्ल, वरेण्डा, वरल्ले, वराते, वरात्त, वरेण्डात्त, वरानुवय्यात्त, वरायूवान आदि का अनुवाद हिन्दी में श्रमसाध्य भी कहा नहीं जा सकता ।[7]

22. हिन्दी में निषेधात्मक वाक्यों में क्रियारचना होती है । मलयालम में क्रियारचना नहीं होने के कारण वाक्य सरल एवं ह्रस्व होता है ।[8]

---

1. इबोहलसिंह काजम - हिन्दी-मणिपुरी की क्रिया संरचना पृ. 32.
2 सी.वी.वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ. 29.
3. के. गोदवर्मा - केरलभाषा वैज्ञानीयम् भाग 1 पृ 56
4. सी. वी. वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ. 169.
5. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवाद : भाषाएँ, समस्याएँ पृ. 83.
6. जी. ए. ग्रियर्सन - भारत का भाषा सर्वेक्षण पृ. 166
7. सी. वी. वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ. 21
8. - वही - पृ 169.

23 विशेषण-विशेष्य की अन्विति में दोनों भाषाओं के निश्चित नियम नहीं है। फिर भी मलयालम में प्रयुक्त विशेषणार्थ शब्दों का प्रायः लिंगभेद नहीं होता।[1] लिंगभेद की सूचना आवश्यकतानुसार देने ~~प्रयुक्त करने~~ की रीति भी प्रचलित है।

24 मलयालम में मिलनेवाले विशेषण शब्द 'पेरेच्च' (जो नाम के साथ लगाया जाता है) है। यदि स्वतन्त्र प्रयोग मिलता है तो भी उनकी रूपरचना पेरेच्च की जैसी है।[2]

25 दोनों भाषाओं की कारकीयरचना अलग न होते हुए भी भिन्नताएँ हैं। हिन्दी में कर्ता को मुख्य बनाकर कारकीय रूपरचना होती है। मलयालम में कर्म, करण, अधिकरण, अपादान जैसे विभिन्न प्रकार की रूपरचना है।[3]

26 कारक और विभक्ति के योग की संकल्पना में हिन्दी तथा मलयालम अपनी अपनी परंपराएँ रखती हैं। इन्हें भाषागत मुहावरे कहा जा सकता है[4]।

27 कर्मणि तथा भावे प्रयोग मलयालम में वर्ज्य और कृत्रिम है। हिन्दी-मलयालम अनुवाद में सादृश्य केलिए 'पेट्टुक' शब्द के अनुप्रयोग से आजकल वाक्यरचना होती है।[5] वाच्य की दृष्टि से कर्तृवाच्य की प्रमुख प्रवृत्ति मलयालम में सर्वाधिक मिलती है।

28. समुच्चयबोधक शब्दों के स्थान पर मलयालम में संज्ञा के साथ प्रत्यय लगाने की रीति है[6]। जैसे -

-राम, लक्ष्मण और सीता वन गये (हि.)
-रामनुं, लक्ष्मणनुं, सीतयुं वनत्तिल पोयि।(मल)

29. मलयालम में एक ही वाक्य के पहले तथा दूसरे क्रियारूप की रचना एक जैसी है।[7] हिन्दी में नहीं -

-ञान अविटे पोयि अवने कण्टु। (मल.)
-मैं ने वहाँ जाकर उसे देखा। (हि.)

कभी कभी वाक्य रचना में अंतर आती है -
-रामन गोवय्क्कु पोयिट्टु रण्टु मासमायी (मल.)
-राम को गोवा गये दो महीने हुए (हि.)
अतः मलयालम में पहला रूप 'अपूर्णकालिक कृदन्त' का है[8]।

---

1. वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ. 169.
2. ए. एन. मूसत् - द्राविडभाषाव्याकरणम् पृ. 15.
3. वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ. 23
4. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवादः भाषाएँ, समस्याएँ पृ. 77
5. के. गोदवर्मा -केरलभाषाविज्ञानीयम् भाग 1 पृ. 57
6. वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम् पृ. 23
7 -वही- पृ 23
8. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवादः भाषाएँ, समस्याएँ पृ. 82.

30 •विधेय (क्रिया शब्द) के बिना वाक्य बनाने की रीति मलयालम में काफी मिलती है । यह भाषाई शैली है, हिन्दी में नहीं[1]। हिन्दी की वाक्यरचना संस्कृत का अनुकरण है ।

31 •अनुप्रयोगों की रचना दोनों भाषाओं में मिलती है । इनमें समानताएं भी हैं । जैसे - वन्नुपोयि - आ गया, चेय्तुपोयि - कर डाला ।

32 •संयुक्त क्रियाओं की गठन में अंतर है । 'सक, चुक, पड, रह, लग जैसी अनुक्रियाओं से युक्त वाक्यों की रचना संदर्भाश्रित है ।

33 •कालरचना में दोनों भाषाएं काफी सरल हैं । कर्ता, क्रिया के अन्वय में रहने के कारण, हिन्दी में कर्ताकारक का प्रयोग वाक्यरचना पर प्रभाव डालता है । मलयालम में कर्ताकारक की विभक्ति नहीं है ।

34 •अन्य शैलीगत विशेषताएं तथा 'कि' जैसे समुच्चय शब्दों का प्रयोग वाक्य स्तर पर अंग-अंगी वाक्यों का स्थानान्तरण का कारण बन जाते हैं ।

35 •दोनों भाषाओं के संधिनियमों में भिन्नता है । हिन्दी केलिए अपने संधि नियम हैं । तत्सम शब्दों में जो संधिनियम हैं, वह भाषा के शब्दों केलिए लागू नहीं है । मलयालम की भी यही स्थिति है[2]।

निष्कर्ष

शब्दों के मेलमिलाव तथा आपसी अनुवाद के साथ समानताओं की मात्रा बढ रही है । दोनों की समता की संभावनाएं अनुवाद के स्तर पर सहायक होने पर भी संदर्भ का समाश्रय आशय पर प्रभाव डालता है । इसलिए तुलनात्मक दृष्टि से - जो अध्ययन यहां हुआ है - वह संभावनाओं तथा सीमाओं की खोज मात्र है । सिद्धान्त को व्यावहारिकता प्रदान करनेवाले क्षमतावान अनुवादक इन्हीं से लाभ उठा सकते हैं । भाषा-संप्रेषण की सुगमता यह है कि प्रकृति और स्वरूप की दृष्टि से भिन्नता रखनेवाली भाषाओं में भी क्षिप्रसाध्य तथा सामान्य विशेषताएं होती हैं । यहां अनुवादक की पकड होनी चाहिए । सहज व सामान्य भाषा रूपों में भिन्नता नहीं है, तो भी व्याकरणिक अंतर उन्हें भाषाई भिन्नता की सीमारेखा में बांध लेता है । अतः भाषा में व्याकरणिक अधिगमन कम दीखता है । भाषा के नियत रूपों का विचारात्मक और प्रयोगोन्मुख मार्ग प्रस्तुत करने में व्याकरण का ही स्थान है । भाषा का यह रूप मानक या परिनिष्ठित बताया जाता है । प्रयोजनमूलक भाषा संकल्प में सहायक रूपों के साथ अन्य भाषाई पक्ष भी व्यावहारिक अनुवाद के संदर्भ में चर्चित होना चाहिए । अतः उन सबके भेदात्मक पक्षों का विश्लेषण समीचीन है ।

****** ******

- -

1 •वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ •27

2 •एन •पी •कुट्टन पिल्लै - तुलनात्मक व्याकरणम् पृ •18 •

दूसरा अध्याय

हिन्दी तथा मलयालम व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन

भाषा वेगमयी है । चाहे हम उसे कुछ नियमों में बांधने की कोशिश करें, वह मनाती चली जाती । उसकी तीव्रता और प्रगामी प्रवृत्ति दिन-ब-दिन अधिकाधिक होती रहती है । पूर्णता या परिनिष्ठित रूप की खोज ने ही भाषा को व्याकरण के नियमों में बांध लेने की राह दिखा दी । साथ ही यह प्रमुख है कि किसी भी भाषा का मानदण्ड आवश्यक है । इसी दृष्टि से व्याकरण भाषा का मापदण्ड भी है, जो भाषा की गति को रोकते हुए भी उसको ढाँचा सुरक्षित रखता है । इसका अर्थ यह नहीं है व्याकरण भाषा की सीमा बतानेवाला नियन्त्रण नियम है, व्याकरण का ध्येय व्यापक और व्यावहारिक अवश्य है । उसका उदात्त उद्देश्य भाषा का व्यवस्थित उद्धारण है । इसके बावजूद व्याकरण आवश्यगत और अनुभवगत संभावनाओं को खोजकर भाषा की सीमाओं को व्यापक बनाता भी है । तभी तो किसी भाषा का व्याकरण उसका पोषक बन जाएगा । इसलिए 'पतंजली' व्याकरण की महत्ता स्वीकार करते हैं कि वह भाषा का रक्षक, अनुचर और अंगरक्षक है ।[1]

भाषा, अनुवाद और व्याकरण

सर्वविदित बात होगी कि भाषाओं के पारस्परिक सहयोग की प्रक्रिया 'अनुवाद' में व्याकरण की जकड़ को यथासाध्य ढील देना चाहिए । क्यों कि भाषा का मुख्य प्रयोजन व्याकरण नहीं, संप्रेषणीयता है[2] । भाषा गतिशील और जीवनाभिव्यक्ति होने के कारण किसी भी मायने में अपवाद रहेंगे । मानक भाषा के स्वरूप निर्धारण के पीछे यही परिवर्तनीयता है । अपवादों के बावजूद भी, शुद्ध एवं त्रुटिहीन भाषा प्रयोग , जो सर्वाधिक लोगों के काम में आते हैं, उसके ही अंगों की तुलना वांछनीय है । व्याकरणिक दृष्टि से भाषा व्यवहार पर लगाम मत लगे । उस सार्वजनिक संस्कार या आचार को, उसके प्रान्तीय, सामाजिक एवं सामुदायिक प्रभाव के साथ नमूने के रूप में आत्मसात करना होगा जिनको अनजाने ही लोग प्रयुक्त करते हैं[3] ।

एकाधिक मतानुसार अनुवाद के संदर्भ में भाषा को नियमों में आबद्ध देखना ठीक नहीं है । व्याकरण की दृष्टि से भी स्रोतभाषा का प्रभाव लक्ष्यभाषा पर अनजाने में पड़ता है । एक भाषा से आदत्त कितने ही रूप हो, उन्हें उसी प्रकार या बदलाव के साथ दूसरी भाषा में प्रयुक्त करती है, इसकी मात्रा बढ़ती जा रही है । इसका मतलब यह नहीं कि किसी भाषा के सर्वमयी व्याकरणिक अवयवों को यथेष्ट आदान करना है बल्कि व्याकरण की सीमाओं को भूलकर भाषा को व्यावहारिक बनाना है । व्याकरण

---

1 'रक्षोहागमलघ्वसंदेहाः प्रयोजनम्' - राष्ट्रभाषा पतंजली निगमानन्द परमहंस हिन्दी का मौलिक व्याकरण पृ.36.

2 भोलानाथ तिवारी - संपर्कभाषा हिन्दी पृ.282

3 ई.वी.एन.नंपूतिरि - **वाक्यघटना** पृ.5

भाषा के अस्तित्व को बनाए रखनेवाला होता है । विपक्ष में कहें तो यदि हम नियन्त्रण भी न लगे तो यह सर्वानुगामी भाषा अव्यवस्था तथा अस्पष्टता को शिकार होगी ।

वस्तुत: प्रत्येक भाषा के व्याकरण के नियम पूर्ण व तर्करहित रहें तो अनुवादक भी असमंजस में पड़ेगा । क्यों कि ढीले नियमों से अनुवादक सदैव लाभ उठा सकता है । एक हद तक नियमों की कट्टरता अनुवाद को बरबाद भी करती है । इसलिए व्याकरण और उसके नियम भाषा के रक्षानुसार कार्य करनेवाले होते हैं, न उसके गले तोड कर उसको गति को रोकनेवाले । निराधार और अव्यावहारिक व्याकरणिक भ्रम को छोडकर उसकी सीमाओं में भी लाभ उठानेवाले अनुवादक भाषा के पोषक अवश्य है । व्यावहारिक कसौटी , व्याकरणिक नियमों को ढील, प्रशस्त विद्वानों के प्रयोग, प्रचलन की प्रचुरता तथा भाषाशास्त्र की नवीन प्रवृत्ति के आधार पर निर्धारित किया जाता है । व्याकरणिक नियमों के अनुसार भी होना आवश्यक है, लेकिन अनुपेक्षणीय नहीं [1]। कारण है, भाषा के यथावश्यक विकास सिद्धान्तों के अनुसार आंकना निराधार है ।

अनुवाद में चर्चित व्याकरणिक अवयव

मलयालम-हिन्दी अनुवाद में भी दोनों भाषाओं के आपसी संपर्क और सहयोग लक्षित होते हैं । अनुवादकीय दृष्टि से ही इन दोनों भाषाओं में अन्तर्लीन तत्वों को खोजकर, आपस में उसकी आकस्मिक या सहज समानताओं को ढूंढना अवश्यंभावी है । किसी भी भाषा के व्याकरण का विश्लेषण करने केलिए उसके विविध अंगों का विभाजन और तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है । सीमाओं की घोषणा के बदले संभावनाओं से समझौता करते हुए इन दोनों के विविध अंगों की तुलना प्रस्तुत है :-

ध्वनियां - उच्चारण एवं वर्तनी

ध्वनिप्रसारण मन और मस्तिष्क के नियन्त्रण में अर्थवान होता है । हिन्दी और मलयालम दोनों अक्षरात्मक भाषाएं हैं । उनका प्रयोग उच्चारण सदृश होता है । प्रत्येक भाषा की यह विशेषता होती है कि वह व्यक्ति के उच्चारण तान के अनुकूल होती है । वक्ता का तान दूसरे भाषा भाषी केलिए अनुकरण से भी अप्राप्य रहता है । अनुकरण भी कृत्रिम लगेगा ।

शुद्ध उच्चारण किसी भी भाषा केलिए आवश्यक है । अन्य भाषा भाषी के सामने अशुद्ध उच्चारण गलतियों को बढावा देगी । सरलीकरण की प्रवृत्ति ने सभी भाषाओं को बदल डाला है । उच्चारण में ही नहीं, वर्णविकार, ध्वनिविकार, शब्दविकार कुलमिलाकर भाषाविकार तथा भाषाविकास में लक्षित यह प्रवृत्ति जीवित भाषा की लक्षण है । स्पष्ट उच्चारण की महत्ता भाषा की एकरूपता बनाए रखने में है । मानक हिन्दी के उच्चारण को श्रमसाध्य कहकर भी, उस पर ज़ोर देने के पीछे यही आग्रह है । लेकिन यह समयसाध्य कार्य है ।

---

1 वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ.72.

किसी भी भाषा में ध्वनिसंख्या, वर्णसंख्या से अधिक होती है । ध्वनियाँ अर्थसंपुष्ट होती हैं । इनके उच्चारण और वर्तनी में स्वाभाविक अंतर मिलता है । लेखन भाषा के मौलिक तत्वों पर आधारित होता है, जहाँ भाषण (उच्चारण) आम भाषा भाषी सामान्य रीतियों से मिलते-जुलते रहते हैं [1] । अनुवाद में इन दोनों की आवश्यकता है । लेकिन यहाँ उन ध्वन्यात्मक परिवर्तन को प्रस्तुत करना असाध्य है । क्यों कि भाषा सापेक्ष ध्वनिविकार का संदर्भ दूसरा है । इसलिए लिखित या उपयोगी भाषा के आधार पर वर्णों की तुलना प्रस्तुत है ।

हिन्दी में कुल 49 वर्ण हैं । जैसे 13 स्वर और शेष व्यंजन । व्यंजनों में 25 वर्गाक्षर, 4 मध्यम(य, र, ल, व) , 4 ऊष्म (श, ष, स, ह) के अलावा 3 अन्य व्यंजन भी हैं - ळ, ऱ, ष़ ।(प्राचीन द्राविड़ भाषा के वर्णों में ഩ, ഺ, ൿ वर्ण मलयालम में प्रचलित थे, जो आधुनिक युग में नहीं है)[2] । इसलिए इनकी गणना यहाँ नहीं । हिन्दी के अनुनासिक ँ और चन्द्रबिंदु ँ,दोनों मलयालम में लिपिरूप में प्रयुक्त नहीं होता [3]

मलयालम 'ए' और 'ओ' स्वरों का दीर्घरूप हिन्दी में नहीं है । दीर्घ उच्चारण तो किया जाता है, लेकिन लिपिचिह्न नहीं है । आधुनिक काल में इन ध्वनियों की माँग बढ़ गयी है । इसीलिए उन्हें 'ऍ' और 'ऑ' में व्यक्त करने लगे [4]। जैसे डॉक्टर, कॉलेज आदि । क्यों कि इनके बिना आधुनिक भाषा व्यवहार अत्यन्त सीमित हो जाएगा । बाल-बॉल, काफ़ी-कॉफ़ी जैसे शब्दों का अंतर इनसे ही संभव है । अतः उच्चारण में नहीं, वर्तनी में भी इनकी ज़रूरत है ।

मलयालम में ह्रस्वोच्चरित कई ध्वनियाँ (शब्दांश) हिन्दी में दीर्घोच्चरित या लिखित रूप में व्यवहृत हैं । मलयालम शब्द 'तकषि ' का हिन्दी में 'तकषी' , 'कुरुप' का 'कुरूप' जैसे अनेक उदाहरण मिलेंगे ।

हिन्दी के संधिस्वरों के उच्चारण में अंतर आते हैं । 'ऐ' और औ' का उच्चारण 'अय' और 'अव' जैसा होता है । लेकिन मलयालम में कम व्यवहृत होने के कारण संस्कृत का उच्चारण ही यथासाध्य किया जाता है । अतः औच्चारणिक अंतर कम है । हिन्दी के ऐसा-अयसा ,और-अउर, औरत-अउरत आदि उदाहरण हैं ।

'ऋ' का प्रयोग दोनों भाषाओं में कम है । हिन्दी में क्षेत्रीय अंतर के कारण इसका 'रि' जैसा उच्चारण किया जाता है । इसके बदले कभी कभी मलयालम में 'ऋ का 'अर' होने की प्रवृत्ति है [5]। जैसे - प्रवर्ति , निवर्ति ।

- -

1 .उल्लाट्टिल गोविन्दनकुट्टि नायर - भाषयुं गवेषणवुं पृ .58 .
2 .पी .के .नारायणपिल्लै - व्याकरणप्रवेशिका पृ . 11
3 .एन .पी .कुट्टन पिल्लै - तुलनात्मक व्याकरण पृ . 18
4 .ए .एल .रविवर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ .133 .
5 .वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ .135

व्यावहारिक उपयोग की दृष्टि से मलयालम में व्यंजनों की संख्या ज्यादा होने के कारण, सुविधा होती है । कहा गया है कि मलयालम की सबसे बड़ी विशेषता उसकी वर्णसंपदा है । अन्यान्य भारतीय भाषाओं में कोई भी ऐसी नहीं, जो वर्णसंपदा की दृष्टि से मलयालम से मेल करे ।[1]

व्यंजनों के उच्चारण में सर्वप्रमुख विशेषता यह है कि मलयालम में उनका उच्चारण स्वरसहित है, हिन्दी में स्वररहित । मलयालम में स्वररहित उच्चारणार्थ 'चिल्लें' नामक कुछ व्यंजन स्वरूप मिलते हैं, जो मलयालम भाषा के अभिन्न अंग हैं । इन्हें शब्दों के अन्त में प्रयुक्त किया जाता है । जैसे - रामन्, कृष्णन् । मलयालम के 'चिल्लें' हैं - ल्, ळ्, त्, र्, ण् । हिन्दी में हलन्त लगाकर ही इनकी अभिव्यंजना कर सकते हैं।

यद्यपि हिन्दी वर्णमाला में सीमित ध्वनियाँ मिलती हैं तथापि अंग्रेजी, अरबी, उर्दू, और फारसी प्रभाव ने उसपर अधिकाधिक ध्वनियाँ अपनाने का दबाव डाला है । इसी वजह से आगत ध्वनियाँ हैं - क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ड़ आदि । ये तो एक सामान्य बहाव के रूप में प्रयुक्त होने लगे हैं । इससे युक्त अनेक फारसी-उर्दू-अरबी शब्द अब हिन्दी प्रदेशों में व्यवहृत हैं । जैसे - मेज़, अफ़सर , आफिस आदि । इन शब्दों का मलयालम में तद्भव रूप का ही प्रयोग है । अतः ध्वनियाँ भाषा के अनुकूल बदलती हुई प्रयुक्त होती हैं । जैसे - मेश (मेज़) , आप्पीसर (ऑफ़ीसर) ।

मलयालम की ध्वनियों में ळ , ष़ , ऱ तीनों आधुनिक अनुवाद के संदर्भ में , हिन्दी में स्वीकार करना पड़ा है, यद्यपि इनका स्थान मानक हिन्दी की वर्तनी में नहीं । मलयालम का एक संयुक्ताक्षर ट्ट्, जिसका उच्चारण 'ट्ट' और 'त्त' के बीच में है, हिन्दी में नहीं है । यह ध्वनि वर्त्स्य है । हिन्दी ड़, ढ़ जैसे नुक्ता लगाकर लिखनेवाली ध्वनियाँ मलयालम में उच्चरित या लिखित नहीं हैं । उसी प्रकार 'क़' का उच्चारण मलयालम में 'क' और 'ग' के बीच में रहने की प्रवृत्ति है, जो हिन्दी में नहीं है ।[2]

उसी प्रकार मलयालम द्राविड़ प्रभाव से युक्त भी है । यद्यपि लिखावट में 'उत्सव, वत्स' जैसा है तो भी द्राविडी उच्चारण उत्सव, वत्स जैसा किया जाता है । मूलदृष्टि से युक्त ऐसा प्रभाव अब भी मलयालम में वर्तमान है ।

ग, ज, ड, द, ब जैसे मृदु ध्वनियों का उच्चारण दोनों भाषाओं में 'एकार' सहित होता है । साहित्यिक या व्यवहृत भाषा में इनका मानक रूप हो है । संवृतान्तता मलयालम शब्दों की एक विशेषता है । कहीं-कहीं 'उ'कार विवृतान्त भी है । जैसे - 'वयसुँ' (संवृत) , 'वन्नु' (विवृत) । संवृत केलिए चन्द्रबिंदु का प्रयोग है । कुछ विद्वान् इसकेलिए अलग लिपि बनाने के पक्ष में भी है, क्यों कि इनका उपयोग सार्वत्रिक है ।[3]

- -

1. वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ. 12
2. एन. पी. कुट्टन पिल्लै - तुलनात्मक व्याकरण पृ. 18
3. पी. के. नारायणपिल्ले - व्याकरण प्रवेशिका पृ. 12.

संयुक्ताक्षरों के उच्चारण और वर्तनी दोनों में बहुत ध्यान की अपेक्षा है । उदाहरण केलिए 'र' और 'र्' दोनों से युक्त कुछ संयुक्त अक्षर देखिए - क्र (क्+र्) ग्र (ग्+र्)। इनका उच्चारण भिन्न है । अतः मृदु व्यंजनों ग, ज, ड, द, ब - से सम्मिलित संयुक्ताक्षरों के उच्चारण में 'र्' के बदले 'र' ध्वनि मिलती है । जहाँ य, श, ष, ह व्यंजनों के पहले 'र्' का उच्चारण भी मिलता है [1]। जैसे - र्द, र्ह ।

'ज्ञ' का 'ग्या' तथा 'श, ष, स' व्यंजनों के आपसी विनिमय हिन्दी में प्रादेशिक प्रभाव से युक्त होता है । शस्य-सस्य, विश-विष जैसे अनेकरूपी उच्चारण अनुवादक को गड़बड़ करनेवाला है ।

संयुक्ताक्षरों के उच्चारण में , मलयालम में अधिक बल पड़ने की प्रवृत्ति मिलती है । जैसे - ग्रहणम् (मल॰) - ग्रहण (हि॰) , विग्रहम् (मल॰) - विग्रह (हि॰)

हिन्दी में एक ही ध्वनि या वर्ण की द्विरूपता उच्चारण तथा वर्तनी में है । अ, ब्र, ल, ण, क्ष आदि ध्वनियों को एकीकृत करना चाहिए । उसी प्रकार दो ध्वनियों का एक जैसी लिपि प्रयुक्त करने की रीति भी भ्रम पैदा करती है । न (दन्त्य) और न (वर्त्स्य) को पहचानने में कठिनाई आती है । उसी प्रकार र, ऱ के प्रयोग में भी । 'न' का वर्त्स्य और दंत्य रूप पहचानने का नियम बनाए गए हैं[2] । शब्द के आरंभ में दंत्य ही आता है । संयुक्ताक्षरों के आगे न (वर्त्स्य) और पीछे न (दंत्य) साधारणतया प्रयुक्त किया जाता है ।

संयुक्त ध्वनियों की द्विरूपता वर्तनी में प्रायः मिलती है । जैसे - कंगाल - कङ्गाल पंजा - पञ्जा ।

'र' ध्वनि के उच्चारण एवं वर्तनी की बहुरूपता बहुचर्चित है । राष्ट्र, करार, क्रम, अर्घ्य, चरित्र आदि हिन्दी शब्दों की मामला क्रमं, त्रुटि, प्रासं, भ्रमं, श्रमं जैसे मलयालम शब्दों में भी है ।

संयुक्त व्यंजनों के उच्चारण में सरलीकरण की प्रवृत्ति तथा प्रयत्नलाघव देखने को मिलते हैं - ये भाषा में सार्वत्रिक भी हैं । 'वत्स' के 'बच्चा' होने का यही कारण है । यह, वह इत्यादि के उच्चारण में अन्तिम 'ह' का लोप सा होता है । ग्यारह-ग्यारा, बारह-बारा आदि भी इसी धारा के अन्य उदाहरण हैं । मलयालम वन्ही, ब्रह्मा, ब्राह्मण आदि शब्दों में भी यही प्रवृत्ति मिलती है ।

जनमानस की बोली और लेखन में काफी अंतर होता है । वैयक्तिक भेदों पर ध्यान देना संभव नहीं । परिवर्तन को समझना बुद्धिबोधित कार्य है । संस्कृति पहचानने पर कोई भी स्वस्थ भाषा से अपरिचित नहीं होता । साथ ही हिन्दी-मलयालम के उच्चारण की समानताएँ सरल भी हैं । संस्कृत दोनों का आदर्श रहने के कारण रास्ता

- -

1 • ए • आर • राजराजवर्मा - मध्यम व्याकरणम् पृ • 14 •

2 • ,, पृ • 13

और अधिक सीधा होता है । अतः ध्वनिसंबन्धी प्रादेशिक अंतर के बावजूद इन भाषाओं में अपेक्षाकृत शुद्ध एवं सरल उच्चारण होता है । सर्वस्वीकृत वर्तनी का उपयोग श्रमसाध्य है । लिखित एवं पठित भाषा का अंतर भाषा की स्वतन्त्रता का परिचायक है । भाषण की गति को रोक नहीं सकते । उच्चारण की नीति कम से कम अभिव्यक्ति और ज़्यादा से ज़्यादा अर्थ संप्रेषण की है । अनावश्यक ध्वनि बीच में भाषण की विशेषता है, जो भाषा को अव्यवस्थित बनाने पर भी अर्थवान, प्रभावसिद्ध और प्रासंगिक महत्व से युक्त बनाती है ।

वर्तनी कभी कभी उच्चारण के अनुसार नहीं होती । यद्यपि हिन्दी-मलयालम भाषाओं में अंतर बहुत कम होता तथापि उच्चारणिक अवयवों तथा देशीय प्रभावों से उत्पन्न परिणाम होता है । इसको सुलझाने का एकमात्र उपाय है - परंपरागत, सर्वस्वीकृत या बहुस्वीकृत वर्तनी सुनिश्चित कर लेखन में स्वीकार करना ।[1] साथ ही जहाँ तक हो सके, लेखन के अनुसार ही बोलना । अनुवाद में भाषा का सम्यक् परिचय इसका एकमात्र रास्ता है ।

अर्थ संप्रेषण की दृष्टि से उच्चारण और लेखन को नियन्त्रित रखना चाहिए । उच्चारण यदि ठीक है तो तान और संदर्भ के बल पर अर्थ का एहसास मिलता है । उच्चारण की महिमा पर व्याकरणिक गलती भी पीछे पड़ती है, अर्थ स्पष्टीकरण भी सफल मिलती है ।[2] अतः उच्चारण ठीक तथा क्षमतावान ध्वनियों से युक्त होना चाहिए ।

लिप्यंकन और लिप्यंतरण

नागरी लिपि की त्रुटियों को दूर करने केलिए उसका मानकीकरण हुआ है । मलयालम लिपि की भी यही प्रक्रिया हुई है । नियम बनाने पर भी सटीक व्यवहार कम है, लिपि सुधार के बाद भी असुविधा तथा अव्यावहारिकता, मुद्रणालयों तथा प्रयोक्ताओं की असावधानी आदि बनी रहती है । इसके विरुद्ध कटु नियम अपनाना होगा । मलयालम की लिखावट प्राचीन और आधुनिक लिपिक्रम का सम्मिलित रूप हो गई है । इसी तरह टंकण की असुविधा भी दोनों भाषाओं में रहती है । हिन्दी वर्तनी व लिपि की अनेकरूपता हटाना अनुवाद की ही नहीं, भाषा की भी आवश्यकता है ।

स्वस्थ उच्चारण एवं वर्तनी हर एक भाषा को साफसुथरी बनाते हैं । अनुवाद के संदर्भ में लिपि या वर्तनी का प्रश्न चर्चित इसलिए है कि लिप्यंकन और लिप्यंतरण काफी होता है या होना चाहिए । लिप्यंतरण में वर्तनी का प्रतिलेखन होता है, लिप्यंकन में उच्चारण के आधार पर लेखन । दोनों अनुवाद में व्यवहृत हैं । साधारणतः संस्थाओं तथा व्यक्तियों के नामों का अनुवाद लिप्यंतरण से ही संभव है, वांछनीय भी । आजकल भाषानुकूल बनाने केलिए लिप्यंकन भी अपना लिया है । उच्चारण से बढ़कर वर्तनी का प्रतिलेखन साधारणतः होता है क्योंकि उच्चारण पर विभिन्नस्तरीय प्रभाव व परिवर्तन दृश्यमान होता है ।

- -

1 • भोलानाथ तिवारी - अच्छी हिन्दी सुन्दर हिन्दी पृ • 73

2 • रामप्रकाश कुलश्रेष्ठ - हिन्दी उच्चारण शिक्षण का महत्व, गवेषणा पृ • 77

लिप्यंकन व लिप्यंतरण की रीति के कारण कई ध्वनियों का आयात-निर्यात होता है । मलयालम - हिन्दी के आपसी लेन-देन भी इस ओर हुआ करता है । अनेक विदेशी ध्वनियां, आज हिन्दी व मलयालम की बनजाने के पीछे यही कारण है । मलयालम की ळ, ऴ , ऱ आदि ध्वनियों के उपयोग, हिन्दी में जो होते हैं, वे इसके अच्छे उदाहरण हैं ।

शब्दसमूह

अर्थयुक्त अभिव्यक्ति की दृष्टि से भाषा का सबसे छोटा अवयव शब्द है । ध्वनि से अर्थप्रसारण संभव होते हुए भी शब्द से संप्रेषणीयता बनी रहती है । शब्दों की तुलना चाहे वह कोई भी भाषा का क्यों न हो, रसकर है । साधारणत: किसी भाषा में प्रयुक्त शब्दों की संख्या कालानुसार बढती है , कुछ नए आते हैं तो विरलत: लुप्त होते हैं ।

विभिन्न परिवेश में विकासशील होने के कारण हिन्दी-मलयालम भाषाओं की समानताएं सीमित होनी चाहिए । लेकिन इनकी अभूतपूर्व समानताएं विशेषत: शब्दावली को लेकर, भाषावैज्ञानिकों तथा वैयाकरणों केलिए आश्चर्य की बात रही है [1]।

पुरानी मलयालम में तमिल और मूलद्राविड़ भाषा के बहुत सारे शब्द प्रचलित थे । धीरे धीरे संस्कृत संपर्क तथा संसर्ग ने मलयालम के स्वरूप को बदल डाले लगा। नए वर्णों , लिपियों तथा शब्दों की भरमार से भाषापदों का प्रचार लुप्त-सा हो गया [2]। द्रविड़ भाषाओं में मात्र तमिल इससे बचती रही ।

भाषानुवाद में शब्दों का विभिन्न रूप

मलयालम तथा हिन्दी की वर्णमाला तथा अक्षरक्रम संस्कृत के अनुरूप है । इन भाषाओं की शब्दावली में सर्वाधिक तत्सम शब्द हैं । वस्तुत: तत्सम व तद्भव शब्दों की क्षमता से ही, ये दोनों साहित्यिक जगत में अपना पैर जम पाए थे । हिन्दी तथा मलयालम के तत्सम शब्दों की संख्या ज़्यादात्तर है, अंतर तो इतना है कि मलयालम में संस्कृत एवं प्राकृत से आये तत्सम शब्द हैं, जहां हिन्दी में संस्कृत का अधिक प्रभाव है [3]।

हिन्दी के तद्भव शब्दों का रूपायन बोलचाल की या जनभाषा से हुआ है, प्राकृत शब्दों का प्रभावइनमें है, अपभ्रंश का पुट भी । हिन्दी तद्भव शब्द उसकी अपनी प्रकृति तथा परिवेश के अनुरूप हैं जबकि मलयालम में उसे अर्जित माने जाते हैं[4]। हिन्दी के तद्भव शब्द बहुताधिक रूप में मलयालम में भी स्वीकार किए हैं - कभी रूप बदल कर, कभी अर्थ बदल कर ।

---

1 . वेलायुधन अर्जुनन - गवेषणमेघल पृ . 127 .
2 . वासुदेव भट्टातिरि भाषाशास्त्रम् पृ . 118
3 . ए . पी . कुट्टन पिल्ले - तुलनात्मक व्याकरण पृ . 21
4 -वही- पृ . 22 .

तत्सम या तद्भव शब्दों के अनुवाद में ध्यान देने की बात यह है कि ये दोनों भाषाओं में कभी एकार्थवाची होते हैं, तो कभी विभिन्नार्थवाची । संस्कृत का यथारूप और अर्थ स्वीकार करना ठीक नहीं होगा । जैसे -

* एकार्थवाची -- पित: पिता(हि ·), पितावुं(मल ·)
* विभिन्नार्थवाची– पशु - जानवर(हि ·), गाय(मल ·)

तत्सम या तद्भव शब्दों का प्रयोग मलयालम में ज्यादात्तर भाषानुरूप है । अनुस्वार से युक्त शब्द मलयालम में मिलते हैं । जैसे -

* विकास - विकसनम् , गणित - गणितम्

इस प्रकार भाषानुकूल बनाने की प्रवृत्ति हिन्दी से बढकर मलयालम की अधिक दीखती है पंक्ति - पन्ती , भिक्षा - पिच्च आदि ।

अनुवाद के संदर्भ में समस्या उठानेवाले शब्द प्रादेशिकता संबन्धी हैं, जिन्हें देशज कहते हैं । शुद्ध द्राविड़ या मलयालम के ऐसे शब्दों के समानार्थी रूप हिन्दी में मिलना कठिन है । एक ओर 'पेङङल ,आङला'(बहिन, भाई) जैसे शब्दों का प्रभाव कम हो जाता है, दूसरी ओर 'पुटवा, कच्च'(विवाह के समय वर द्वारा वधू को देनेवाली धोती, युद्ध के समय कमर में बाँधने की पट्टी) जैसे शब्दों केलिए पादटिप्पणी देनी पड़ती है ।

मलयालम के देशज शब्दों को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं - 1· द्रविड़ भाषा के शब्द जैसे - वटी, पणम् । 2· निजी शब्द - मुंडं, तालि, अङङाडि, पत्तायं ।

हिन्दी के देशज शब्द व्युत्पत्ति की दृष्टि से अनिश्चित शब्द हैं, वे भाषाई शब्द नहीं थें ।

विदेशी शब्दों का प्रचलन भी दोनों भाषाओं में हुआ । उसमें शब्द और अर्थ की दृष्टि से काफ़ी समानताएँ हैं । अरबी, फारसी, उर्दू तथा अंग्रेज़ी के प्रभाव से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में बहुत सारे शब्द पूरी भारतीय भाषाओं में प्रचलित हुए । इन शब्दों का अर्थ भी समान रहा है । जैसे - पादरी(पुर्तगाली शब्द) हिन्दी व मलयालम दोनों में 'पातिरी' होकर एक ही अर्थ में व्यवहृत है । इसीप्रकार सिफारिश (शुपार्शा), कालाबाज़ार (करिंचन्ता) आदि शब्द भी हैं ।

इसप्रकार के विदेशी शब्दों के तीन रूप हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं[1]- 1 ·रूपान्तरित , 2 ·अनूदित , 3 ·उपसर्ग या प्रत्यय से युक्त ।

अत: विभिन्न परिवार की भाषाओं से आए हुए (संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, पुर्तगाली, अरबी, फारसी, तथा अंग्रेज़ी के) करीब 20,000 शब्द हिन्दी में प्रचलित है, मलयालम में भी । केवल विदेशी शब्दों की गणना करें तो हिन्दी में उनकी संख्या 10,000 से अधिक है, जहाँ मलयालम में करीब 2,000 है ।

---

1 ·जे ·पद्मकुमारी - भाषाचरित्रम् पृ ·87

अनुकरणात्मक शब्दों की गणना भी हो सकते हैं । टकटक, पटपट, झरझर जैसे शब्द दोनों भाषाओं में ही नहीं, सभी भाषाओं में ध्वन्यात्मक समानता के साथ प्रस्तुत होता है ।

अनुवाद और पदादान

आधुनिक युग में अनुवाद की तीव्रगामी प्रवृत्ति से पदादान तीव्रतर हो गया है । विज्ञान के परम विकास के फलस्वरूप भाषा की विविध आयामों तथा शब्दों की विविधलक्षी क्षमता बढ गयी है । अत: वैज्ञानिक विकास और ज्ञानप्रसारण के हेतु भाषा के छोटे अर्थपूर्ण इकाई शब्द को ऋण में लेना पडता है । इस ऋणयोजना में अनुवादक की भूमिका सर्वाधिक महान है ।

पदादान के पीछे मुख्यत: दो लक्ष्य हैं - 1 •आवश्यकता बोध 2 •मान्यता बोध [1]। पहला तो वैचारिक तथा सामाजिक पक्ष है । वैज्ञानिक विकास तथा व्यावहारिक स्तर पर पदादान आवश्यकता की पूर्ति है । साथ ही कभी कभी व्यवहारयुक्त शब्दों की संप्रेषणीयता सुसंगत तथा अर्थगर्भ नहीं लगता तो ग्राम्य शब्दों को यथावश्यक प्रस्तुत करने की रीति भी आवश्यकता की पूर्ति में होता है[2]। जहाँ संस्कृत और अंग्रेज़ी के अनेक शब्द सिर्फ मान्यता के बल पर प्रयुक्त होते भी है । मलयालम में हो या हिन्दी में, संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त भाषा पण्डितोचित या स्तरीय मानने की प्रवृत्ति के पीछे यही मान्यता है । इसी वजह से उच्चस्तर की सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ उनकी भाषाओं के शब्दों का आदान भी होता है [3]। आधुनिक युग में अंग्रेज़ी शब्दों का आदान ज़्यादात्तर होता जा रहा है ।

इसप्रकार आगत परकीय भाषा के शब्द प्राय: हमारे व्याकरण के अनुकूल आते हुए दिखाई पडते हैं । कभी कभी ये परकीय व्याकरण के अनुकूल ही रहते हैं । इस व्याकरणादान की प्रवृत्ति पर आज कटु विमर्श हो रहा है । आदत्त अंगों को हमारी भाषा के अनुकूल होना चाहिए । इसका आशय यह नहीं कि इस हठ पर शब्द को विकृत बना दे । पूरे शब्दों का एकीकरण ही इसका तात्पर्य है । क्योंकि शब्द प्रमुख भाषाई अंग है, जिसे सामान्य जनता के चिरपरिचित व्यावहारिक उपयोग के अभिव्यक्ति साधन कह सकते हैं । भाषा स्वीकार नहीं, पदस्वीकार वांछनीय है - वह भी भाषाई प्रगति को ध्यान में रखकर ।

ज्ञानार्जन तथा ज्ञानप्रसारण की कसौटी पर निर्मित या आदत्त पारिभाषिक शब्दों का भी यही नियम होना चाहिए । जो भी शब्द हो, महान उद्देश्य के अनुसार बनाया जाता है । इन महान लक्ष्यों के पीछे काम करनेवाले अनुवादक या द्विभाषीया होते हैं । अर्थात् ज्ञानप्रसार लक्ष्य है तो अनुवाद मार्ग है । अत: अनुवाद के ज़रिए पदादान का ही नहीं, भाषा की समूचे प्रगति का रास्ता खुलता है ।

---

1 पी •एम •जोसफ - मलयालत्तिले परकीय पदङङल पृ •5-6 •

2 सी •के •चन्द्रशेखरन नायर - मलयालत्तिन्टे वलर्चयिल वशङङल पृ •12-13 •

3 ,, ,,

शब्दों का वर्गीकरण

सामान्यत: हिन्दी में शब्दों को विकारी तथा अविकारी शब्दों के नाम से विभक्त किया गया है । विकारी शब्द - संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया हैं, जिनमें लिंग वचन, कारक आदि के कारण विकार होता है । मलयालम में इन्हें 'वाचकं' और 'द्योतकं' कहा जाता है । वाचक के तीन विभाग हैं । मलयालम में सर्वनाम भी संज्ञा के अन्तर्गत माने जाते हैं[1]। इसी तरह क्रिया विशेषण मलयालम में अलग विभाग के नहीं है । गुण सूचित करनेवाले वाचकों को एक ही वर्ग में माने जाते हैं । संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता सूचित करनेवाले शब्द 'पेरेच्चं' हैं तो क्रिया की विशेषता बताने-वाले शब्द 'विनेयेच्चं' है ।

हिन्दी शब्द प्रकरण

1 विकारी
- संज्ञा
  - व्यक्तिवाचक (राम, सीता)
  - जातिवाचक (लडका, मानव)
  - भाववाचक (लडकपन, मानवत्व)
- सर्वनाम
- क्रिया
- विशेषण

2 · अविकारी
- क्रिया विशेषण
- संबन्धबोधक
- समुच्चयबोधक
- विस्मयादिबोधक

मलयालम शब्द प्रकरण

1 वाचकं
- नामं
  - द्रव्यनामं
    - संज्ञानामं (रामन्, सीता)
    - सामान्य नाम (वृक्ष, गिरि)
    - मेयनामं (वेलि, मरं)
    - सर्वनामं (अवन्, अवळ)
  - गुणनामं
  - क्रियानामं
- कृति
- भेदकं

2 द्योतकं
- निपात
- अव्यय
- गति
- घटकं
- व्याक्षेपकं

---

1 · ए · एल · रविवर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ 156 ·

अतः मलयालम में सर्वनाम, द्रव्यनाम का एक भेद है । भेयनाम, हिन्दी में जातिवाचक के अन्तरगत आते हैं, जो गुणनाम भाववाचक के अन्तरगत । दोनों भाषाओं में भाववाचक संज्ञा की गठन भी संज्ञा, क्रिया और विशेषण से होती है । ये भाषाई प्रकृति से युक्त होनी चाहिए ।

विभाजन क्रम में उपर्युक्त अन्तर होते हुए भी इनके प्रयोग में अन्तर बहुत कम है । हिन्दी में कर्ताकारकीय विभक्ति 'ने' के प्रयोग से उत्पन्न अन्तर मात्र उल्लेखनीय है । इसके बावजूद मलयालम में संज्ञा का प्रयोग सरल है ।

विकारी शब्दों में प्रभाव डालनेवाले तत्व हैं - लिंग, वचन, कारक आदि । अनुवाद के संदर्भ में इनका तुलनात्मक अध्ययन महत्वपूर्ण है :-

हिन्दी-मलयालम लिंग व्यवस्था

हिन्दी के व्याकरणिक समस्याओं में लिंग की समस्या सर्वचर्चित है । लिंग व्यवस्था संबन्धी असुविधा पर काफी विचारविमर्श अब भी चालू है । जहाँ मलयालम में ऐसी कोई समस्या नहीं है । अर्थानुसार लिंग बदलने और अप्राणिवाचक शब्दों, बुद्धिहीन छोटे तथा जड प्राणियों को नपुंसक लिंग में माने जाने के कारण हिन्दी से बढकर मलयालम की लिंगरचना सरल व सुविधापूर्ण है । मलयालम का सामान्य नियम यह है कि स्त्रीबोधक शब्द स्त्रीलिंग हैं, पुरुषबोधक शब्द पुल्लिंग । शेष प्राय: नपुंसक लिंग में माना जाए ।

मलयालम में 'अन्' पुल्लिंगप्रत्यय, 'अळ' स्त्रीलिंगप्रत्यय तथा 'अं' नपुंसक लिंगप्रत्यय माने जाते हैं । लेकिन यह प्रत्ययविधान जानना प्रमुख नहीं है । क्यों कि अर्थ ही लिंग का नियामक है । इसलिए अन्य प्रत्ययान्त शब्दों की पहचान भी हो सकती है । जैसे - भर्तावु, मातावु । मलयालम में आदत्त शब्दों का भी प्रयोग लिंगव्यवस्था के अनुकूल होने के कारण भ्रम की गुंजाईश नहीं है । संरचना की दृष्टि से मलयालम में लिंग का महत्व नहीं, अर्थात् इस स्तर पर वह लोकभाषा अंग्रेज़ी के निकट है[1]।

हिन्दी के केवल दो लिंग हैं - पुल्लिंग और स्त्रीलिंग । अत: भाषा के पूरे जड-चेतन, सलिंग-अलिंग वस्तुओं को इन दोनों के अन्तरगत विभक्त कर दिए हैं । इसलिए लिंगरचना शंकामय व भ्रमसंपन्न हो गई है । अर्थ या रूप को कसौटी नहीं मान सकता । हिन्दी के वाक्यस्तर पर प्रभावशाली रहने के कारण, लिंग व्यवस्था भ्रमात्मक होने पर भी महत्वपूर्ण है । लिंग जानेबिना वाक्यरचना ठीक नहीं रहती ।

एक ही अर्थवाची शब्द को दोनों लिंगों में प्रयुक्त करने की रीति भी हिन्दी में है । अर्थ की परिकल्पना इसकी सहायता से मात्र संभव होती है । जैसे - 'हार' स्त्रीलिंग में पराजय है तो पुल्लिंग में माला है । इसी प्रकार समान अर्थ के विभिन्न शब्द

---

1 वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ. 169.

का विभिन्न लिंग में होना भी हिन्दी में साधारण है । 'पुस्तक' स्त्रीलिंग है, लेकिन 'ग्रन्थ' पुंलिंग ।

प्राणिवाचक शब्दों के अर्थानुसार लिंगरचना एक हद तक संभव है, अन्य शब्दों केलिए नहीं । संस्कृत से आदत्त शब्दों के लिंग में भी भ्रमात्मकता है कि कुछ लिंग बदल कर प्रस्तुत होते हैं तो कुछ लिंगबदलाव के बिना । साथ ही संस्कृत के ढेर सारे नपुंसक लिंग शब्द हिन्दी में पुलिंग और स्त्रीलिंग हो गए हैं । इस तरह 'साहित्य' पुल्लिंग शब्द बन गया, 'सुगंध, जय' आदि तो स्त्रीलिंग भी । विदेशी शब्दों में भी यह समस्या है । कहीं-कहीं प्रयुक्त उभयलिंग शब्द भी बाधक है । जैसे - आत्मा, सामर्थ्य ।

अलिंग बहुवचन मलयालम की विशेषता है । वाक्य रचना में इनसे काफी सुविधा रहती है । इनके अनुवाद केलिए एकाधिक शब्द लगाना पड़ता है । अतः अर्थसंप्रेषण संभव होने हुए भी ऐसा व्याकरणिक अंग हिन्दी में नहीं है [1]। वृद्धर' (मल) का हिन्दी में 'बूढे लोग' या कई बूढे' के रूप में अनुवाद कर सकते हैं ।

लिंगप्रत्यय पर विचार डालें तो हिन्दी तथा मलयालम दोनों में अपवाद रहते हैं । मलयालम में पुल्लिंग प्रत्यय 'अन' कभी कभी नपुंसक शब्दों में भी आते हैं । जैसे - 'तटियन मरं' (मोटा वृक्ष), 'पोण्णन पष़ं' (बडा केला) ।

इसीप्रकार गुरु, तन्त, पिल्ले, कुरुप जैसे अनेकों शब्द हैं जिनको प्रत्यय के बल पर आंका नहीं जा सकते । जैसे - 'अक्कन' (बडी दीदी) 'अन' प्रत्यय से युक्त होने पर भी स्त्रीलिंग का है । लिंग सूचना केलिए मलयालम में आण्, पेण् आदि जोडने की रीति वर्तमान है, जो हिन्दी में नर, मादा, आदि जोडकर प्रयुक्त कर सकते हैं । लेकिन यह क्रियाविधि मात्र है, समान प्रयोग नहीं ।

मलयालम में 'त्ति, च्चि, इ, ट्टि' आदि स्त्रीलिंग प्रत्यय हैं । हिन्दी में 'इ, आ, इन, आइन, नी और आनी' इस कोटि के माने जाते हैं । इनमें भी अपवाद रहने की आशंका है ।

हिन्दी में , मलयालम के प्रथमपुरुष सर्वनामों के तीन लिंग रूपों के बदले केवल एक ही रूप है - 'वह' । इसलिए हिन्दी में लिंग समझना मुश्किल की बात है । फिर भी काल, क्रिया तथा संबन्धकारकीय रचना में लिंगतत्व बाधक है ।

विशेषण-विशेष्य के संबन्ध में कभी लिंगभेद लक्षित होता है तो कभी नहीं । जैसे - सुन्दर औरत (सुन्दरियाय स्त्री), सुन्दर पुरुष (सुन्दरनाय पुरुषन), सुन्दर दृश्य (सुन्दरमाय दृश्यं) । लेकिन अन्य उदाहरण का अन्तर देखिए - अच्छा लडका(नल्ल आण-कुट्टि), अच्छी लडकी (नल्ल पेण्कुट्टि), अच्छा कलम (नल्ल पेन) ।

---

1 ए.एस.रविवर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिण भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ. 140

कर्ताकारक की प्रस्तुति से क्रिया का कर्म के अनुसार लिंगानुसार परिवर्तन तथा कृदन्तीय पदप्रयोग में, उसके अनुसार परिवर्तन प्रायः लक्षित होते हैं ।

अतः यह कह सकते हैं कि मलयालम में लिंग का नियामक अर्थ है, जो शब्द पर मात्र असर डालता है । हिन्दी में पूरे वाक्य पर उसका बल पड़ता है । सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, कृदन्त आदि लिंगानुसार बदलते हैं । नपुंसक लिंग हिन्दी में नहीं है । इससे काफी भ्रम पैदा होता है । तत्सम या तद्भव शब्दों की लिंगरचना की अव्यवस्था भी भ्रमात्मक है । छोटे प्राणियों तथा ज्ञानहीन पदार्थों को नपुंसक लिंग में मानने की रीति मलयालम में सुविधाजनक है । अलिंगबहुवचन मलयालम की विशेषता है

यह भी उल्लेखनीय है कि लिंग रचना केलिए जो नियम हिन्दी में नहीं है, यह अपर्याप्तता है । मलयालम में अर्थ के बल पर लिंग पहचान आसान है । साथ ही पेशा या जाति बतानेवाले प्रत्यय भी सहायक हैं । पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने की रीति में भी हिन्दी वैविध्य की भाषा है जहाँ मलयालम अत्यन्त वैज्ञानिक दृष्टि से युक्त है [1]। अतः हिन्दी शब्दों का अर्थ और रूप दोनों पर पूर्ण रूप से अवलंबित नहीं रह सकता ।

लिंग की यह जटिल व्यवस्था रूढ होने के कारण बदल नहीं सकती । स्रोत-भाषा के लिंग परिवर्तन से भी हिन्दी अनुवादों में काफी परेशानी उठती है । यह व्याकरण के नियमों के बाहर है । यदि इन्हें भी व्याकरण के कट्टर नियमों में बाँध जाए तो इतनी सारी त्रुटियाँ नहीं होती । भाषा की प्रकृति के बाहर स्वतन्त्र लिंगप्रत्यय हिन्दी की सामान्य प्रवृत्ति बन गई है । अतः पूरी भाषाओं को दृष्टि में रख कर हिन्दी की लिंग व्यवस्था की डाँवाडोल व्यवस्थित करनी चाहिए । असंगत प्रयोगों को दूर कर पूरे के शब्दों को 'सालिंग' और अलिंग' में विभाजित करना चाहिए । नपुंसक शब्दों को अलिंग में रखकर शेष सलिंग शब्दों को पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग बनाना चाहिए । यही वैज्ञानिक दृष्टि से प्रयोगात्मक होगा [2]।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि लिंग भी कभी कभी संदर्भाश्रित हुआ करता है । आधुनिक गद्य के प्रगतिशील विकास तथा कविता की प्रयोगशील प्रवृत्ति में मानवीकरण जैसे प्रयोग से अलिंग शब्द भी लिंगवाची होकर प्रयुक्त होने लगा । अतः भाषा की प्रगति में भी अनुवादकीय दृष्टि होनी चाहिए । समय व संदर्भ का आश्रय अवश्यंभावी है । अनुवादक को, जहाँ तक हो सके, लिंगरचना में स्वातन्त्रता देना भी आधुनिक रीति बन गई है । ताकि अनुवाद स्वाभाविक निकले, अर्थसंप्रेषण सटीक बन जाये । अतः इस दृष्टि से अनुवादक को पूर्ण स्वतन्त्रता देने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए । अनुवादकीय प्रयोग से आदत्त शब्दों का भविष्य स्वीकृत व सर्वप्रचलित हो जाएगा ।

वचनप्रकरण

हिन्दी और मलयालम दोनों भाषाओं में दो वचन हैं - एकवचन और बहुवचन एकवचन शब्दरूप(नामरूप) है । मलयालम में लिंगप्रत्यय एकवचन का प्रत्यय है, बहुवचन

---

1 . वासुदेव भट्टातिरि - भाषाशास्त्रम् पृ . 168

2 -वही - पृ . 169 .

बनाने केलिए दोनों भाषाओं में भिन्न भिन्न प्रत्यय मिलते हैं । दोनों भाषाओं में ऐसे कुछ शब्द हैं जिनमें बहुवचनार्थ प्रत्यय जोड़े नहीं जाते । हिन्दी वाक्यरचना में वचनानुसार विकार या विपर्यय है ।

मलयालम की वाक्यरचना एकाध शब्दों को छोड़कर ले ले तो काफी सुविधाजनक है । पूरे बहुवचन शब्दों को तीन भागों में विभक्त किया गया है - 1 सलिंग बहुवचन - व्यक्तिवाचक पुल्लिंग संज्ञाओं में इसका प्रत्यय 'मार' या 'कळ' मिलता है । जैसे - रामन् - रामन्मार (राम नामक एकाधिक व्यक्ति), अम्म - अम्ममार (माताएं) कुट्टि - कुट्टिकळ (बच्चे) ।

इनका प्रयोग कभी कभी अनादरसूचक भी हुआ करता है । जैसे - भार्यकळ, तल्लमार इत्यादि में उपर्युक्त प्रत्यय बहुवचन के साथ अनादर का भी सूचक है ।

2 अलिंगबहुवचन - पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग की विवेचना से दूर कुछ ऐसे शब्द मलयालम में मार्मिक हैं, जिनका अनुवाद हिन्दी में संभव भी है, लेकिन व्याकरणिक दृष्टि से चर्चित नहीं । जैसे मलयालम के वृद्धर् का हिन्दी में 'वृद्धलोग' या 'मनुष्यर्' का 'मनुष्य' किया जा सकता है ।

3 पूजकबहुवचन - हिन्दी और मलयालम दोनों की सामन्तीय परंपरा ने ऐसे अनेक शब्दों का प्रचलन किया है जिनको जनसामान्य से दूर नहीं कर सके । रूढी या परंपरा की विशेषताओं से युक्त ऐसे शब्द अचार-विचार तथा रीति-रिवाज़ों से मिलेजुले हैं, भाषाई मुहावरे के निकट भी है ।

मलयालम के पूजकबहुवचनों में भीष्मर् (भीष्म), भट्टर् (भट्ट) इत्यादि अनेकों शब्द हैं जो अर्थ की दृष्टि से एकवचन है । सम्मानसूचना मात्र केलिए बहुवचन जैसा रूप चलता है । पूजकत्व सूचित करने केलिए सामान्यतः नाम के पहले श्री, श्रीमान, श्रीमति आदि जोडने की रीति है, लेकिन मध्यम व अन्य पुरुष में हिन्दी के 'वे' या 'ये' से बढ़कर मलयालम के 'अद्देहं', 'इद्देहं', 'इङ्ङुन्नें', 'अङ्ङुन्नु' इत्यादि अधिक प्रभावोत्पादक व अर्थसंपन्न हैं ।

पूजकत्व शब्द पर फिर बहुवचन प्रत्यय जोडने की रीति भी है । ये बिलकुल औपचारिक और व्याजिपरक हुआ करते हैं । श्रीरामन अवरकळ (श्रीमन् राम) आदि इसका उदाहरण है । इसके विपरीत में राजाक्कळ (कईराजा), आदि शब्द बहुत्व के साथ आदर सूच भी है ।

पूजक बहुवचन के अनुवाद में कुछ ध्यान की अपेक्षा है । कभी कभी साधारण शब्दों या सार्वनामिक रूपों के साथ पूजक बहुवचन के प्रत्यय अनादर की सूचना में भी आते हैं । मलयालम में अतुकळ, अवट्ट (वे), इतुकळ, इवट्ट (ये) आदि निन्दाद्योतक है [1]। इनका अनुवाद हिन्दी में यथावत् संभव नहीं है ।

---

1 वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ 178

एकाधिकता की सूचना केलिए संख्यावाचक से युक्त संज्ञाओं में परिवर्तन हिन्दी में ज्यादातर देखने को मिलता है, जहाँ मलयालम में बहुत कम है ।[1]
उदा - एक रुपया - दस रुपये (हि) ओरु रूप - पत्तु रूप (मल ·)
एक आँख - दो आँखें (हि) ओरु कण्णु - रण्टु कण्णुकळ (मल)

मलयालम के छोटे तथा सूक्ष्म पदार्थों में भी बहुत्व सूचना नहीं मिलती, लेकिन बड़ी-बड़ी वस्तुओं में मिलती है — पाँच दोशे - अञ्चु दोश
दस चाय - पत्तु चाय
दो पर्वत - रण्टु पर्वतङ्ङळ
इसी प्रकार वक्कीलन्मार, अरयत्तिमार, आशाट्टिकळ, जैसे प्रयोग भी द्राविड़ संस्कृति के अनुरूप हैं ।

हिन्दी तथा मलयालम के कुछ पदार्थवाचक शब्द एकवचन रूप में ही प्रयुक्त किये जाते हैं । जैसे - चाँदी, सोना, दूध, पानी । भाववाचक संज्ञाएँ भी इस प्रकार की मिलती हैं लंबाई, पढाई आदि । समूहवाचक या युगलसूचक शब्द बहुवचनार्थ में आते हैं । जैसे - दंपतियाँ, भेड़-बकरियाँ ।

समय की अवधि सूचित करने तथा व्यक्तिवाचक को गुणदोष विवेचन केलिए प्रयुक्त करते वक्त भी बहुवचन की सूचना दोनों भाषाओं में मिलती है ।
उदा:- गर्मियों में जाना ठीक नहीं है (हि) - चूटु कालत्तु पोकुन्नतु शरियल्ल (मल)
यह सीतादेवियों का गुण नहीं है(हि)- इतु सीतादेविकळुटे गुणमल्ल । (मल ·)

हिन्दी में आँसू, प्राण, दर्शन जैसे कई शब्द बहुवचनार्थी हैं । ऐसे शब्दों के अनुवाद में बहुत्वसूचना बनाए रखने का कोई मार्ग नहीं है -
प्राण चले गए - प्राणन् पोयि ।
उनके दर्शन मिले - अद्देहत्तिन्टे दर्शनं लभिच्चु ।

मलयालम में वचन का, शब्दस्तर पर विश्लेषण होता है जहाँ हिन्दी में पूरे वाक्यस्तर पर इसका प्रभाव है । सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, कृदन्त आदि का प्रयोग इस प्रसंग में बाधक है ।
उदा:- संज्ञा राम अच्छे कलाकार हैं ।
सर्वनाम - वे अच्छे गायक थे ।
क्रिया - सीता गाती है ।
विशेषण - अच्छी कहानी सुनाओ ।
कृदन्त - मेरी लिखावट कैसी है ?

संक्षेप में हिन्दी के अकारान्त को छोड़कर बाकी पुल्लिंग शब्दों के रूप दोनों वचनों में समान हैं, मलयालम में नहीं । उसी प्रकार निर्जीव पदार्थों के साथ भी बहुवचन प्रत्यय हिन्दी में जुड जाते हैं, मलयालम में नहीं । हिन्दी में वाक्यस्तर का परिवर्तन होता है । मलयालम की वचनव्यवस्था द्रविडानुकूल अधिक है ।

---

1 ए ·एल ·रविवर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ ·142

कारक विभक्ति विवेचन

हिन्दी मलयालम भाषाओं की एकता के विधायक तत्वों में दूसरा स्थान कारक का है । क्यों कि रूपात्मक दृष्टि से अयोगात्मक या वियोगात्मक भाषाएं होने पर भी इन दोनों भाषाओं में परिलक्षित सर्वमान्य प्रभाव संयोगात्मक भाषा संस्कृत का है । संस्कृत का प्रोत्साहन इनको आगे बढाता भी है । मलयालम तथा हिन्दी के व्यावहारिक उपयोग में भी संस्कृत का प्रभाव काफी परिलक्षित होता है ।

प्रत्येक भाषा की अपनी कारकीय व्यवस्था होती है । इनका रूपविशेष भाषाई निजता है । लेकिन कारकीय विभक्ति की अर्थसमानता तथा भाषाई समता अनुवाद में काफी सहायक है । हिन्दी तथा मलयालम के तत्सम, तद्भव, देशज व विदेशी शब्दों से विभक्ति जोडकर कारकीय रूपरचना होती है ।

कारकीय विभक्ति की संख्या दोनों भाषाओं में 7 है । संबोधन कारक वास्तव में वाकांश है, जिनके दो विभाग हो सकते हैं - 1 •संज्ञा के अन्त में 'ए' प्रत्यय जोडकर । जैसे - सीते, रमे । 2 •स्वरान्त संज्ञाओं को दीर्घान्त बनाकर । जैसे - कृष्णा, रामा । हिन्दी में मध्यस्वर दीर्घ होने की रीति भी है । जैसे- का••••न्ह ।

विभक्ति

हिन्दी		मलयालम	
कर्ताकारक	- ने	निर्देशिका	- विभक्ति नहीं ।
कर्मकारक	- को	प्रतिग्राहिका	- ए, ऐ
करण	- से	संयोजिका	- ओडु, ओँडु
संप्रदान	- को	प्रयोजिका	- क्कु, उ
अपादान	- से	उद्देशिका	- आल्
संबन्ध	- का, के, की	संबन्धिका	- उटे, न्टे
अधिकरण	- में, पर	आधारिका	- इल, कल

हिन्दी में 'को' तथा 'से' दो-दो कारक की विभक्ति होकर आते हैं । इसको केवल रूपसमानता है, अर्थ समानता नहीं । अतः प्रयोगान्तर अर्थ का नियामक है ।

प्रथमा विभक्ति - कर्ताकारक

हिन्दी में भूतकाल में प्रयुक्त इस विभक्ति की रचना मलयालम में नहीं है, जिससे भाषा की रचना सरलता की ओर झुकी रहती है । हिन्दी के कर्ताकारक से उत्पन्न भ्रम भाषा को बोझिल बनानेवाला है, क्यों कि कर्ताकारक के प्रभाव से पूरी वाक्यरचना बदल जाती है ।

सकर्मक धातु के साथ भूतकाल में 'ने' का प्रयोग होता है । 'ने' लगाने का अपवाद भी ज्यादा मिलता है (ला, बोल, भूल आदि) इसके विरुद्ध नहा, खाँस, छींक जैसी अकर्मक धातुओं में 'ने' लगाने की रीति भी है । अतः भाषा के प्रयोक्ता भी इन अपवादों से जूझते रहते हैं तो अनुवादक की बात अलग नहीं रहती । 'ने'

कर्ताकारकीय विभक्ति की प्रयुक्ति से क्रिया का कर्म के अनुसार बदलना तथा कर्म के साथ प्रत्यय रहते तो क्रिया का एकवचन पुल्लिंग रहना आदि नियम भी व्याकरणिक होते हुए भी अपवादरहित नहीं है । ऐसे अवांछित नियम अव्यावहारिक भी हैं । मलयालम में ऐसी कोई समस्या नहीं । उदा: -

राम रोटी खाता है - रामन् रोट्टि तिन्नुन्नु ।
राम ने रोटी खायी - रामन् रोट्टि तिन्नु ।
राम ने सीता को देखा - रामन् सीतये कण्टु ।
राम ने सीता को चिट्ठी लिखी - रामन् सीतय्क्कु एषुत्तयच्चु ।

सकर्मक क्रिया के साथ अकर्मक क्रिया, सहायक क्रिया के रूप में आयी तो कर्ताकारक नहीं जुडता । जैसे - मैं खा चुका (मैं ने खाया)
मैं मार बैठा (मैं ने मारा)

हिन्दी में कर्ताकारकीय रचना से काफी दिक्कत पैदा होती है । भाषा के निकट ज्ञान व परिचय के साथ प्रगतिशील दृष्टि भी अनुवाद में अपेक्षित है । मलयालम के ऐसे कुछ उदाहरण देखिए, जिनका अनुवाद अन्य कारकीय विभक्ति में मात्र संभव है ।

1. ञान इविटे वन्निट्टु मून्नु वर्षमायि - मुझको यहां आये तीन वर्ष हो गए ।
2. ञान पऱयाते निनक्कु पोकानाविल्ल - मेरे कहे बिना तुम नहीं जा सकते ।
3. नी इन्नु पोयिट्टु वल्ल कार्यवुं उण्टो ? - तुम्हारे आज जाने की कोई फायदा है क्या ?

द्वितीया विभक्ति - कर्मकारक

कर्मकारकीय विभक्ति सभी शब्दों में लगायी नहीं जाती । अप्राणिवाचक या छोटी-छोटी वस्तुओं को विभक्ति लगाए बिना ही प्रयुक्त करते हैं । यह प्रणाली दोनों भाषाओं में है । जैसे - राम रोटी खाता है - रामन् रोट्टि तिन्नुन्नु ।
सीता नाटक पढती है - सीत नाटकं वायिक्कुन्नु ।
लेकिन 'राम गाय को मारता है - रामन् पशुविने अटिक्कुन्नु ' में विभक्ति जुड जाती है

हिन्दी की द्वितीया विभक्ति 'को' का रूप 'ए' होकर सर्वनामों के साथ आती है, जिसका रूप परसर्गवत् है । जैसे - मुझे, तुम्हें, हमें, इन्हें, इसे । मलयालम में भी इसका ' ' रूप चलता है । जैसे - रामने, पशुविने, सीतक्कु । इसप्रकार कारक चिह्न लगाने के कारण सबसे अधिक रूपभेद सर्वनामों का ही है ।[1]

हिन्दी तथा मलयालम में कर्मकारक के अनेक रूप ऐसे हैं जो अनुवाद में अन्य विभक्तियों के साथ मुहावरेदार प्रयोग में हीमिलते हैं । जैसे -

मैं राम को जाते देख सका - एनिक्कु रामन् पोकुन्नतु काणान् कष़िञ्ञु ।
तुम्हें जाना पडेगा - नी पोकेण्टि वरुं । (बाध्यता बोधक)
तुम्हें जाना चाहिए - नी पोकणम् (आवश्यकता बोधक)
मुझे याद है, तुम्हें मालूम है - निनक्करियामेन्नु एनिक्कोर्मयुण्टु ।
मालिनी को दिया - मालिनीक्कु कोटुत्तु ।

---

1. ए. एल. रविवर्मा - दक्षिणी भाषाओं के साथ हिन्दी का तुलनात्मक व्याकरण पृ. 143

पुस्तक दो - पुस्तकं कोट्टक्कू ।
विजय पढाई पर निर्भर है विजयं पठित्तत्ते आश्रयिच्चिरिक्कुन्नु ।(अधिकरण)
नीचे उतर आओ - ताष़े इरङिङ वरू ।(स्थान बोधक)
सोमवार को आओ तिङ्गलाष्च वरू । (काल वाचक)
मुझे नींद आती है - एनिक्कु उरक्कं वरुन्नु । (सजीव संज्ञा)
वह दौडने को गया - अवन् ओटान पोयि (प्रारंभ सूचक)
वर्षा अरंभ होने को है - मषु तुटङ्ङारायि (,,)
वह जाने को भागा - अवन् पोकान ओटि(उद्देश्य बोधक)

उसी प्रकार कर्म कारक के बदले तई, प्रति आदि शब्दांश जोडकर काम चलाने की रीति है, जिनके समानार्थी शब्द मलयालम में भी मिलते हैं । जैसे -
तुम्हारे प्रति मैं वहाँ गया - निन्ने प्रति ञान अविटे पोयि ।

तृतीया विभक्ति करण कारक

मलयालम में इसकी विभक्ति 'ओटु' है । इसके बदले 'कोण्टु, उटे, कारण, आल्' आदि शब्दांश भी चलते हैं । हिन्दी में इसकी विभक्ति 'से' है जिसके बदले 'द्वारा, ज़रिए, कारण, मारे, से लेकर, के बिना, के साथ' आदि भी व्यवहृत है । जैसे - गंगा यमुना से जुडती है - गंग यमुनयोटु चेरुन्नु ।
रास्ते से (होकर) चलो - वषियिलूटे नटक्कू ।
उससे मत रूठना ,- अवनोटु पिणङ्ङरुतु ।

तृतीया विभक्ति हिन्दी में कर्ता, करण आदि के अर्थ में भी आती है । मलयालम में प्रायः साक्षि के अर्थ में[1] । जैसे -
उसने पत्थर से मारा - अवन् कल्लुं कोण्टेरिञ्ञु ।
ऊर्मिला सीता से छोटी है - ऊर्मिला सीतयेक्काळ चेरुताणु ।

हिन्दी में करण विभक्ति के प्रयोग में वैविध्य है । मलयालम में इसके बीच 'गति' को प्रयुक्त किया जाता है ।
लडके क्रम से बैठे हैं - कुट्टिकळ क्रममायिट्टू इरिक्कुन्नु ।
गाँव यहाँ से दूर है - ग्रामं इविटेनिन्नु अकलेयाणु ।
उससे काम चलेगा - अवनेक्कोण्टु कार्यम् नटक्कुं ।

हिन्दी में विभिन्न अर्थों में करण कारक प्रयुक्त होता है । जैसे -
मुझसे खाया नहीं जाता - एन्नाल तिन्नान् कषियिल्ल (कर्मवाच्य में)
उससे लिखाया जा सकता है - अवनेक्कोण्टु एषुतिप्पिक्का (प्रेरणार्थ में)
पत्थर से चोट लगा - कल्लुकोण्टु मुरिञ्ञु । (कारण)
रेशम से बनी साडी - पट्टु सारी
आँखों देखा हाल - कण्टु कोण्टु परयुन्न कार्यम् (,,)
बाहर से दरवाजा खोलो - पुरत्तुनिन्नु वातिल तुरक्कू (अधिकरण)
कविता से बात समझ गई - कवितयिलूटे कार्यम् मनस्सिलायि ।(संप्रदान)

---

1 ·ए ·एल ·रविवर्मा - दाक्षिणी भाषाओं के साथ हिन्दी का तुलनात्मक व्याकरण पृ ·145

इसकी विभक्ति हिन्दी में 'को' है । जिसके अर्थ हैं - हेतु, निमित्त, केलिए, के वास्ते आदि । मलयालम में उद्देशिका की विभक्ति 'क्कु' या 'नु' है । कभी कभी शब्दानुसार 'क्कु' का 'ए' रूप मात्र लक्षित होता है । मलयालम 'क्कु' का हिन्दी 'को' से काफी समानताएँ हैं [1]।

मैं ने राम को पुस्तक दिया - ञान रामनु पुस्तकं कोटुत्तु ।
पुत्री केलिए साडी खरीदी - पुत्रिक्कुवेण्टि सारि वाङ्ङि ।

हिन्दी में अपूर्ण सकर्मक क्रिया के मुख्य कर्म में संप्रदान चिह्न आता है । मलयालम में प्रथमा से ही रचना होती है ।

मैं तुम्हें चोर मानता हूँ - ञान निन्ने कळ्ळनेन्नु करुतुन्नु ।

'होना' क्रिया के साथ संप्रदान विभक्ति का प्रयोग अक्सर हिन्दी में है , इनका अनुवाद मलयालम में कृदन्त के सहारे हुआ करता है -

बिजली गिरने को है - मिन्नल अटिक्कारायि ।
वह आने को है - अवन् वरान् पोकुन्नु ।

जानकारी के अर्थ में तथा फल या निमित्त के अर्थ में दोनों भाषाओं में संप्रदान से ही वाक्यरचना होती है ।

मुझे गाना आती है - एनिक्कु पाटान कषियु ।
मेरे कहने पर वह चलेगा - ञान पऱञ्ञाल अवन् पोँकुं ।
पढने से फायदा होगी - पठिच्चाल गुणमुण्टाकुं ।

कालवाचक तथा विनिमय के अर्थ में मलयालम में संप्रदान मिलता है उसका हिन्दी में अधिकरण रूप में ही अनुवाद हो सकता है -

चावल आठ रूपये में मिलता है - अरि एट्टु रूपक्कु किट्टुं ।
रात को वर्षा होगी - रात्रियिल मषयुण्टाकुं ।

संबन्ध के अर्थ में तथा आवश्यकता या शक्ति बोधक क्रियाओं के साथ भी इस प्रकार की भाषाई मुहावरे मिलती है -

मुझे गाना पडा - एनिक्कु पाटेण्टिवन्नु ।
राम का एक बच्चा हुआ - रामनु पुत्रनुण्टायि ।
पिता केलिए धोती नहीं है - अच्छनु मुण्टिल्ल ।
उसे भोजन दो - अवनु भक्षणं कोटुक्कू ।
वर्षा के मारे खेल नहीं हुआ - मष कारणमाकि नटन्निल्ल ।
मैं गा सकता हूँ - एनिक्कु पाटान काषियु ।

इसी प्रकार - राम केलिए बनाया चाय - रामनुवेण्टि उण्टाक्किय चाय
भारत केलिए खेला खिलाडी - भारतत्तिनुवेण्टि कळिच्च कळिक्कारन् -आदि भी मुहावरेदार प्रयोग माना जा सकता है ।

---

1 . वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ . 83

पंचमी विभक्ति - अपादान कारक

अलग होने का भाव सूचित करने की विभक्ति हिन्दी में 'से' (लेकर, अपेक्षा, कारण, सामने, आगे, साथ) है, मलयालम में 'आल'(मुतल, इल निन्नु) है। हिन्दी की यह विशेषता है कि कई क्रियाएँ केवल पंचमी में ही प्रयुक्त होती हैं। जैसे -

वह मुझे प्यार करता है - अवन् एन्ने स्नेहिक्कुन्नु ।
वह साँप से डरता है - अवन् पाम्पिने पेटिक्कुन्नु ।
मैं उससे मिला - आन अवने कण्डु ।

असल में अपादान के साथ विभिन्न तरह की 'गति' जोडकर मलयालम में प्रयुक्त होने की विधि है। सामान्यत: 'आल' कर्मवाच्य में कर्ता के साथ जोडने की रीति है। 'से' पंचमी विभक्ति के अर्थ में हिन्दी में प्रयुक्त है जहाँ इसका समानार्थी कारक मलयालम में करण, कारण, कर्ता आदि में भी मुहावरेदार प्रयोग में आते हैं -

उसका कार्य गुस्से से नहीं चलता - अवनोटुळ्ळ कार्यम् देष्यं कोण्टु नटक्किल्ल ।
वहाँ से यहाँ तक - अविटे मुतल इविटे वरे ।
सबसे बडा वृक्ष - एँट्टवुं वलिय मरं ।
सबेरे से लेकर - राविले मुतल ।
जाने से मना किया - पोकुन्नतिल निन्नु विलक्कि ।
यहाँ से जाओ - इविटे निन्नु पोकू ।
उनमें से कौन ? - अवरिल आर ?

षष्ठी विभक्ति - संबन्ध कारक

मलयालम में षष्ठी का प्रत्यय 'न्टे' और 'उटे' है। हिन्दी में लिंगवचनानुसार प्राय: तीन विभक्ति मिलती हैं 'का, के, की'। इन षष्ठी विभक्तियों का सर्वनाम के साथ प्रयोग करते वक्त सुयुक्त रूप मिलता है - तेरा, मेरा, आदि। अन्य शब्दों से सीधा प्रयोग होता है - राम का बेटा - रामन्टे मकन्, सीता की बेटी - सीतयुटे मकळ ।

दोनों भाषाओं में अलग-अलग मुहावरेदार प्रयोग मिलते हैं। अर्थ समान होते हुए भी इनका रूप और कारकीय प्रयोग अनुवाद में भिन्न रहता है। जैसे -

बंबई का रास्ता - बोंबैक्कुळ्ळ वषि ।
मेरे कहने पर - आन परञ्ञुकोण्टु ।
मेरे जाने पर - आन पोयशेषं ।
कण्णन की कहा कहानी - कण्णन परञ्ञ कथ ।

संबन्ध कारकीय विभक्ति नहीं जोडने का प्रयोग भी मलयालम में खूब मिलते हैं। - घोडे की गाडी कुतिरवण्टि, सोने की अंगूठी - स्वर्ण मोतिरं ।

साथ ही दूसरी भाषा में करण, अपादान, अधिकरण आदि की विभक्ति आने का प्रसंग भी है -

कलम का लिखना - पेन कोण्टु एषुतुक ।
जेल का भागा जेयिलिल निन्नोटिय ।
तागे का चढना - कयरिल कयरुन्न ।

संबन्धकारक, संबन्धसूचक अव्ययों के साथ खूब सारे आते हैं । हिन्दी की कई क्रियाओं में और दूसरे शब्दों के साथ कालवाचक संज्ञाओं में अपादान के अर्थ में संबन्धकारक आता है[1]। जैसे -

कब की पुकार रही हूँ एप्पोळ मुतल विळिच्चुकोण्टिरिक्कुकयाणु ।
अतः सतर्कतारहित प्रयोग गलत होगा । इनके अलावा स्मरण, दान, शासन आदि क्रियाएँ, दूर, कुशल, सुख, हित आदि शब्द, कृदन्तीय प्रयोग में कर्ता व कर्म के बोधक शब्द इत्यादि के साथ भी षष्ठी का मुहावरेदार प्रयोग मिलता है । उदा: -
इतिहास + का → ऐतिहासिक, मैं + का → मेरा, नगर+ का → नागरिक ।

साथ ही अपनत्व (मेरा घर), सामग्री (चाँदी का बर्तन), आधार (हिमालय का बर्फ), उत्तरदायित्व (साहब का आदेश), स्वभाव (माँ की ममता), कीमत (साड़ी की कीमत), लंबाई(तीन इंच का पेन), संपूर्णता(पूरा का पूरा) आदि भी अनेकों प्रयोग हैं

संयुक्त परसर्गों के रूप में भी हिन्दी षष्ठी कारकका प्रयोग है । उदा: -
'के विरुद्ध'(एतिरायि), 'के साथ'(कूटे), 'के बावजूद'(कूटाते), 'के द्वारा' (अतिनाल), 'के बजाय'(एन्निट्टुं) । इन सबका मलयालम में 'गति' के साथ प्रयोग अर्थप्रमाण में पीछे का नहीं है ।

सप्तमी विभक्ति - अधिकरण कारक

मलयालम में 'आधारिका' की विभक्ति 'इल' और 'कल' है । हिन्दी में 'में' और 'पर' । इनके अलावा मलयालम में 'पुरत्तुं, वेलियिल, मीते, मेले, अकत्तुं, उल्लिल' आदि भी शब्दों का प्रयोग है तो हिन्दी में 'मध्य, बीच, भीतर, अंतर, ऊपर' आदि हैं । जैसे -

चारों दिशाओं में - नालु दिक्किलुं ।
एक जगह पर - ओरु स्थलत्तुं ।
कुएँ में - किणट्टिल ।
दो मिनुट में - रण्टु मिनिट्टिल ।
एक घण्टे में - ओरु मणिक्कूरिल ।
पानी में - वेल्लत्तिल ।

मलयालम में 'गति' से बनानेवाले प्रयोग बहुत मिलता है । साधारणतः 'मूलं, निमित्तं, मुखान्तिरं, वषि, मार्गं, वरे, तोट्टु, मुतल आदि का प्रयोग प्रचलित है

निन्दा, स्थिति, समय, स्थान, नियन्त्रण, सहारा, कारण, विषय, लीनता आदि अनेकों प्रसंग सप्तमी में प्रयुक्त होता है । -

घर पर - वीट्टिल
दिन पर दिन भाव चढ़ता है - दिवसंतोरुं विलकुयरुन्नु ।
छोटा होने पर भी होशियार है - चेरुतायालुं मिटुक्कनाणु ।
मेरे नाम पर कर दो - एन्टे पेरिलाक्कू ।
इस विषय पर प्रश्न नहीं - ई विषयत्तिल चोद्यमिल्ल ।

- -

1 ·ए ·एल ·रावेवर्मा - हिन्दी के साथ दाक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ ·152

अधिकरण चिह्न लुप्त रहने की स्थिति भी है । जैसे -

इन दिनों तुम कहाँ थे ? - ई दिवसङ्ङळिल् नी एविटे आयिरुन्नु ?

इस प्रकार 'गति' को छोड़कर सीधी रचना की रीति मलयालम में अब भी जारी है, जिसे संक्षिप्त व अर्थगर्भ रीति कह सकती है[1]।

कारकीय व्यवस्था के प्रयोग में मलयालम 'गति' को ध्यान दे दें तो बाकी प्रत्यय विधान और प्रत्यय योजना सरल दीखता है[2]। सरलीकरण की प्रवृत्ति से एक ही विभक्ति का विभिन्न कारकीय अर्थ में प्रयोग मिलता है । इसपर अनुवादकीय दृष्टि रहें । क्यों कि अनुवाद में नियम निरर्थक है, भाषाई प्रभाव महत्वपूर्ण । व्यावहारिक अनुवादकीय दृष्टि से विभक्ति प्रकरण के क्रम आने से गड़बड़ दूर रहता है ।

कारकीय तुलना के बाद भी मुहावरेदार प्रयोग से उत्पन्न भ्रम व्यक्त करने में निर्धारित रीति नहीं है । यहाँ वैज्ञानिक दृष्टि से युक्त अंग्रेज़ी कारकीय व्यवस्था का अनुकरण सुधार के रास्ते में सहायक है[3]। शब्दों का आपसी संबन्ध कारक की व्यवस्था की कसौटी रखना चाहिए । पूर्ण अर्थ का आभास द्योतित करनेवाली विभक्ति ही प्रयुक्त करने की रीति अपनानी होगी । विभक्ति को वैज्ञानिक दृष्टि में प्रयुक्त करने केलिए अर्थ या भाव का आश्रय लेना ठीक होगा ।

सर्वनाम

भाषा का सौन्दर्य बढ़ाने और उनकी भूमिका व्यापक बनाने में सर्वनाम की विशेष महत्ता है । यहाँ हमें वक्ता, श्रोता तथा विषय की प्रस्तुति सूचित करते हैं[4]। अपने में अनेक विशेषताएं समाये जाने से सर्वनाम भाषा के अन्य अवयवों में से अलग अस्तित्व रखनेवाले स्वावलंबी एवं स्वतन्त्र शब्द है[5]। ग्रहण करनेवाले शब्द का अर्थ स्वीकार करने के कारण इनका प्रयोग भी व्यावहारिक दृष्टि से आसान है ।

हिन्दी-मलयालम अनुवाद में सर्वनाम का अध्ययन महत्वपूर्ण है । हिन्दी के सर्वनाम लिंगानुसार परिवर्तित नहीं होंगे, जहाँ मलयालम में वे लिंगाश्रित है । वाक्य में परवर्ती क्रियात्मक अंतर भी हिन्दी में परिलक्षित होता है ।

पुरुषवाचक सर्वनामों में उत्तम पुरुष का एकवचन में कोई विशेष अन्तर नहीं है । इनके बहुवचन रूपों में मलयालम वैविध्य रखती है । जैसे -'नाम्, नम्मळ, और ञङ्ङळ' । इनमें 'नम्मळ' श्रोतारहित रूप है और 'ञङ्ङळ' श्रोतासहित ।

---

1. वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ. 76 .
2. डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवाद: भाषाएं, समस्याएं पृ. 251
3. वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ. 185
4. ज. म. दीमशित्स - हिन्दी व्याकरण की रूपरेखा पृ. 76
5. डॉ. कैलाशचन्द्र अग्रवाल - हिन्दी व्याकरण तथा रचना पृ. 42

'नां' पूजकबहुवचन की आदरसूचना तथा सम्मानसूचना हिन्दी 'हम' में नहीं मिलती । बोलचाल में निम्नता या दासता की सूचना में, उत्तम पुरुष में 'अटियन, आटयङ्ङळ(बहुवचन) शब्दों से होते हैं, इनका अनुवाद संदर्भाश्रित मिलता है ।

मध्यम पुरुष सर्वनाम दोनों भाषाओं में तीन मिलते हैं - तू, तुम और आप (नी, निङ्ङळ और ताङ्कळ) । इनमें व्याकरणिक अंतर नहीं है, लेकिन व्यावहारिक और आर्थिक अंतर है । 'तू' का प्रयोग निरादर या घृणा दिखाने केलिए या छोटों केलिए अधिक होता है जहाँ 'नी' बहुधा अधिकार व अवस्था पर [1]। इसी प्रकार 'तुम' हिन्दी में एकवचन है, मलयालम में बहुवचन भी । हिन्दी में इस रूप का अन्य शब्दों से जोडने बहुवचन रूप मिलता है । हिन्दी के इन रूपों का मलयालम अनुवाद सरल लगता है क्यों कि इनके अर्थयुक्त सर्ववाची सर्वनाम व्यवहार में है - एल्ल' ।
जैसे - तुम लोग जाते हैं - निङ्ङळ (एल्लावरुं)पोकुन्नु ।
इसके अर्थ में 'ओक्के, आके' जैसे शब्द भी सर्वनामसम प्रयुक्त किया जाता है [2]। इनके अर्थ में प्रयुक्त हिन्दी शब्द सर्वनाम की कोटि में नहीं आता ।

'आप' का अनुवाद 'ताङ्कळ' के रूप में किया जाता है, पर मलयालम में इसको औपचारिक प्रतीति हिन्दी में नहीं । साथ ही मलयालम में 'निङ्ङळ' से इसका एहसास मिलता है साथ-संबन्धों तथा निकटता के प्रसंगों में 'आप' का प्रयोग यथावत् मलयालम में नहीं हो सकता ।

निजवाची 'आप' की प्रमुख प्रवृत्ति हिन्दी में है, मलयालम में नहीं । स्वयं, खुद जैसे अर्थवाले इस सर्वनाम का अनुवाद 'तन्नत्तान' या अन्य शब्दों के सहारे होता है [3]।

अन्य पुरुष सर्वनामों के प्रयोग में वैविध्य है । मलयालम में इनके अनेक रूप है, हिन्दी में तो सजीव, निर्जीव, मनुष्य, पशु, पक्षि आदि सबकेलिए प्रयुक्त सर्वनाम समान रूप के हैं । हिन्दी में इनके केवल चार भेद हैं - यह, ये, वह, वे । जहाँ मलयालम में 'चुट्टेषुत्तुं' के साथ विभिन्न लिंग-वचन प्रत्यय जोडकर विभिन्नार्थ द्योतक सर्वनाम बना लेते हैं [4]। - अवन्, अवळ, अतुँ, इवन, इवळ, अवर, इवर, इतुँ, अतु आदि ।

मलयालम के 'अतुँ' और 'इतुँ' सामान्यतः नपुंसक लिंग के माने जाते हैं । कुछ विशेष प्रसंगों में उनका प्रयोग सजीव में भी होता है । जैसे अतुँ परयुन्नु (वह कहता है), इतुँ पाटुन्नु (यह गाता है) ।

---

1 . एन . पी . कुट्टन पिल्ले - तुलनात्मक व्याकरण पृ . 30
2 . वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ . 213
3 . एन . पी . कुट्टन पिल्ले - तुलनात्मक व्याकरण पृ . 31
4 . ए . एल . रविवर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ . 155

प्रश्नवाची

हिन्दी प्रश्नवाची सर्वनाम 'कौन' और 'क्या' है, इनके समानार्थी 'आर' और 'एन्तु' मलयालम में व्यवहृत है। नपुंसक लिंग के शब्दों केलिए 'एतु' भी इस भाषा में मिलता है। प्रश्नवाची सर्वनाम के प्रयोग में मलयालम में कुछ खासियत है -1 'ए' चुट्टेषुत्तु के साथ लिंग-वचन प्रत्यय जोडकर प्रश्नवाची सर्वनाम बनाने की रीति है। जैसे - एवन, एवळ। 2. क्रियान्त में बदलाव लाकर प्रश्न पूछने की सीधी रीति है। जैसे - पोयो ? (गया क्या ?)। 3. प्रश्नवाचक सर्वनाम दुहराकर बहुत्व की सूचना देना हिन्दी में संभव है जिसकेलिए मलयालम में सर्ववाची सर्वनाम जोडना पडता है। जैसे - कौन-कौन गया ? - आरोक्के पोयि ?

अनिश्चयवाची

मलयालम में हिन्दी के अनिश्चयवाची सर्वनामों के समानार्थी सर्वनाम नहीं है। 'कोई' और 'कुछ' के अर्थ में प्रयुक्त करने केलिए प्रश्नवाची सर्वनामों के साथ 'ओ' संदेहात्मक निपात जोडकर लिखाजाता है [1]। जैसे - आरो, एन्तो, एँतो।

अनिश्चयवाची सर्वनाम का विकसित रूप हिन्दी में 'संयुक्त सर्वनाम' के नाम से अभिहित है [2]। मलयालम के विशेष प्रकार के सर्वनामों के बदले प्रयुक्त इनकी विशेष प्रवृत्ति चर्चित है।

1. निर्दिष्ट सर्वनाम - मलयालम में 'इन्नवन, इन्नवळ, इन्नव आदि इसमें आते हैं। - इन्नयाळ पोकुन्नु - अमुक (आदमी) जाता है।

2. अंशवाची सर्वनाम - इसमें 'मिक्कवर, मिक्कव' आदि है।
- मिक्कवरुं पोयि - कई एक गए।

3. अन्यार्थक सर्वनाम - 'मट्टवन, मट्टळ, मट्टव' आदि अन्यार्थक सर्वनाम हैं। मट्टवन एविटे - दूसरा(आदमी) कहाँ है ?

4. नानार्थक सर्वनाम - 'पलवर, पलतु, पलव, चिलवर, चिलव, चिलतु आदि इसमें आते हैं। पलरुं वन्नु - कई लोग आए।
चिलर परञ्ञु - कुछ लोगों ने कहा।

5. अनिश्चयवाची सर्वनाम - 'वल्लवन, वल्लवळ, वल्लतु' आदि अनिश्चय वाची सर्वनाम हैं। - वल्लवरुं वन्नो - कोई आया है क्या ?

6. विवेचक सर्वनाम - मलयालम के विवेचक सर्वनाम हैं - 'ओरुत्तन, ओरुत्ति, ओरुवळ' आदि। इनके अनुवाद केलिए हर, प्रत्येक आदि शब्द सर्वनामवत् प्रयुक्त किया जाता है - ओरुत्तन वरुन्नु - एक (आदमी) आता है।
ओरोरुत्तरायि पोकू - एक-एक होकर जाओ।

अतः यहाँ संयुक्त सर्वनाम ही प्रयुक्त कर सकते हैं। भाषा का अर्थ व्यापक बनाने में संयुक्त सर्वनामों की भूमिका महत्वपूर्ण है। हिन्दी में प्रयुक्त संयुक्त सर्वनाम हैं -

---

1. वासुदेव भट्टातिरि - भाषाशास्त्रम् पृ. 221

हर कोई, कोई एक, एक कोई, सब कोई, कुछ एक, कोई-कोई, कोई-न-कोई, कुछ-न-कुछ आदि ।

इनके अर्थ में संदर्भाश्रित अंतर आते है । 'कोई' का विभिन्न प्रसंग देखिए -
कोई आ जाय - आरेङ्किलुं वन्नोङ्कल ?
कोई आता है - आरो वरुन्नुण्टु ।
यहां कोई नहीं - इविटे आरुं इल्ल ।
कोई गया क्या ? - आरो पोयो ?
कोई बात नहीं - ओन्नुमिल्ल ।

संबन्धवाचक

हिन्दी में इसका महत्वपूर्ण स्थान है । भाषा के प्रयोग में इस सर्वनाम का व्यापक उपयोग देखा जा सकता है । मलयालम में ऐसा सर्वनाम नहीं है । बदले में संबन्धवाची कृदन्तीय पद मिलता है[1], जो अर्थ में समान रहता है । जैसे -
जो आया वह - वन्नवन् (आराणो वन्नतुँ अवन्)

अत: वाक्य गठन केलिए विभिन्न रीतियां रहने के कारण सर्वनामों का अनुवाद काफी सुविधापूर्ण है । भाषाप्रयोग के कुछ वैपरीत्य जो मिलता है, उनको समझ लेने से दिक्कत दूर होती है ।

क्रिया

क्रिया भाषा का मुख्य एवं सर्वाधिक प्रभावशाली अवयव है, क्यों कि वही वाक्य का नियामक है । आकांक्षापूर्ति का भी यह माध्यम बन जाती है । क्रिया के पोषक होकर अन्य अवयव भी वाक्य में प्रस्तुत होते हैं । हिन्दी की क्रिया रचना अन्य अवयवों पर आश्रित रहती है ।

क्रिया धातु: - हिन्दी में संस्कृत से व्युत्पन्न कई धातुएं हैं तो कई की व्युत्पत्ति बताना मुश्किल है । मलयालम में यही स्थिति है । उसमें मुख्यत: तीन प्रकार की धातुएं मिलती हैं - संस्कृत मूल की, द्राविड मूल की, तथा अन्यजनित ।

हिन्दी में तो खाना, पीना, उठना आदि संस्कृत व्युत्पन्न हैं तो गर्राना, चिल्लाना, अपनाना आदि का श्रोत अज्ञात हैं । अपभ्रंश का असर, संस्कृत परवर्ती काल में हिन्दी पर अधिक रहा है । इस प्रकार प्रयुक्त धातुएं भी हो सकती हैं ।

मलयालम और हिन्दी में क्रियाधातु के मुख्यत: दो रूप हैं - मूल और यौगिक । साधारणत: व्यवहृत रूप मूलरूप है । जैसे - उठ, चल आदि । यौगिक धातु मूल से बनाए जानेवाले धातु है । इसके तीन भेद हैं - प्रेरणार्थक धातु, नामधातु और संयुक्त धातु ।

---

1. ग्रियर्सन - भारत का भाषा सर्वेक्षण पृ. 166.

1 ·प्रेरणार्थक धातु - मूल धातु से प्रत्यय जोडकर बनाता है । जैसे - उठना - उठाना - उठवाना । 2 नामधातु - संज्ञा से प्रत्यय जोडकर । जैसे - उद्धार - उद्धारना, सुधार - सुधारना । 3 ·संयुक्त धातु यह एकाधिक धातुओं का समुच्चय है । जैसे पढ चुक, कर डाल ।

मलयालम में भी यही विधि है । जैसे - चेय्युक - चेय्यिक्कुक (प्रेरणार्थ क्रिया), उद्धारणं - उद्धरिक्कुक (नामधातु क्रिया), चेय्तु तीर्नु (संयुक्त धातु)

व्याकरण के अनुसार मुख्यत: दो प्रकार की धातुएं हैं । 1 ·अव्युत्पन्न 2 ·व्युत्पन्न । व्युत्पन्न के दो भेद हैं - नाम धातु और धातूपधातु ।

संज्ञा या सर्वनाम से निष्पन्न धातु नामधातु है । जैसे - वेलुप्पिक्कुक, नोलिक्कुक । हिन्दी में नामधातु कम मिलती है । जैसे - स्वीकारना, अपनाना आदि । मलयालम में इनकी अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग है । अत: इनके अनुवाद में हिन्दी संयुक्त क्रियाएं मिलती है ।

धातूपधातु की रचना संयुक्त क्रियाओं की जैसी है । मलयालम में तो ये बहुत कम मिलती हैं । इनके बदले संयुक्त क्रियाएं मिलती हैं -

उठना - एषुन्नेल्क्कुक (एषुक + निलक्कुक)

पधारना - एषुन्नळ्ळुक (,, + अरुळुक)

इनके अलावा अर्थ के आधार पर समस्त धातु (उठबैठ, चलफिर), आवृत्त धातु (फड - फडाना, झटपटाना) , पुनरुक्त धातु (करना-धरना, बोलना-चालना) आदि भी हिन्दी में चर्चित है, जो भाषाई प्रकृति के हैं [1]।

संयुक्त क्रिया

ये दोनों भाषाओं में प्रचलित है, महत्वपूर्ण भी । हिन्दी तथा मलयालम के कुछ विशेष प्रयोग में ये आते हैं । अनेक सहायक क्रियाएं इनकी रचना में पोषक रहती हैं । हिन्दी में पडना, होना, लगना, सकना, चाहिए, चुकना, उठना, बैठना, जाना, डालना, देना, लेना आदि इनमें प्रमुख हैं । संयुक्त क्रियाओं के दो रूप चर्चित हैं[2]। 1 ·नामबोधक (मैं ने अच्छा किया) 2 ·द्विरुक्ति क्रिया (आ-आकर समाप्त किया)

हिन्दी के संयुक्त क्रियाओं को मुख्यत: पूर्वपद प्रधान (उदा: चल पडना) उत्तर पदप्रधान (उदा: भाग आया), दोनों पदप्रधान (उदा: पढा-लिखा), तथा अन्य पदप्रधान (उदा: चल बसा) में विभक्त कर सकते हैं[3]। इनमें चौथा लाक्षणिक या अनुवाद की दृष्टि से प्रमुख और अपेक्षाकृत अधिक समस्याओं से युक्त है । क्यों कि नवीन अर्थ छटा इनकी विशेषता है । इसका सूक्ष्मविधान अनेकस्तरीय अर्थ द्योतित करता

---

1 ईश्वरवार्यर - परिभाषयुटे प्रश्नङ्ङळ पृ ·50 ·

2 रामचुराम गुप्त - सरल हिन्दी व्याकरण पृ ·204

3 ·कन्हैयालाल शर्मा - भाषा फरवरी 1974 पृ ·7

है, जिसका शब्दानुवाद तथा सीधा अनुवाद संभव नहीं होता । संयुक्त क्रियाओं का स्वरूप अर्थनियन्त्रक तथा अर्थप्रसारक दोनों होता है[1]।

कृदन्त

क्रियाधातु से प्रत्यय जोडकर कृदन्त बनाया जाता है और अन्य शब्दों से जोडकर तद्धित भी । हिन्दी में अरबी, फारसी जैसी भाषाओं का प्रत्यय भी इसकेलिए प्रयुक्त किया जाता है । कृदन्त कर्तृवाचक, भाववाचक, पूर्णकालिक, वर्तमानकालिक तथा भूतकालिक हो सकते हैं । जैसे - पियक्कड़(कुटियन) -कर्तृवाचक

चलके(नटन्नु) -पूर्णकालिक

चलता(नटक्कुन्न) -वर्तमानकालिक आदि ।

कृदन्तों का रूप ऐसा है जिसमें विशेषण और क्रिया दोनों की विशेषताएं सम्मिलित है[2] ये अकर्मक व सकर्मक हो सकते हैं । इनका प्रयोग दोनों भाषाओं में महत्वपूर्ण है साथ ही भाषासंबन्धी असमानताओं से पूर्ण । विभिन्न प्रकार की वाक्यरचना में कृदन्तों की बडी भूमिका रहती है जिनके अनुवाद में अंतर है -

प्रेमचन्द का लिखा हुआ उपन्यास - प्रेमचन्द एषुतिय नोवल

कमरे में आया हुआ साँप - मुरियिल वन्न पाँप ।

अतः मलयालम में कर्ता के साथ प्रत्यय जोडने का प्रयोग नहीं आता[3]। सभी वाक्य कर्तृवाच्य में ही आते हैं । कृदन्तों के बार-बार प्रयुक्त वाक्यों के अनुवाद में भी अर्थानुसार वाक्यगठन की माँग है । जैसे -

छाया बढती बढती नज़र आती है निषल वलुतायिवरुन्नतायि काणुन्नु ।

क्रिया विभाग

मोटे तौर पर क्रियाओं के दो विभाग हैं - सुबन्त और तिगन्त । संज्ञा या विशेषण से पुरुष और लिंगवचन प्रत्यय लगाकर सुबन्त क्रिया बनायी जाती है । वस्तुस्थिति कथन को लक्ष्य में रखकर रचित क्रियाएं सुबन्त हैं जिनमें काल को अपेक्षा नहीं है । हिन्दी में ऐसी क्रियाओं का प्रचलन नहीं है[4]।

तिगन्त क्रियाओं के 'ए', 'ए' और 'ओ' प्रत्यय हैं । इनमें काल, पुरुष, लिंग, वचन आदि भेद देखने को मिलता है । इनके अनुवाद में प्रयोगात्मक अंतर है । इसलिए आर्थिक धरातल पर इनका विश्लेषण ठीक रहेगा ।

मलयालम में क्रिया को कुलमिलाकर चार विभाग में बाँट दिए हैं तो हिन्दी में केवल दो विभाग हैं । रूप और प्रधानता के अनुसार क्रियाविश्लेषण करने की रीति

1. कन्हैयालाल शर्मा - भाषा फरवरी 1974 पृ.9.
2. ज.म.दीमशित्स - हिन्दी व्याकरण की रूपरेखा पृ 101
3. ईच्चरवार्यर - परिभाषयुटे प्रश्नङ्ङळ पृ.47
4. ए.एल.राववर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ.166.

हिन्दी में नहीं है ।

अर्थ के अनुसार क्रियाओं के सकर्मक और अकर्मक दो भेद हैं । हिन्दी में इनकी रचना की कुछ खासियत है । कुछ क्रियाएँ अकर्मक होने पर भी सकर्मक की सी रचना होती हैं, साथ साथ अन्य क्रियाएँ सकर्मक होने पर भी अकर्मक । ला, बोल भूल, सक, चुक, आदि अकर्मक है, तो दौड़ना इत्यादि सकर्मक हैं ।

व्युत्पत्ति के अनुसार मलयालम में 'केवल' और 'प्रयोजक' दो भेद हैं । हिन्दी में ये ही 'मूल' और 'प्रेरणार्थक' हैं ।

रूप के अनुसार मलयालम में 'कारित' और अकारित' दो भेद हैं । केवल में प्रयोजन का एहसास कारित में है तो शेष अकारित हैं । केवलक्रिया के साथ 'कु' प्रत्यय जोड़कर कारित धातु की रचना करती है । जैसे - चेर्क्कुक (मिलाना), परक्कुक (उड़ना) ।

प्रधानता की दृष्टि से विभक्त क्रियाओं में 'करोति' पूर्णक्रिया है, इसे हिन्दी में 'समापिका क्रिया' कहा जाता है । 'कुरवल' अपूर्णक्रिया है, जो असमापिका' क्रिया है । मलयालम में इन्हें 'पट्टुविना' कहलाता है । नामविशेषणवत् पट्टुविना 'पेरेच्चं है, इसी प्रकार क्रिया विशेषणवत् पट्टुविना 'विनेयेच्चं' है ।

पूर्णक्रिया तथा विनेयेच्चं दोनों का रूप भूतकाल में एक जैसा ठहरता है । अंतर तो इतना है कि अंत में उकार रहने से पूर्णक्रिया रूप है, नहीं तो विनेयेच्चं[1]। जैसे - नटन्नु (चला) - पूर्णक्रिया , नटन्नं (चलकर) - विनेयेच्चं । हिन्दी में इनका सहायक क्रिया रूप है ।

प्रकार

क्रिया के अवस्थाभेद का निर्धारण 'प्रकार' से होता है । मलयालम में इनके 4 और हिन्दी में 5 भेद बताए गए हैं । मलयालम में - निर्देशकं, नियोजकं, विधायकं और अनुज्ञायकं-हैं , हिन्दी में - निश्चयार्थ, संभावनार्थ, संदेहार्थ, आज्ञार्थ और संकेतार्थ । उदा:

1 . निर्देशक - यह क्रिया का साधारण रूप है ।
   रामन् रावणने कोन्नु राम ने रावण को मारा ।
2 . नियोजक - यह आज्ञा रूप है । इसके प्रत्यय मलयालम में 'आट्टे, अट्टे, इन' आदि है । नटक्किन (चल), परयिन(कह) आदि ।
3 . विधायक - आदेश या शील रूप है । मध्य प्रत्यय लेकर 'एंण्ट्, एंणं, एंण्टु' आदि आते हैं परयेण्ट कार्यं (कहने की बात), चेय्येण्ट जोलि - करने का काम ।
4 . अनुज्ञायक - इच्छा, प्रर्थना, शुभकामना, अनुमति आदि व्यक्त करने केलिए इसकी रचना होती है । सामान्यत: 'आं' प्रत्यय प्रयुक्त होता है । जैसे - परयां (कहूँ), पोकां (जावें) ।

---

1 वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम पृ. 229

प्रयोग

कर्तरिप्रयोग की महत्ता मलयालम में है, जहाँ हिन्दी में तीनों प्रयोगों की। इनकी चर्चा वाच्य के संदर्भ में है।

पेरेच्च

मलयालम में पूर्ण क्रिया से जुडनेवाले नामांगज 'पेरेच्च' कहलाता है। पेरेच्च नियोजक प्रकार में प्राय: नहीं आता [1]। साधारणत: मलयालम में पूर्णक्रिया से 'अ, उ' प्रत्यय जोडकर 'पेरेच्च' की रचना होती है। सीधी वाक्य रचना केलिए पेरेच्च का प्रयोग सुविधाजनक है। विभिन्न कारकीय रूपों केलिए इनका प्रयोग है -
कर्ता - कटिक्कुन्न पट्टि - वह कुत्ता जो काटता है।
कर्म - उण्णुन्न चोरु - वह चावल जो खाया जाता है।
करण - एषुतुन्न पेन - वह कलम जिससे लिखा जाता है।
साक्षि - वषि चोदिच्च पय्यन - वह लडका जिससे रास्ता पूछ लिया था।
स्वामी - कट कोटुत्त आळ - वह व्यक्ति जिससे कर्ज़ लिया था।
अधिकरण - तामसिच्च वीट - वह घर जिसमें रहा है।

अत: हिन्दी में विशेषण वाक्यों का जो क्रिया पद है, वे ही मलयालम में पेरेच्च है। हिन्दी में इन्हें अनुप्रयोगों से व्यक्त किया जाता है।

सहायक क्रिया और अनुप्रयोग

भाषा में क्रिया की संख्या कम होने पर भी सहकारी क्रिया की सहायता से अर्थ वैविध्य संभव होती है। ऐसे प्रयोगों को अनुप्रयोग कहा जाता है। मलयालम और हिन्दी दोनों में अनेकों सहायक क्रियाएँ हैं, जिनसे व्यापार सूचना बिना दिक्कत से दे सकती है। मलयालम में - 'काळ, ईट्टु, वेय्युक, विट्टु, कळ, कोडु, तरु, अतक, इरि, पो, वर्, पोरु, कूट्टु, कषि, और तीरु' - 15 सहायक क्रियाएँ हैं[2] जहाँ हिन्दी में भी 'कर, लिया, दिया, गया, आया, चला, बैठा, पाला, डाला, मारा, देखा' आदि मिलती हैं।

प्रत्येक प्रयोग में सहायक क्रिया का विशेष अर्थ होता है। यह मुख्य क्रिया के साथ जुडी रहती है। लाक्षणिक, मुहावरेदार प्रयोगों के चलन में इनसे काफी सहायता होती है।

मलयालम में कहीं-कहीं मुख्य क्रिया के साथ ही नहीं, उसके बीच में भी सहप्रयोग मिलता है - वह कहाँ जाएगा - अवनेङ्ङु पोकान ?

उपचार वक्रता, सम्मानसूचना आदि केलिए भी अनेक क्रियाएँ देशी प्रभाव के साथ प्रस्तुत होती हैं - अपेक्षिच्चु काळ्ळुन्नु - सविनय प्रार्थना कर रहा हूँ।

हिन्दी में एकाधिक क्रियाओं का सामासिक रूप सहज है। मलयालम में यह प्रत्ययविधान है। 'आया करना', 'चला जाना' आदि उदाहरण हैं। भिन्नार्थ

---

1. ए. आर. राजराजवर्मा - मध्यम व्याकरण पृ. 91
2. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवाद: भाषाएँ, समस्याएँ पृ. 187

में काल रचना केलिए अनुप्रयोग प्रस्तुत कर सकते हैं ।

अनुप्रयोग

मलयालम में सभी क्रियाएं कृदन्तों से बनती हैं । कृदन्तरूप पोषित करने केलिए सहायक क्रियाओं का प्रयोग है । हिन्दी में इनका सूक्ष्म वर्गीकरण जो किया गया है, मलयालम में नहीं । इन्हें अनुप्रयोग ही माने जाते हैं । इनके मुख्यतः 4 भेद हैं

1 .कालानुप्रयोग - काल विशेष सूचित करने केलिए इस प्रयोग में रचना होती है जिससे तुलना का बोध भी मिलता है ।

एक आदमी आया हुआ है - ओराळ वन्निट्टुण्ट् ।

2 .भेदकानुप्रयोग - यह निम्नता, लघुत्व आदि की सूचक क्रियाओं का सम्मिलन है । पूर्वप्रयुक्त धातु की विशेषता रहती है ।

क्षमा याचिच्चुकोण्टिरुन्नु - माफी की प्रार्थना कर रहा है ।

3 .पूरणानुप्रयोग - मलयालम में विशेष प्रकार की कुछ धातुएं हैं जिनका प्रयोग विशेष काल तथा प्रकार की सूचना केलिए होती है । इन्हें 'खिल धातु' कहा जाता है । जैसे - 'एन्, उळ, वेण, अल्, इल्, तक्, आदि । इनसे युक्त प्रयोग पूरणानुप्रयोग है ।वह यहां है - अवन् इविटे उण्ट् ।

4 .निषेधानुप्रयोग - निषेध की सूचना है । मुख्य क्रिया से प्रत्यय जोडकर इस प्रयोग की रचना मलयालम में मिलती है । हिन्दी में वैविध्य है । पूरणानुप्रयोग तथा निषेधा-नुप्रयोग की रचना में आनेवाला अंतर दोनों भाषाओं के प्रयोगवैविध्य का उदाहरण है । हिन्दी के तात्कालिक, आसन्न व अपूर्ण कालरचना मलयालम में सहकारी क्रिया की (अनु-प्रयोगवत्) होती है । मलयालम अनुप्रयोग का धर्म हिन्दी के उपसर्ग के समान भी होता है । अन्य शब्दों में इसका रूपबदलाव होता है, प्रयोगरीतियां बदलती हैं[1]। मुख्य अंतर इतना है कि वाक्य में स्थानपरिवर्तन होता है[2]। इसप्रकार का सूक्ष्म व्याकरणिक अंतर अर्थप्रसारण को रोक नहीं सकता ।

विभिन्न अर्थ द्योतित करने में अनुप्रयोग की भूमिका महत्तम है । मलयालम में पूर्वकालिक कृदन्त के साथ सहायक क्रियाएं जुडती हैं, हिन्दी में धातु या मुख्य क्रिया के साथ । एक ही वाक्य में सभी प्रयोगों से युक्त अर्थ भी मिल सकता है । जैसे - पणि तीर्न्निट्टुण्टायिरुन्नु - काम बनाया जा चुका था । इसमें पणियुक - बना, मुख्यक्रिया है, तीरुक - चुक, भेदकानुप्रयोग है, उंटु - है, कालानुप्रयोग है, आयिरुन्नु - हुआ , पूरणानुप्रयोग है ।

अनुप्रयोगों की रचना अर्थ का बलवती आकांक्षा का परिणाम है । इसलिए व्याकरणिक पक्ष से इनका व्यावहारिक पहलू महत्त्वपूर्ण है ।

विशेष प्रयोग

हिन्दी क्रियाओं में नवीनतम उपविभागों का विभाजन हुआ है जिनमें

1 .वासुदेव भट्टतिरि - नल्ल मलयालम पृ 20

2 . एम .एस .आन्द्रोनोव - द्राविड़ भाषकळ पृ .161

सहायक क्रिया (हूँ, है, था), रंजक क्रिया (सकना, चुकना, उठना, करना), पूर्वकालिक क्रिया (जाकर बैठा), तत्कालिक क्रिया (लगा), क्रियार्थक क्रिया(लेने आया) आदि भी हैं । इसी प्रकार सूक्ष्म अध्ययन करें तो आरंभबोधक (लगना), अवकाश बोधक (देना), समाप्ति बोधक(चुकना), शक्ति बोधक(सकना), विवशता बोधक(पडना), नित्यता बोधक(रहना), इच्छा बोधक(चाहना), तत्काल बोधक (डाल, दे) आदि भी व्याकरणिक हैं । संदर्भाश्रित अनुवाद केलिए इनका आकलन सहायक है ।

तत्सम क्रियाशब्दों में भाषाई प्रत्यय लगाकर क्रियारचना होती है , जिसमे समानताएँ हैं - रूप और अर्थ की दृष्टि से । जैसे - सेवा करना - सेविक्कुक
वर्णन करना - वर्णिक्कुक

क्रियाओं की निषेध रचना में मलयालम में वैविध्य मिलते हैं - वन्निल्ल (नहीं आया), वरुन्निल्ल (नहीं आता), वरेण्टा(मत आना), वरुरुतु(मत आओ), वराते(आते बिना), वराल्त(आये बिना), वरेण्टात्त (नहीं आने का), वरान् वय्यात्त (नहीं आ सकने का), वरुताल्त(मत आने का) आदि ।

उसी प्रकार प्रत्येक भाषा में ऐसी क्रियाएँ होती हैं, जो भाषा की होने के साथ , विशेष संज्ञा से जुडती है । जैसे - कुत्ता भौंकता है - पट्टि कुरक्कुन्नु ।
मेघ गरजता है - मेघं गर्जिक्कुन्नु ।
घोडा हिनहिनाता है - कुतिर किनक्कुन्नु ।

संज्ञा को गुणीभूत करनेवाले इस प्रकार के अनेक प्रयोग हर भाषा में होते हैं ।

क्रिया के अनुवाद में व्यावहारिक वैषम्य यह है कि देश-काल वातावरण से जुडी हुई क्रियाओं का अर्थ लक्ष्यभाषा में मिलना कठिन है । अर्थ संबन्धी क्रिया मिलने पर भी यह ज़रूरी नहीं है कि अर्थ समान ही हो । उदाहरण केलिए 'एषुन्नळ्ळुक' का हिन्दी में 'पधारिए', 'तशरीफ रखिए', 'आ जाईए' जैसे शब्द मिलते हैं । इनमें कौन सा शब्द सटीक निकलेगा - यह समझना विवेक और क्षमता का लक्षण है ।

सांस्कृतिक परिवेश से युक्त जितनी सारी क्रियाएँ हैं, उनका अनुवाद 'पाद टिप्पणी' की सहायता से ही संभव हो सकता है । जाति, उपजाति, धर्म संबन्धी अनेक क्रियाएँ उपचार वक्रता आदि संबन्धी है जिनके सही परिचय में भाषा लेखक तक पूर्ण ज्ञान नहीं रखता तब अनुवादक का स्थिति अलग नहीं हो सकती है । सांस्कृतिक विशेषता का गहन परिचय और पहचान के साथ मूल लेखक से विचारविमर्श भी इस प्रकार के अनुवाद के संदर्भ में सहायक सिद्ध लगता है ।

कालरचना में क्रिया का रूप

नियम होते हुए भी रचना में इनका प्रयोग ढीला पडता है । चिरन्तन बोधक क्रियाओं का प्रयोग सामान्यतः वर्तमान या भविष्यत् काल में होता है । व्याकरणिक अंतर अर्थभेद पर बाधक होते हुए भी व्यावहारिक उपयोग पर महत्व देता है ।

व्याकरणिक दृष्टि से मलयालम और हिन्दी की कालरचना में समानताएँ है, लेकिन उसका विभाजनक्रम और विशेष विधान मलयालम में नहीं होता ।

वर्तमान काल

व्याकरण के अनुसार इसके तीन भेद हिन्दी में हैं - सामान्य, संदिग्ध और तात्कालिक । सर्वाधिक प्रयोग सामान्य का मिलता है । चिरन्तनता की सूचना भी मलयालम में इससे होती है ।

गाय दूध देती है - पशु पाल तरुन्नु ।/ पशु पाल तरुं ।

अर्थात् सार्वकालिकता बोधक वाक्य मलयालम में सामान्य भविष्यत् में भी हो सकता है ।

काल प्रत्यय हिन्दी में लिंगवचनानुसार बदलते है, मलयालम में नहीं । अतः हिन्दी से मलयालम अनुवाद इस दृष्टि से सरल है जबकि उल्टे में मुश्किल । आदर सूचक तथा बहुवचन की रचना के अनुसार हिन्दी क्रिया रचना में आनेवाला अंतर मलयालम में नहीं है ।

अच्छन् परयुन्नु - पिता कहते हैं ।

प्रेमचन्द नल्ल कलाकारनाणु - प्रेमचन्द अच्छे कलाकार हैं ।

तात्कालिक वर्तमान - निरन्तरता की सूचना देनेवाले इस काल की रचना मलयालम में संभव है, लेकिन कम व्यवहृत है - जैसे - वह आ रहा है - अवन् वरुन्नु । इसका अर्थ 'वन्नुकोण्टिरिक्कुन्नु' है ।

संदिग्ध वर्तमान - इसका यथावत् प्रयोग मलयालम मे भी है । जैसे -

राम आता होगा - रामन् वरुन्नुण्टावां ।

भूत काल

वर्तमान काल के समान भूतकाल में भी सामान्य भूत मलयालम में अधिक प्रचलित है । सकर्मक वाक्यों की रचना का अंतर हिन्दी में ध्यान रखने का है ।

राधा गयी - राध पोयि ।

राधा ने रोटी खायी - राध रोट्टि तिन्नु ।

संदिग्ध भूत - राम ने खाया होगा - रामन् तिन्निट्टुण्टावां ।

वह गया होगा - अवन् पोयिट्टिण्टावां ।

पूर्ण भूत - मैं ने खाया था - ञान तिन्निरुन्नु ।

सीता गयी थी - सीत पोयिरुन्नु ।

आसन्न भूत - उसने कहा है - अवन् परञ्ञु ।

वह बैठी है - अवळ इरुन्नु ।

अतः अनुप्रयोग या कृदन्त की सहायता से इनका अनुवाद होता है । हिन्दी में प्रचलित हेतु हेतुमद् काल की रचना मलयालम में नहीं है । हिन्दी में इसका महत्वपूर्ण स्थान और स्वरूप है । विभाजक अव्यय या समुच्चय जोड कर मलयालम में अनुवाद संभव है ।

अगर मैं दौड़ा तो गाड़ी मिली होगी - ञान ओटियिरुन्नेङ्किल वण्टि किट्टियिट्टु - ण्टावुमायिरुन्नु ।

इसका अर्थ यह भी है कि 'ञान ओटिल्ल, अतुकोण्ट्टु वण्टि किट्टियिल्ल' (मैं नहीं

दौड़ा, इसलिए गाड़ी नहीं मिली ।'

भूतकालिक प्रयोग में अन्य अंगों का प्रभाव बहुत भ्रमात्मक हो जाता है । मलयालम में मिलनेवाली क्रियारचना अत्यन्त व्यापक और भिन्नार्थवाची है । हिन्दी के संदिग्ध, आसन्न, पूर्ण, अपूर्ण आदि की सूक्ष्म रचना का अंतर दिखाना मलयालम में कठिन है, एक हद तक अनावश्यक भी । सामान्य भूत में ही अर्थसंप्रेषण संभव व अर्थ युक्त रहता है । लेकिन अनेकरूपी क्रिया रचना मलयालम में मिलती है जिनका अनुवाद हिन्दी में कठिन है । जैसे - पठिक्कामायिरुन्नु , पठिच्चुकोण्टिरुन्नु , पाठिच्चेने , आदि ।

भविष्यत् काल

भविष्य की सूचना भी मलयालम में सामान्य कथन तथा सामान्य वर्तमान में दिया जाता है । आज्ञा, उपदेश, स्वीकृति आदि के संदर्भ में भी ऐसा प्रयोग है । हिन्दी में सामान्य और संभाव्य भविष्यत् की अलग अलग रूपरचना मिलती है ।

मैं आऊँगा - ञान वरुं ।

सीता गाएगी - सीत पाटुं ।

संभाव्य भविष्यत् का हिन्दी में प्रचलन है । मलयालम में इसका नियोजक प्रकार में अभिव्यक्ति मिलती है ।

मुझ पर क्षमा करें - एन्नोटु क्षमिक्कणे ।(क्षमिच्चालुं)

मलयालम में विभिन्न अर्थ की सूचना केलिए भविष्यत्काल के शुद्ध भावि (ञान पोकुं - मैं जाऊँगा), अवधारक भावि(अवन् नाळे वरुं - वह कल ही आएगा), और शील भावि(एन्नुं नटक्कान पोकुं - रोज़ चलने जाता है) आदि तीन भेद माने जाते हैं । इनका केवल व्याकरणिक अंतर है ।

हिन्दी - मलयालम काल रचना और काल संकल्पना में ज़्यादा अंतर नहीं है । ध्याना देने की बात है कि अर्थप्रसारण व्याकरणिक नहीं होता । व्यावहारिक प्रयोग व अर्थ संपन्न अभिव्यक्ति की दृष्टि से सामान्य भविष्यत्, सामान्य वर्तमान तथा सामान्य भूत ही प्रमुख रूप में प्रयुक्त है ।

विशेषण

प्रत्येक भाषा की अनुकूल परिस्थितियों में जीवित, उपयुक्त भाषाई अंग के रूप में सर्वनामों का प्रयोग विशिष्ट है । इनका , संज्ञा या विशेषण के अनुसार रूप परिवर्तन होता है । अन्योन्याश्रित अंगों में एक के रूप में ही नहीं, स्वतन्त्र या व्याकरणिक अवयव के रूप में भी विशेषण का महत्व है ।

कई विद्वानों के मतानुसार द्रविड़ भाषाओं का ज़्यादातर विशेषण अपने आप में नामरूप है । क्यों किअनेक वस्तुओं की पहचान विशेषण की रचना से युक्त पाती है ।

हिन्दी में ऐसा होते हुए भी विशेषण के लिंगवचनानुसार परिवर्तन के कारण अलग पहचान है । साथ ही अंग्रेज़ी अनुकरण में नाम और क्रिया के संदर्भ में विशेषणों को अलग-अलग जानने की रीति भी हिन्दी की स्वायत्त है ।

कई शब्द ऐसे भी हैं, जिनके विशेषणार्थ होते हुए भी वाक्य में विशेषण की भूमिका नहीं निभाते । इसलिए सामान्यत: मलयालम के विशेषण शब्दों को 'भेदक' कहलाता है । भेदक का रूप है - विशेषण शब्द के साथ 'पेरेच्चं' जोडने से उत्पन्न संयुक्त रूप । कभी कभी प्रत्यय भी इसीलिए प्रयुक्त किया जाता है । भेदकों में ज़्यादातर नामविशेषण होता है[1]। अंग्रेज़ी, संस्कृत जैसी भाषाओं में विशेषण, शब्द, वाक्यखंड या उप वाक्य के रूप में होता है, लेकिन मलयालम के 'पेरेच्चं' को छोडकर शेष विभावकों में वाक्यखंड ही विशेषण होकर आते हैं, न कि शब्द[2]।

अर्थ में 'पेरेच्चं' हिन्दी का विशेषण है । लेकिन एक की सांस्कृतिक अस्मिता दूसरे से उसे दूर रखती है । इनकी संरचनात्मक विशेषताएं भी होती हैं ।

नित्यजीवन में प्रयुक्त अनेक विशेषण शब्द ऐसे हैं, जिनको समानार्थी शब्द अनुवाद में ढूंढना कठिन है । ये सांस्कृतिक परिवेश से जुडे हुए हैं । जैसे - मलयालम में - पोन्निन कुटम्, तङ्कक्कुटम, कळ्ळक्कुट्टन । हिन्दी में - बारहमासा, षड्ऋतु ।

इनके परस्पर अनुवाद में कभी एकाधिक शब्द से अर्थप्रसारण होता है । साथ ही इन शब्दों के अर्थ विशेष प्रवृत्ति या प्रक्रिया से जुडे हुए हैं । अत: हिन्दी और मलयालम में अलग-अलग स्तर के विशेषण शब्द मिलते हैं ।

मलयालम में विशेषणों की रचना केलिए प्रयुक्त प्रमुख दो अव्यय हैं - 'आय' और 'उळ्ळ' । ये सभी शब्दों के साथ प्रयुक्त नहीं होते । इनके समस्तपद भी व्यवहार में हैं । जैसे - मिटुक्कन (होशियार बच्चा) - मिटुक्कुळ्ळ कुट्टि (होशियार बच्चा) ।

हिन्दी में मुख्यत: 5 भेद मिलते हैं, तो मलयालम में 7 भेद चर्चित हैं ।

1 शुद्ध विशेषण शब्द - ये संयुक्त शब्द हैं -जैसे - कन्मणि, सन्मार्ग ।

2 सार्वनामिक - अन्य पुरुष सर्वनामों से व्युत्पन्न रूप हैं । उदा - आ चित्र(वह चित्र) ई दृश्य (यह दृश्य) । इनका 'ऐसा', 'वैसा' जैसे संयुक्त रूप हिन्दी में और 'एन', 'निन' जैसे शब्दांश मलयालम में व्यवहृत हैं ।

3 यौगिक - इनका खूब प्रयोग हिन्दी में है जिन्हें सर्वनाम में प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं । जैसे - वैसा, जैसा । मलयालम में दूसरे शब्दों से काम चलता है ।

4 संख्यावाचक - इनके हिन्दी में निश्चित और अनिश्चित दो भेद हैं । जैसे - कई (अनिश्चित), दो (निश्चित) ।

---

1 ए आर राजराज वर्मा - मध्यम व्याकरण पृ 115 (भेदक के दो भेदों में दूसरा विनेच्चं है, जिसका प्रयोग मलयालम में क्रियाविशेषणवत् है ।)

2 वासुदेव भट्टतिरि - भाषाशास्त्रम् पृ 2?0

'एक' सार्वनामिक है, संख्यावाचक भी । अन्य संख्यावाचक भी कभी कभी ऐसा होता है । साधारणत: ऐसे शब्द बहुवचन हैं तो विशेषण होते हैं, एकवचन है तो संख्यावाचक ।

5 • परिमाणवाचक - दोनों भाषाओं में मिलते हैं । उतना(अत्र), इतना(इत्र) आदि उदाहरण हैं ।

6 • विभावक - हिन्दी में ये गुणवाचक के अन्तर्गत आते हैं । इन्हें ही प्रत्यय लगाकर मलयालम में प्रयुक्त किया जाता है ।

7 • नामागज - ये ही भूतकालिक कृदन्त विशेषण है । जैसे - वेलुत्त पशु - सफेद गाय
मरिच्च रामन् - मरा हुआ राम

8 • क्रियागज - ये क्रिया विशेषण शब्द हैं ।
उरक्के परयुन्नु - जोर से बोलता है ।
मुरुक्के पिटिक्कू - दबकर संभालो ।

इन सबको मिला कर सामान्य रूप में गुणवाचक, संख्यावाचक और सार्वनामिक बताने की रीति भी है[1]।

भाषा की प्रवृत्ति के अनुसार ऐसे अनेकों विशेषण दोनों भाषाओं में मिलेंगे, जिनका अपना अपना रूप मिलता है । जैसे -

पका चावल - पाकमाय अरि (भात)
पका फल - पषुत्त पष़ं
सूखा फूल - वाटिय पूवं
सूखी खेत - वरण्ट वयल

संज्ञाओं में प्रत्यय लगाकर विशेषण बनाने की रीति दोनों भाषाओं में है । इतिहास - ऐतिहासिक, कल्पना -काल्पनिक आदि ऐसे हैं । मलयालम की खासियत यह है कि इसकी समासशब्दरचना विशेषणरचना में सहायक है ।

बेंचिन मूल - बेंच का कोना, पाटुन्न कुट्टि - गानेवाला बच्चा ।

भावग्रहण के साथ भाषाई प्रवृत्ति यहाँ अनुपेक्षणीय है । मलयालम - हिन्दी विशेषण शब्द के अनुवाद की समस्याओं को मुख्यत: तीन वर्गों में बाँट दिया गया है - भावाश्रित, रूपाश्रित तथा व्याकरणिक[2]।

पर्यायवाची शब्दों की समस्या मुख्यत: विशेषणों के चयन में आते हैं । साथ ही निर्धारित शब्दों की विधि भी चलाना है । तत्सम शब्दों के साथ विदेशी शब्द भी विशेषण होकर साधारण बातचीत में प्रयुक्त होते रहते हैं ।

अनुवाद में समान रूप के विशेषण शब्द मिलते हैं, अर्थ के आधार पर चुनना मात्र आवश्यक है । जैसे - अभिमानी (मल) - स्वाभिमानी (हि)
शाप्पाट्टुरामन् - पेटू

---

1 • एन • ई • विश्वनाथ अय्यर - अनुवाद: भाषाएं, समस्याएं पृ • 153 •
2 वही पृ • 154

नाप, तौल तथा अनिश्चित संख्यावाचक विशेषणों के प्रयोग में यही प्रणाली है । जैसे - कालण - पच्चीस पैसे ।

संबन्ध बताने के शब्दों का रूप बदलाव स्थानीय है । 'बडी दीदी' को 'चाची' कहने का कुछ प्रदेश है । इनके अनुवाद में भाषा के प्रादेशिक स्वरूप की पहचान आवश्यक है । एक शब्द के बदले संबन्धवाची होकर एकाधिक शब्द आने की प्रणाली सामान्य भी है ।

लिंगान्वय की बात कट्टर नहीं है इसलिए कहीं कहीं भ्रमात्मक होती है - सुन्दर लडकी - सुन्दरियाय पेणकुट्टि , अच्छी लडकी - नल्ल पेणकुट्टि ।

हिन्दी विशेषण शब्द, विशेष्य केलिंग वचनानुसार प्राय: बदलता है । विशेष्य के बाद प्रत्यय आने पर विपर्यय रूप बन जाता है । उदा: बडे लडके से कहा ।

मलयालम संख्यावाचक शब्दों में 'नो' संबन्धी विभिन्न रूपों का, विशेषणार्थ में प्रयोग कुछ समस्या का विषय है । यह भाषा की समस्या है, न कि अनुवाद मात्र की । शेष शब्दों से साढे, पाव, ढाई आदि की रचना भी मलयालम में काफी वैज्ञानिक लगती है । अपूर्ण संख्यावाचक पहले और पूर्ण संख्यावाचक बाद में बताने का विधान है ।

तर - तम भावों की सूचना केलिए विशेषण रूप दोनों भाषाओं में नहीं है । मलयालम में 'काळ',' एँरे' आदि शब्दांश जोडकर और हिन्दी में 'अच्छा' या 'बहुत अच्छा' जोडकर लिखने की प्रणाली है ।

विशेषण बनाने की विभिन्न प्रणालियाँ हैं । डॉ ·विश्वनाथ अय्यर के मतानुसार मुख्यत: 6 रीतियाँ हैं । -

1 ·स्वतन्त्र शब्द - जैसे - बडा (वलिय), छोटा (चेरिय) ।
2 ·संज्ञा या सर्वनाम से तद्धित जोडकर - कीमती (विलयुळ्ळ) ।
3 ·क्रियाधातु से कृत् प्रत्यय जोडकर - आया हुआ (वन्न) ।
4 ·दो शब्द जोडकर - सबसे अच्छा (वळरे नल्ल) ।
5 ·संक्षिप्त रूप - पेट् - (शाप्पाट्टुरामन्)
6 ·विशेषण-संज्ञा का सामसिक रूप - बडी अदालत (मेल कोटति) ।

इन सभी विशेषणों का विविध अर्थ, भाषा की विशिष्ट प्रकृति, स्थानीय प्रभाव, भावात्मक अंतर आदि से उत्पन्न समस्याएं अनुवादक के सामने प्रमुख होती हैं ।

उत्पत्ति की दृष्टि से हिन्दी के विशेषण संस्कृत, अरबी; फारसी, उर्दू और अंग्रेजी के हैं जो मलयालम में मुख्यत: द्रविड मूल के हैं । विशेषणों के अनुवाद में व्याकरणिक समस्या कम है, व्यावहारिक समस्या अधिक । वह भी अर्थ के धरातल पर है । सुपरिचित अनुवादक भी इन शब्दों से जूझता है । इनसे बचने का कोई उपाय नहीं । पाद टिप्पणी एक हद तक उपकारी है । अत: भाषा की प्रकृति बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले अंग होने के कारण विशेषणों का अनुवाद समस्यापूर्ण है, लेकिन भाषा परिवहन और भावपरिवहन में सहायक भी ।

हिन्दी व्याकरण में इसका महत्वपूर्ण स्थान है, जहाँ मलयालम में नहीं। पट्टुविना के दो भेदों में दूसरा है 'विनेयेच्चं' - यही मलयालम में प्रयुक्त क्रिया विशेषण है। लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि विनेयेच्चं क्रियाविशेषण ही हो सकता है। विनेयेच्चं के मलयालम में 5 भेद मिलते हैं। जैसे -

1. मुन विनेयेच्चं - भूतकाल सूचक - आ जाके गया (हि) तिन्निट्टु पोयि(मल.)।
2. पिन विनेयेच्चं - भविष्य सूचक - पोकान् पऱञ्ञु (मल.) जाने को कहा (हि)
3. नटु विनेयेच्चं - केवलक्रिया रूप - परयुक (मल.) कहना(हि.)
4. पाक्षिक विनेयेच्चं - प्रकार सूचक पोकिल (मल) जाते तो (हि.)
5. तन् विनेयेच्चं - अवस्था सूचक - पोकवे (मल.) जाते वक्त (हि.)।

अतः 'नटु विनेयेच्चं' केलिए हिन्दी में क्रियार्थक संज्ञा का प्रयोग है। मलयालम में धातुओं से बनानेवाले क्रियाविशेषण भी प्रचलित है। सामासिक क्रिया विशेषण भी खूब सारे मिलते हैं।

हिन्दी में क्रिया विशेषण की चर्चा महत्वपूर्ण मिलती है। इनका वर्गीकरण तीन आधारों पर विस्तार से किया है - प्रयोग, रूप और अर्थ। इनके अनेकों भेद है। जैसे -

प्रयोग - (3 भेद) - साधारण - जल्दी आओ (वेगं पोकू)।
संयोजन - जब-तब (एप्पोळ-अप्पोळ)।
अनुबद्ध - देखा तक नहीं (कण्टट्टुपोलुं इल्ल)।

रूप - (3 भेद) - मूल - अचानक (पेट्टेन्नु)।
यौगिक - वहाँ (अविटे)।
स्थानीय - वह अपना सिर पढेगा (अवन् अवन्टे तल पठिक्कुं)।

अर्थ के कई उपभेद हैं जिनका अनेक पक्ष भी। उनमें स्थानवाचक, कालवाचक, परिणामबोधक और रीतिवाचक प्रमुख हैं। संस्कृत तथा उर्दू के कई क्रियाविशेषण यथावत् प्रस्तुत करने की रीति हिन्दी में है। उदा - अकस्मात्, अन्यत्र, पुनः, वृथा, वस्तुतः और आखिर, जल्दी, हमेशा, सही आदि।

अविकारी शब्दों के शेष तीन विभागों में संबन्धवाचक, समुच्चयबोधक और विस्मयादिबोधक हैं। मलयालम में द्योतक के दो विभाग हैं - निपात और अव्यय। निपात जो वाचक शब्द के साथ रहकर अर्थबोध देनेवाला है तो अव्यय केवल संबन्ध या अभेद सूचित करता है।
निपात - रामनुं कृष्णनुं वन्नु - राम और कृष्ण आये।
अव्यय - ययाति एन्न राजावुं - ययाति नामक राजा।

व्यापार की दृष्टि से द्योतक के गति, घटकं, व्याक्षेपकं तीन भेद है [1]।

---

1. ए.आर.राजराज वर्मा ने चौथा एक भेद भी माना है - 'केवलं' मध्यम व्याकरणं पृ 119

संबन्धबोधक होकर 'गति' का प्रयोग मलयालम में खूब मिलता है । जैसे -
कल्लुकोण्टेरिञ्ञु - पत्थर से मारा (गति) ।

हिन्दी में समुच्चयबोधक और विस्मयादिबोधक के समानार्थी होकर मलयालम में 'घटक' और 'व्याक्षेपक' आते हैं ।

संबन्धबोधक

संज्ञा या सर्वनाम के विभक्ति के बाद इनका प्रयोग होता है । कभी कभी इनके पहले भी प्रयुक्त मिलता है । उदा - सिवाय उसके, बिना प्रयास के आदि ।

द्योतक के विभागों में सभी संबन्धबोधक गति नहीं होते । कुछ उदा. हैं - रामनेक्कूटाते - राम के बिना, अवरेपट्टि - उनके बारे में ।

मलयालम में 'गति' अर्थपरिष्कार का माध्यम है । अविकारी शब्द होने के कारण इनकी भावार्थता पर महत्व देकर काम चलता है ।

समुच्चयबोधक

मलयालम में इसे 'घटकं' कहलाता है । वाक्यरचना में इसके धर्म के आधार पर इन्हें संयोजक (और - उं), विकल्पबोधक (चाहे, भले ही, यद्यपि - एङ्किलुं), भेदबोधक (यदि, तो, अगर - अतुकोण्टु) जैसे भेद किए गए हैं ।

मलयालम में विकल्पबोधक समुच्चय कभी भी पहले नहीं आते, हिन्दी में आते हैं -
यदि उसने कहा तो - अवन् परञ्ञेङ्किलं ।
उसके होते हुए भी - अवन् उण्टायिट्टुकूटि ।

भेदबोधक समुच्चय हिन्दी में वाक्यखण्डों को जोडता है, मलयालम में इसके उपयोग किए बिना वाक्यरचना संभव है ।
उसने खाया, इसलिए समाप्त हुआ - अवन् तिन्नु तीर्नु ।
समानार्थी योजक मिलना कठिन नहीं है । हिन्दी और मलयालम के समुच्चयबोधक शब्द हैं - और, एवं, तथा (उं), भी (उं, कूटि), या, वा, अथवा, किंवा (ओ, अथवा) कि(एन्नु), पर, परन्तु, किन्तु, लेकिन, मगर (एन्नाल, पक्षे), तो भी, फिर भी (एंकिलुं), इसलिए, सो, अतः, अतएव(अतिनाल, अतुकोण्टु), नहीं तो (इल्लेङ्किल/अल्लेङ्किल), चाहे (आयालुं , क्या-क्या (एन्नालुं), न-न (इल्ल), वरन्, बल्कि (नेरे मरिच्चं), न कि, ताकि, मानो, जोकि (समानार्थी संदर्भानुसार) आदि ।

मलयालम में प्रत्यय जोडने की रीति सरल वाक्यरचना के अनुरूप है । हिन्दी में तो संश्लिष्ट, सम्मिश्र , जहाँ तक संयुक्त और मिश्र वाक्य की रचना आवश्यक ठहरती है । इसकेलिए खास तरह के समुच्चयबोधक शब्द मिलते हैं । ये हिन्दी भाषा के, उसकी शैली के अंग हैं । जो-वह, यहाँ-वहाँ , यदि-तो, जिधर-उधर जैसे

अनेक इनमें आते हैं ।

इन सबका प्रयोग अर्थ को दृष्टि से मलयालम में होता है । हिन्दी के सम्मिश्र वाक्य बिना प्रयास के साधारण वाक्य में गढना मलयालम अनुवादक केलिए सामान्य बात है । लेकिन हिन्दी को रचना में इनका प्रयोगानुसार उपयोग होना चाहिए । कृदन्त या तद्धितान्त को सहायता मलयालम वाक्य संरचना को सरल बनाती है ।

मलयालम और हिन्दी दोनों में समान रूप से प्रयुक्त कुछ संस्कृत अव्यय और निपात है । जैसे - एवं, तथा, अन्यथा, सर्वथा, तथापि आदि । मुहावरेदार प्रयोग भी होगा । उदा :-

मैं स्कूल या कॉलज नहीं जाता - ञान स्कूलिलो कोलेजिलो पोकुन्निल्ल ।
विष खाए तो मृत्यु होगा - विषम् कषिच्चाल मरिक्कुं ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भाषा के तीन आयाम हैं । ध्वनि, व्याकरण और अर्थ । ध्वनि मौलिक पक्ष है, अभिव्यक्ति स्वरूप है । उसे व्यवस्थापक्ष बनानेवाला आधार व्याकरण है जिससे भाषा को परिनिष्ठित रूप मिलता है । व्याकरण को तुलना से अनुवादक भाषाई त्रुटियों के साथ शुद्ध रीतियों को पहचान कर सकता है । यह अनिवार्य भी है । क्यों कि भाषा को शुद्ध रखना कृति के अस्तित्व और जीवन को आवश्यकता है ।

शब्द और शब्दखण्ड भाषाई होते हैं । इनका अनुवाद समस्यापूर्ण रहता है । अत: भाषाई शब्द और प्रयोगवैविध्य उसको प्रकृति और शैली पर आधृत है । अत: व्याकरण के परे आस्वादन और अर्थ के आयामों को बुनावट में सहायक कुछ ऐसे पक्ष है जिन्हें भाषावैज्ञानिक तथा शैलीगत बताए जाते हैं । इस प्रकार के अध्ययन का आधार भाषा का सबसे छोटा अर्थपूर्ण अंग वाक्य है । यही संरचना के तीसरे आयाम का आधार भी है ।

****** ******

तीसरा अध्याय

अनुवाद में हिन्दी और मलयालम वाक्य संरचना

व्याकरणिक तथा भावसंप्रेषण की दृष्टि से भाषा की इकाई वाक्य है। वाक्य का छोटा रूप उपवाक्य, अल्पांगवाक्य आदि से भावसंप्रेषण होता है लेकिन ये व्याकरणिक व संरचनात्मक दृष्टि से अपूर्ण हैं। संदर्भगत आवश्यकता की पूर्ति इनसे हो सकती है। 'आइए', कौन', 'आहे' जैसे वाक्यांग इस तरह के हैं। आकांक्षापूर्ति व पूर्णता की दृष्टि से वाक्य को भाषा का चरम अवयव माना जाता है। कभी कभी व्यापक संदर्भ में इसका प्रोक्ति रूप होता है। अर्थ के विशाल संदर्भ में ग्राह्यता तथा स्पष्टता केलिए प्रोक्तिमूलक वाक्य का उपयोग होता है।

वाक्य अनुवाद की इकाई

वाक्य भाषा का चरम अवयव है इसलिए अनुवाद की इकाई मानने में थोड़ी बहुत सुविधा है। क्यों कि अर्थ और भाव का स्वरूप खंड-खंड होकर उसमें निहित है। गुणों से युक्त वाक्य में साहित्यिक संपन्नता भी है तो उसे समर्थ और श्रुतिमधुर कह सकते हैं। अनुवाद में इसका स्वरूप भाषान्तरित होकर प्रस्तुत होता है। व्याकरणिक रूप से विन्यसित अभिव्यक्ति होने के साथ उसका आन्तरिक रूप और अर्थ-शक्ति होती है। प्राय: वाक्य पूर्ण विचार का द्योतक होता है। उसमें प्रमुख विचार के पूरक-अनुपूरक तत्व मिलते हैं। इसलिए अनुवाद में, पूरे लेखन पर गहन दृष्टि की मांग होती है। क्यों कि आपसी संबन्ध, बुनावट में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अनुवाद में , वाक्य की बाहरी ढाँचा बदल तो सकती है, स्रोत के वाक्य को विचार के महत्व और प्रभावपूर्ण स्थलों का ध्यान रखते हुए एक या एकाधिक खंडवाक्य में ढाल सकता है। विचार वाक्यरचना का मानदण्ड होना चाहिए। शब्दों और वाक्यों में अवधारणाओं का भाषान्तरण ठीक और यथार्थ मेल-तोल पर होना चाहिए। पूरक अनुपूरक विचारों की दृष्टि से यदि अनुवाद करें तो अर्थबोध की कमी नहीं होती। विचार श्रृंखला का अनुवदन होता है, न कि बाहरी रूप का। अल्पांगवाक्य, उपवाक्य और अन्य पोषक तत्व सौन्दर्यात्मक पक्ष के अंग हैं।

अनुवाद में वाक्य की विशेषताएं

आकांक्षा, सन्निधि औरयोग्यता वाक्यार्थज्ञान के कारण हैं। आकांक्षा और योग्यता, भाव या अर्थ से संबद्ध रखते हैं। सन्निधि का संबन्ध शब्दों की रचना से है। सन्निधि से सामान्य तात्पर्य वाक्य में शब्दों के आसपास का संबन्ध है जो अर्थबोध की दृष्टि से करना चाहिए। अनुवाद में भी लक्ष्यभाषा के इन तीनों गुणों से युक्त वाक्य ही ठीक निकलेगा।

वाक्य की सन्निधिपरक विशेषताएं मौलिक लेखन में आवश्यक है । क्यों कि वाक्य या पूरी रचना ही सही, व्यक्ति सापेक्ष है । इसप्रकार की सापेक्ष रचना का, दूसरेव्यक्ति के हाथों से पुनः सृजन तथा पुनः गठन के संदर्भ में लक्ष्यभाषा की सन्निधि की अनिवार्यता है । अतः संरचनात्मक विश्लेषण वैज्ञानिक दृष्टि पर आधृत है । क्यों कि संरचना ही वाक्य का ढाँचा निर्धारित करती है । एक भाषा का असर दूसरी भाषा की संरचना पर पडने का भी यही कारण है ।

संरचना का मतलब केवल शब्दक्रम से नहीं है । उससे बढकर उसका सौन्दर्यात्मिक, व्याकरणिक, भाषाशास्त्रीय व मानवीय महत्व है । फिर भी वाक्यांगों का नियत स्थान होता है । प्रसंग व प्रकरण के अनुसार इनका स्थान हो सकता है । इसे ही भाषा का पदक्रम कहलाता है ।

पदक्रम की दृष्टि से हिन्दी-मलयालम का ही-नहीं, पूरी भारतीय भाषाएं समानताएं रखती हैं । सामान्यतः संज्ञा(कर्ता), कर्म, क्रिया का क्रम चलता है । अन्वय और औचित्य के अनुसार बुनियादी रीति से हटकर भी वाक्यरचना होती है । आख्या का आख्यात से अथवा मुख्यशब्द का अन्य अवयवों से लिंग, वचन, कारक और पुरुष की दृष्टि से समानताएं होनी चाहिए - यही अन्वय है । इसके बिना वाक्य व्याकरणिक दृष्टि से भद्दा निकलेगा । हिन्दी की तुलना में मलयालम में अन्वय की शर्तें कम हैं, क्यों कि क्रियारूप सिर्फ काल रचना में परिवर्तित होता है ।

हिन्दी में अन्वय के बिना व्याकरणिक व्यवस्था बदल जाएगी और भाषा क्रमविहीन व अर्थविहीन हो जाएगी । इस दृष्टि से अन्वय को बनाए रखना, भाषा को, उसकी संरचना को बनाए रखना है । परवर्ती भाषा विकास से हिन्दी व मलयालम दोनों भाषाओं पर विभिन्न भाषाओं का न्यूनाधिक प्रभाव पडा है । फिर भी अपनी अलग झलक बनाए रखने का प्रयास इस प्रकार की संरचनात्मक खासियत से हुआ है । जिसकेलिए अच्छे वाक्य के पदक्रम का नियम बनाए हैं[1]। वैयाकरणों द्वारा निर्धारित ऐसे नियम भाषा के व्याकरणिक तथा सौन्दर्यात्मक दोनों पहलुओं को स्पष्ट करते हैं ।

अन्वय से वाक्य में उद्देश्य तथा विधेय के प्रत्येक अंगों का स्थान और परिचय दे सकता है । बोलचाल की तथा अन्य अनौपचारिक संदर्भों में, इसका घुमाफिराकर अर्थरहित क्रम चलता है । अर्थसूचना मात्र आख्या और आख्यात की भूमिका नहीं है, उसमें व्यवस्था को महत्ता है । अनियमित विन्यास के कारण आशय में भद्दापन, अस्पष्टता, शिथिलता, जटिलता, भ्रामकता आदि आ जाती है । जो भाषा पर लगाम ही नहीं लगाते, उसको गला भी घोंटती है ।

केवल नियमों के पालन से कोई भी व्यक्ति अच्छे रचयिता नहीं हो सकता । उसकेलिए अनेकस्तरीय ज्ञान और कुशलता चाहिए । अतः मूल रचना की तरह अनूदित

- -

1. श्री शरण : अच्छी हिन्दी, सुन्दर हिन्दी पृ. 210. और जी.एन.पणिक्कर : मलयालत्तिले पदबन्धरचना पृ.320.

कृति में भी निम्नलिखित तत्व अनुपेक्षणीय हैं ।

सार्थक एवं उपयुक्त शब्दों का चयन, सरलता, भावपूर्ण शब्दयोजना, प्रभावमयता, सामसिकता, उपयुक्त आलंकारिक योजना, अप्रचलित शब्दों का त्याग, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रसंगानुकूल प्रयोग ।

वाक्यसंरचना : प्रकार

वाक्यरचना की दृष्टि से वाक्य के 3 प्रकार हैं - साधारण वाक्य, (चूर्णिका) मिश्र वाक्य (संकीर्णकम्), संयुक्त वाक्य (महावाक्य) ।

साधारण वाक्य की रचना दोनों भाषाओं में समान है । जैसे -
गाय दूध देती है - पशु पाल तरुन्नु ।
हमने खाना खाया - ञङ्ङळ भक्षणम् कषिच्चु ।

मिश्र वाक्य में एक प्रमुख वाक्य के साथ उपवाक्य या खण्डवाक्य रहते हैं ।
जैसे - मैं ने खाना नहीं खाया क्यों कि माँ ने नहीं दिया । (हि ·)
अम्म तारात्ततुकोण्टु ञान उणु कषिच्चिल्ल । (मल ·)

एकाधिक उपवाक्यों के मेल से संयुक्त वाक्यों का चयन होता है । इनका अनुवाद एकाधिक वाक्यों में या संयुक्त वाक्यों में हो सकता है ।
मैं ने राम को मारने की कोशिश की पर वह भाग गया । (हि ·)
ञान रामने अटिक्कान नोक्कि, पक्षे अवन् ओटिक्कळञ्ञु । (मल ·)

भाषाई प्रकृति के अनुसार खंडवाक्य जुडना या अलग से वाक्य चयन अनुवाद में संदर्भाश्रित है । विशेषण, कृदन्त आदि से युक्त वाक्यों की संरचना भी अनुवाद में बदल जाती है ।

वाक्यरचना की विभिन्न कोटियाँ

मूल वाक्य रचना व्यक्तिसापेक्ष होने के साथ भाषासापेक्ष, समाजसापेक्ष तथा कालसापेक्ष होती है । भाषा की प्रकृति का जीता जागता स्पन्दन उसमें विद्यमान रहता है । इनके उदाहरण गिनने पर समाप्त होनेवाले नहीं है । उनमें मुख्य का उल्लेख यहाँ है ।

1 ·अंगी वाक्य (मुख्य वाक्य) के बाद अंग वाक्य आने की प्रणाली हिन्दी में वर्तमान है, मलयालम में उल्टे भी हो सकती है -
मैं ने कहा कि तुम जाओ - नी पोकू एन्नें ञान अवनोटु परञ्ञु ।

2 ·खंडवाक्य हिन्दी में ज़्यादा है, मलयालम में इनकी रचना अपेक्षाकृत सरल है । आजकल अनुवाद के ज़रिए मिश्र तथा संयुक्त वाक्य के साथ संश्लिष्ट वाक्यों की रचना भी मिलती है । यह कृदन्तीय पदप्रयोग से होता है ।
ञान पठिच्चप्पोळ अवन् कळिक्कुकयायिरुन्नु । (मल ·)
जब मैं पढता था तब वह खेलता था । (हि ·)

3 ·मलयालम में कृदन्तों से युक्त ऐसे वाक्यों में अभिव्यक्ति क्षमता ज़्यादा

रहती है । हिन्दी में इसका मिश्र व संयुक्त वाक्यों में मात्र अनुवाद संभव है ।
अवन परयुन्न कार्यम् नल्लताणु (मल.) - जो बात वह बताता है, अच्छा है ।

जब-तब, जितना-उतना, ज्यों-त्यों, जैसे-वैसे, चाहे-तो इत्यादि अनेकों योजक शब्दांश इस प्रसंग में चर्चा के योग्य हैं ।

5. विभक्ति जोडने की रीति, वाक्यसंयोजन में समुच्चय का रूप आदि भी उल्लेखनीय है । कारकीय परिवर्तन से युक्त वाक्य के अनेक उदाहरण मिलते हैं ।
भगवान तुम्हारी भलाई करेगा - ईश्वरन निन्ने रक्षिक्कुं ।
मेरे दो कान हैं - एनिक्कु रण्टु कातुकलुण्टु ।

6. कर्मकारक में लिंग वचनानुसार परिवर्तन आने का संदर्भ है । यह बदलाव द्विकर्मक प्रयोग में प्राय: मिलता है -
तुम लिखना बन्द करो - नी एषुत्तु निर्त्तु ।
बस को रोको - बस्सु निर्त्तु ।
बकवास बन्द करो - मिण्टातिरिक्कू । (बडाई निर्त्तु ।)

संबन्धकारक की प्रयुक्ति भी इसी परिवर्तन से युक्त है । -
मेरे बाप की छोटी बहन के घर में एक लाठी है (हि.)
एन्टे अच्छन्टे इलय पेङङुटे वीट्टिल ओरु वटियुण्टु ।(मल.)

अधिकरण कारक में भी मलयालम में संरचना बदलती है ।

क्रिया संबन्धी अन्वय में भी हिन्दी की विशेषताएं ध्यातव्य है । 'सक', 'चुक', 'पड', 'लग', 'चाहिए' जैसे क्रियाओं से युक्त वाक्य की व्यवस्थित रूप रचना है । 'डर' इत्यादि क्रियाओं से विशेष कारक जुडता है ।
मैं साँप से डरता हूँ - ञान पाँपिने पेटिक्कुन्नु ।

इन प्रयोगों केलिए व्याकरणिक ज्ञान से मात्र लाभ नहीं होगा । भाषाई मुहावरा जैसे प्रयोग हैं -
पोरुक्कानावात्त कुट्टमाणतु - वह माफी देने योग्य नहीं है ।
एनिक्कु मरिच्चाल मति - मुझे मरने की इच्छा है । (पूर्ण अर्थ द्योतित नहीं)

विशेषण-विशेष्य अन्वय भी हिन्दी में वाक्यस्तर पर बाधक है । संस्कृत के अनुकरण में वाक्यरचना की रीति मलयालम और हिन्दी में प्रचलित है ।

वाक्यसंरचना में वाच्य और प्रयोग

मलयालम में वाच्य और प्रयोग अलग नहीं है । क्यों कि क्रियाओं का अन्वय कर्ता से नहीं होता । मगर हिन्दी में वाच्य के 3 भेद हैं । आधुनिक अनुवाद ज़ोर पकडने के कारण कर्मवाच्य की रचना मलयालम में मिलती है । लेकिन बात तो

यह है कि हिन्दी के कई कर्मवाच्यों का कर्तृवाच्य रचना ही मलयालम की रीति है, प्रवृत्ति भी [1]। संदर्भानुसार इनका उपयोग होता है । जैसे -

राम ने रावण को मारा - रामन् रावणने कोन्नु ।
राम से रावण मारा गया - रामनाल् रावणन् कोल्लप्पेट्टु ।

मैं ने आम खाया - ञान माङङ तिन्नु ।
मुझसे आम खाया गया - ,, । यही मलयालम की रीति है ।

स्पष्ट है कि कर्मवाच्य को स्वरूप देने केलिए कर्ता से 'आल्' प्रत्यय जोड कर क्रिया में 'पेट्टु' अनुप्रयोग जोडा जाता है ।

भावे प्रयोग मलयालम में नहीं है याकर्तृवाच्य में ही उसका स्वरूप है । साथ ही कर्मवाच्य के कर्ता से हिन्दी में तृतीया विभक्ति 'से' आती है तो मलयालम में पंचमी का रूप है[2]।

कर्तृवाच्य का स्वरूप कर्मवाच्यवत् होने की विशेष शैली भी मिलती है -

राम मारा गया - रामन् कोल्लप्पेट्टु ।
दरवाज़ा खुला - वातिल तुरक्कप्पेट्टु ।

हिन्दी में प्रायः स्वामित्व आदि की सूचना केलिए कर्मवाच्य का स्वरूप है । अनुकरणात्मक प्रयोग मलयालम में भी हो सकता है, लेकिन अव्यावहारिक है ।

प्रसाद का लिखा हुआ उपन्यास - प्रसादिनाल् एषुतप्पेट्ट नोवल् ।

इसी प्रकार कुछ विशेष प्रयोग मलयालम में है जिनकी रचना हिन्दी में कर्मवाच्य रूप में मिलती है -

एनिक्कु मनस्सिलाय कार्यम् - मेरी समझ में आयी बात ।
ञान मरन्नुपोय कार्यम - मेरी भूली हुई बात ।

वाक्य की ढाँचा बदलने की रीति रहती है, पर अनुवाद सटीक रखने केलिए सतर्कता बरतनी चाहिए । व्यावहारिकता को ध्यान में रखकर कार्य करना चाहिए ।

उदा - अवनु तल्लु कोण्टु - उसने मार खाया ।
अवनु तल्लु कोळ्ळेण्टिवन्नु - उसको मार खाना पडा ।

सरकारी भाषा की शैली में इसप्रकार कर्मवाच्य का स्वरूप ज़्यादा है । 'मुझे निदेश हुआ है', मुझे आदेश हुआ है', लिखाजाना चाहिए', 'कार्रवाई की जाएगी', बुलाने का हुक्म है' जैसे अनेक कर्मवाच्य रचना हिन्दी में है । इनका अनुवाद यथावत् करने के बगैर औचित्य भी देखकर कभी कभी कर्तृवाच्य में भी होता है । अनुकरण में ऐसी वाक्यरचना अद्यतन युग में प्रचलित हुई है ।

- -

1. ईच्चरवार्यर - परिभाषयुटे प्रश्नङङळ पृ. 53
2. ए. एल. रविवर्मा - हिन्दी के साथ दक्षिणी भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण पृ 165.

अतः मलयालम वाक्यरचना सरलता की ओर अपेक्षाकृत अधिक झुकी हुई है । हिन्दी में खंडवाक्यों की संख्या ज़्यादा मिलती है । वाक्यस्तर का प्रभाव हिन्दी में संस्कृत, उर्दू, फारसी तथा अंग्रेज़ी का मिलता है तो मलयालम में संस्कृत और द्राविड़ प्रभाव का मिलता है [1]।

विस्तृत प्रदेश का संबन्ध संपर्क से विदेशी तथा प्रादेशिक भाषाओं और बोलियों का मिश्रण और प्रयोग आजकल हो गया है ।

वाक्यरचना के पोषक तत्व

वाक्य को बल देने केलिए शब्दखंड जोड़ने की रीति है, कभी कभी शब्द को पुनरुक्त करने का भी । यह भाषा को प्रभावपूर्ण बनाने का मार्ग है । कथन को बल देने केलिए 'सा, ही, का, पर' जैसे शब्दांश हिन्दी में तथा 'पोले, तन्ने, आयि' इत्यादि शब्दांश मलयालम में व्यवहृत है । कभी यह भाषाई मुहावरा होती है, तो कभी इनका अनुवाद संभव है ।

उस का ही बेटा - अवन्टे तन्ने मकन ।

कुछ शब्द समान अर्थ का संयुक्त जोडा होता है । लेकिन यह अर्थसंपन्न भाषाई ढंग है । जैसे हिन्दी में 'साज-सजावट, मार-पीट, चीड-फाड' आदि । इस प्रकार के शब्द या शब्दखंड भाषा के अर्थतत्व के पोषक हैं । ये ही शैलियां हैं । ये प्रत्येक भाषा की निजता के प्रमाण हैं । अर्थविभव और आस्वादन के प्रसंगों में इनका महत्वपूर्ण स्थान है, इसलिए अनुवाद में भी इनका स्थान उससे बढकर महत्वपूर्ण है ।

वाक्यरचना के सौन्दर्यात्मक पक्ष के पोषण केलिए आलंकारिक प्रयोगों का उपयोग होने लगा । लक्ष्याभिव्यक्ति में भी यह सौन्दर्य बनाए रखने केलिए वर्ण्यविषय के अनुसार शब्दशक्तियों और लोकोक्ति-मुहावरों का चयन होता है । इसप्रकार , प्रयोग में हमेशा समानाभिव्यक्ति नहीं मिलती । इनके अनुवाद में सर्वाधिक दिक्कत होती है ।

घुमाफिराकर कथन और लेखन पाठक पर अधिक असर डालते हैं । आलंकारिक शब्दों के प्रयोग और प्रभाव इसप्रकार असरदार है । अनेकों अलंकारों तथा शब्दशक्तियों का खूब सारे प्रयोग इसी वजह से हुआ है ।

शब्दशक्तियों में मुख्यतः अभिधा, लक्षणा, व्यंजना तीन भेद हैं । अभिधा सामान्य कथन है जिनका सीधा अनुवाद संभव है । लक्षणा का लक्ष्यार्थ व्यक्त होता है । शब्दार्थ लेना ठीक नहीं है -

मैं कालिदास को पढता हूं - आन कालिदासन्टे रचनकळ वायिक्कुन्नु ।

उसी प्रकार व्यंजना में व्यंजित अर्थ तीसरे स्तर का होता है जिसका एहसास

---

1 • डॉ • एन • ई • विश्वनाथ अय्यर अनुवाद भाषाएँ समस्याएँ पृ • 201

लेकर अनुवाद करना है । उदा -

मुर्गी ने बांग दी - (सबेरा हो गया) । इसका मलयालम में यथावत् व्यंजना मिलती है - 'कोषि कूवि' ।

इस प्रकार पौराणिक, ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों से युक्त व्यंजना के अनेक उदाहरण हैं, जिनकी समानाभिव्यक्ति मिलना कठिन है । रचना के लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ का सम्यक् ज्ञान आवश्यक है क्यों कि अनुवाद मूलबात की व्याकरणिक संरचना मात्र का भाषान्तरण नहीं, विचार संरचना का भी भाषान्तरण है [1]।

इनके अलावा भाषा की शोभा बढानेवाले अलंकारों का उपयोग भी साहित्यिक अनुवाद में होता है । विशेषण होकर आनेवाले ऐसे अलंकारों का उपयोग दोनों भाषाओं में है । दिक्कत यही होता है कि पद्यानुवाद में ताल-लय के साथ भाषा संरचना और अलंकार की पूर्ति कभी कभी नहीं होती । छन्द की मामला भी है । शिल्पपक्ष और भावपक्ष दोनों की यथावत् पूर्ति पद्यानुवाद में नहीं होने का यही कारण है ।

शिल्पपक्ष का भावपक्ष से संगम जहाँ होताहै वहाँ अनूदित कृति उच्चकोटि की बन जाती है । शैली और भाव का यह संबन्ध क्षिप्रसाध्य नहीं है । शैलीपक्ष का पोषक होकर अन्य कुछ अवयव भी है । जैसे - मुहावरे और लोकोक्ति ।

हिन्दी - मलयालम मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ

वाक्य को प्रभावयुक्त बनाने में लक्षणा-व्यंजना से एक कदम आगे हैं - मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ । इनकी विशेषताएँ अनेकस्तरीय हैं । सीधे कहने से बढकर टेढी-मेढी उक्ति से अभिव्यंजना शक्ति बढ जाती है । मुहावरों तथा लोकोक्तियों के उपयोग के पीछे यही प्रवृत्ति है । यह भी उल्लेखनीय है कि इनका विषय व्यापक है । मुहावरे तथा लोकोक्तियों का व्यवहार सबप्रकार की विधाओं में होता है । भाषा को जीवन्त रखने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है । संक्षिप्त शिल्प में विस्तृत अर्थ मिलने के कारण भी इनका आकर्षण बहुचर्चित व व्यापक है । सूक्ष्म व अर्थसंपन्न अभिव्यक्ति है, जो व्यंग्य या हास्य के रूप में अधिकाधिक प्रकट होते हैं । मुख्य बात यह है कि मुहावरों की लोकप्रियता अचंचल है । लोकजीवन में इनका स्थान मिट्टी की विशेषताओं से युक्त चेतना प्रतीक जैसा है । सभ्यता और संस्कृति के विकास के चरणों में पोषक तत्वों व भावों की अभिव्यक्ति रहने के कारण इनकी प्रतिष्ठा शाश्वत व इनकी विशेषताएँ अनन्य है ।

लोकजीवन के सभी पहलुओं को आत्मसात करनेवाले मुहावरे-लोकोक्तियाँ हर भाषा में प्रचलित हैं । राष्ट्रीयजीवन तथा भावात्मक एकता की दृष्टि से देखें तो कई मुहावरे तथा लोकोक्तियों ऐसे भी हैं, जो समानार्थी हैं । लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि सबके सब मुहावरे समानार्थी रहें । अतः अनुवाद के संदर्भ में इनकी समस्याएँ

1. महेन्द्र चतुर्वेदी - भाषा मार्च 1965 पृ. 12-13.

भाषा के अन्य अवयवों से बढकर उपस्थित होती है । लोकसंस्कृति के विभिन्न अंगों से जुडी हुई मुहावरों का दूसरी संस्कृति से मेलजोल होना अनिवार्य नहीं, साथ ही शंकापूर्ण और कभी कभी असंभव भी है । प्रत्येक संस्कृति की कहानियाँ अलग होती हैं । इनका आयात-निर्यात शब्दानुवाद में असंभव है ।

मुहावरों तथा लोकोक्तियाँ शैली का पहला चरण है । इनमें अंतर तो इतना है कि शैली में व्याकरणानुसार परिवर्तन हो सकता है, पर मुहावरे-लोकोक्तियों में नहीं । इनका स्वरूप निश्चित व अपरिवर्तित है, जिसे आशय संपन्नता तथा अर्थ सुनिश्चितता पूर्ण रहता है [1]।

मुहावरे तथा लोकोक्तियों में अंतर है । मुहावरे लाक्षणिक चमत्कार से संपृक्त संक्षिप्त तथा रूढ रूप होते हैं, लोकोक्ति या कहावत, अपेक्षाकृत लंबी और अद्भुत सच्चाई से युक्त सूक्ति जैसी है ।

हिन्दी-मलयालम मुहावरों का अनुवाद

रससंपन्न तथा भावोचित प्रसंगों की सृष्टि में मुहावरे का प्रयोग ही प्रभावशाली है । इनका सीधा तथा स्वतन्त्र प्रयोग होता है । हिन्दी-मलयालम अंचल की विशेषताओं से युक्त अनेकों मुहावरे अनुवादक के सामने प्रस्तुत होते हैं ।

भाषाई प्रकृति के प्रतिनिधि के रूप में हम अनेकों शब्द प्रस्तुत कर सकते हैं जिनके समानार्थी विशेषताओं से युक्त समान अभिव्यक्ति दूसरी भाषा में नहीं मिलती । हिन्दी में द्विरुक्तिबोधक प्रसंगों में लगानेवाले कुछ शब्दों का उदाहरण है जिनका प्रभावपूर्ण उपयोग सामान्य व साहित्यिक भाषा में होता है । जैसे - साज-सजावट, चीड-फाड, चीख-पुकार, धन-दौलत आदि । वस्तुतः ये शब्द प्रभावपूर्ण प्रयोग ही हैं ।

ऐसे भाषाई प्रयोगों का मूर्त स्वरूप है - भाषाई मुहावरे । इनके भाषाशिल्प नाद प्रभाव और वर्णगठन से संपन्न होता है । अर्थ चमत्कार की खासियत से ये लोकप्रिय व सरस रहते हैं । इसप्रकार के समन्वित रूपों का अनुवाद असंभव सा लगता है । मुहावरों में सामान्य कुछ ऐसे हैं, जो पूरी भाषा-भाषियों से संबद्ध हैं । सहज व्यवहार में मिलनेवाले इन रूपों का समानार्थ मुहावरे कभी कभी लक्ष्यभाषा में भी मिल जाते हैं । जैसे -

आँखों में धूल झोंकना - कण्णिल पोटियिटुक
कलई खुलना - चायं पुरत्तावुक
चाल चलना - सूत्रं प्रयोगिक्कुक
अगर मगर करना - अतुमितुं परयुक
आँखों का तारा - कण्णिलुण्णि
आग में घी डालना तीयिल एण्ण ओषिक्कुक
दूध मुँह बच्चा - मुल कुटिक्कुन्न कुट्टि
हवाई किला बनाना - आकाशक्कोट्ट केट्टुक

- -

1 ·कोच्चीन विश्वविद्यालय - परिभाषयुटे प्रश्नङ्ङळ पृ·17·

जाल रचना - वल विरिक्कुक
काम तमाम करना - कथ कषिक्कुक

दूसरी कोटि के मुहावरे क्षेत्रीय हैं जो दोनों भाषाओं की बोलियों में क्षेत्रीय प्रभाव से उत्पन्न व प्रचलित हुए हैं । इनका अनुवाद आसान नहीं है । आंचलिकता से युक्त इनकी विशेषताओं को अन्य भाषाओं के शब्दों में ढालना कठिन है । क्षेत्रीय मुहावरों की विशेषता यह भी है कि उनके भाषाभाषी भी कभी कभी इनसे नासमझ रहते हैं । इसका कारण यही है कि ऐसे मुहावरेदार प्रयोग का सूक्ष्म व जातिगत आधार होता है । लक्ष्यार्थ तथा व्यंजनार्थ के कारण चिरपरिचित व्यक्ति ही इनका अर्थांतर आंक सकता है । क्यों कि खान-पान, धर्म-संप्रदाय, शारीरिक चेष्टा, जानवरों के नाम, प्राकृतिक विशिष्टताएं आदि के साथ लोकजीवन व लोकसंस्कृति के सभी पक्ष इनमें द्योतित होते हैं । इन सबमें देखनेवाला प्रादेशिक, क्षेत्रीय या सामाजिक अंतर मुहावरों के अनुवाद में सर्वप्रमुख कठिनाई है । वातावरण और रीतिरिवाज़ के अंतर से जीवन की शैली व भाषा की रीति और अभिव्यक्ति का ढंग भिन्न हो जाते हैं । एक ही काम का विभिन्न शब्दप्रयोगों में अनुवादक किसको चुन लेगा, यह चयन पर आश्रित कठिनाई है । हिन्दी में 'भोजन करना' या 'खाना' क्रियार्थक शब्द मलयालम में अनुवाद करते वक्त निम्नलिखित से किस शब्द को चुनना है ? यह संदर्भ ही निश्चित करता है -'उण्णुक, चोरुण्णुक, चोरु कषिक्कुक, उणु कषिक्कुक, चारु तिन्नुक, उणुण्णुक' आदि ।

उसी प्रकार 'मरण' या 'मृत्यु' के सूचनार्थी प्रयोग की कितनी सारी अभिव्यक्ति मिलती हैं - इहलोकवासं वेटियुक, स्वर्गवासं चेय्युक, मरिक्कुक, चावुक, नाटुनीङ्ङुक, कालं चेय्युक, स्वर्ग पूकुक, इत्यादि ।

मनुष्य तथा पशु के शरीर के अंगों की क्रियाविधि विषयक तथा प्रकृतिव्यापार संबन्धी अनेकों मुहावरे दैनंदिन जीवन में प्रयुक्त हैं, इनके अर्थ कभी लक्ष्यार्थ होते हैं तो कभी व्यंजनार्थ । उदा -

मोट्टयटिक्कुक - गंजा करना
नैंच्त्तटिक्कुक - छाती पीटना
तलयिटुक - दखल देना
मिण्टाप्पूच्च - छुपा चोर
ओलप्पांपु - गीदड भभक
एट्टिल पशु - बेकार चीज़
पुलिवालायि - खतरा

प्रकृति के व्यापार संबन्धी कुळमाक्कुक(सबके सब बेकार करना), कुळं कोरुक (सर्वनाश करना) आदि भी उदाहरण हैं । स्थान, प्रशासन, राजनीति, धर्म, जाति, खान-पान संबन्धी चीज़ों की भिन्नता भी इनके बीच में है । पर यथारूप में प्रयुक्त स्थानीय शब्दों का प्रयोग कभी कभी सहारा हो जाता है । उदा -

स्थान उळंपारक्कु पोयि - पागलखाने में भरती हुई ।
प्रशासन विलंबरं नटत्ति - घोषणा की

राजनीति तुल्यं चार्तुक - हस्ताक्षर करना
धर्म-जाति पिर्ण्ड वेक्कुक - श्राद्ध करना
खान-पान : के ननक्कुक - नाश्ता करना

परंपरा तथा तरीके के अंतर से भिन्न खाने की चीज़ तथा धार्मिक रूढ़ियाँ हिन्दी व मलयालम भाषाओं में अधिक दिखाई पड़ती है । केरल के दैनंदिन जीवन में 'चावल' का जो स्थान है, वह हिन्दी प्रदेश में 'रोटी-दाल' या 'चप्पाति-दाल' को दिया जाता है । केरलीय अंचल के पोशाक संबन्धी विशेषताएँ कभी उत्तर भारत से मेल नहीं खाती । 'मुण्ड्, नेरियतुं, चट्ट, कवणि, कन्च, पट्टं' आदिको सांस्कृतिक गरिमा तथा खासियत 'धोती, कुर्ता, दुप्पट्टा, लँगोटी, साड़ी, घूँघट' आदि से अलग है ।

अतः मुहावरों का सीधा संबन्ध दिन-ब-दिन के जीवन से है, जीवनाभिव्यक्ति से है । उस पर तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों का प्रभाव भी आधुनिक युग में दिखायमान है । मलयालम से हिन्दी अनुवाद में मुहावरेकोश की सहायता ले सकता है । हिन्दी की तुलना में मलयालम मुहावरों का संकलन-अध्ययन कम हुआ है । अतः उस दृष्टि से अनुवादकार्य में सहायता नहीं मिलता । मलयालम मुहावरों पर अध्ययन, विश्लेषण व शोधकार्य भाषाविषयक अनिवार्यता है । क्यों कि अनुवाद के संदर्भ में शब्दकोश की सहायता नहीं लिया जा सकता । परिचय ही एकमात्र रास्ता है जो अनुवादक को भावार्थ की भूमिका में पहुँचा देता । आजकल अनुवाद की तेज़ी से ऐसे मुहावरों को भी भावार्थ संपन्न बनाना है । जनभाषा को ध्यान में लेकर जबरदस्त प्रयोग और व्यवहार जारी है । भाषाओं के बीच में जो अंतर दिखायमान है, उन्हें जहाँ तक हो सके, सुलझाने की कोशिश करें ।

हिन्दी-मलयालम अनुवाद में कहावतें

भाषा की निजता की रक्षा में कहावतों का महत्वपूर्ण स्थान है । मुहावरे संक्षिप्त भाषारूप होते हैं जो लोकोक्ति या कहावत सामान्य जीवन के अनुभूत यथार्थों के व्यापक स्वरूप होते हैं । इसमें सत्य के अलावा कहानी सूत्र तक निहित है । कई कहावतों के स्वरूप कविता की पंक्ति जैसे हैं । मानव सभ्यता के विकासपथ पर उद्भूत रीति-रिवाज़, आचार-विचार, भूल-चूक, दैनिक-व्यवहार, प्रेम, द्वेष, भय, करुणा आदि बुनियादी भावों के साथ धर्मसंप्रदाय, कानून, जादू, शिल्प, कारीगरी, सबके सब इनका विषय है । प्रत्येक कहावत का परिप्रेक्ष्य व उद्देश्य होता है । संक्षिप्त पंक्तियों के माध्यम से व्यापक संदर्भ जोड़ने में इनका उपयोग है । तथ्य, उपदेश, व्यंग्य, उपहास या सामान्य कथन के स्वरूप में सामान्यतः कहावतों का प्रयोग चलता है । कहावतों की व्याकरणिक संरचना नहीं, आर्थिक पुष्टि रहती है । इसी प्रकार चमत्कारी चयन की महत्ता भी उसमें है न कि सुष्ठु वाक्य । विषय के अनुसार संदर्भाश्रित उक्तियों या सूक्तियों का प्रयोग होते हैं ।

कहावत युगीन संदर्भों से जुड़े हुए हैं । साथ ही सामान्य जीवन की स्पन्दित तस्वीर भी । अतः भाषा के साहित्यिक व आंचलिक रूप भी इसमें होते हैं । ग्रामीण

होने के साथ ताल-लयबद्धता तथा विद्वत्ता का एहसास भी इनमें है ।

हिन्दी-मलयालम अनुवाद में आनेवाले कहावत मुख्यतः ग्रामीण और साहित्यिक होते हैं । इनकी परंपरा अन्य भाषिक तत्वों के समान संस्कृत ही है । संस्कृत की उपदेशात्मक उक्तियों और प्रवचनों का यथावत या व्युत्पन्न रूप दोनों भाषाओं में मिलते हैं । उदा - अतिपरिचयात् अवज्ञा - (हिन्दी व मलयालम में यथावत प्रयुक्त है)

अधजलगगरी छलकतजाय - हिन्दी में यथावत प्रयुक्त है,
(मलयालम में - निरकुट तुळुंबिल्ल)

- भाषाई कहावतों में समान अभिव्यक्ति लक्ष्यभाषा में मिलती है । जैसे -
  जैसा देश वैसा वेष - कालत्तिनोत्त कोलं
  जो बोएगा वह काटेगा - वितच्चतु कोय्युं
  होनी होकर ही रहती है - वरानुळ्ळतु वष़ियिल तङ्ङल्ल ।
  सिर का लिखा मिटाये न मिटता - तलेलेष़ुत्तुं तूत्ताल पोकिल्ल ।

समान भावार्थ होने पर भी व्यंजना के कारण बनाई रखती है । इनके चयन में सतर्कता अत्यन्त अपेक्षित है ।

दूर के ढोल सुहावने - अक्करप्पच्च
चोर की दाढी में तिनका - अच्छन वीटि्टलिल्ल, पत्तायत्तिलुमिल्ल ।
आप हारे बहु को मारे - अङ्ङाटियिल तोट्टाल अम्मयोटु ।
बहती गंगा में हाथ धोओ - काट्टुळ्ळप्पोळ तूट्टणम् ।
लातों के भूत बातों से नहीं मानते - कप्पालरियात्तवन कोप्पालरियुं
जिसको लाठी उसकी भैंस - कय्यूक्कुळ्ळवन कार्यक्कारन
जिसका कोडा उसका घोडा - ,,
एक पंथ दो काज - अंक्वुं काणां तालियुं ओटिक्कां / उप्पुं कोल्लां वावुं कुलिक्कां ।

अतः एकाधिक समानान्तर कहावत भी प्रचलित है ।

अनुवाद का प्रयोगशील तथा प्रगतिशील प्रवृत्ति ने ही ऐसे समानार्थी कहावतों को जन्म दिया है । आजकल भावात्मक एकता के फलस्वरूप भावगत कहावत सामान्य रूप धारण करने लगे हैं । उत्तरभारत की सांस्कृतिक, राजनैतिक व भैागोलिक विशेषताएं मलयालम के सीमित क्षेत्र केलिए भी समझदार होने लगी है । काशी, मथुरा, प्रयाग आदि के साथ दिल्ली, काश्मीर आदि स्थानों से संबन्धित ऐतिहासिक व राजनैतिक महत्ता इन भाषारूपों से प्रचलित होने लगा है ।

ग्रामीण जीवन दृष्टि से देखें तो खेतीबाडी तथा अन्य विशिष्टताओं से युक्त कहावत मिलेंगे । फसल संबन्धी कहावत भी अनेक आते हैं । उदा -

काक्क कुळिच्चाल कोक्काकुमो - कौआ नहाए तो हंस नहीं बनता ।

भोजन, उत्सव, धंधे, जाति-पाँति, धार्मिक अनुष्ठान, लोक कथाएं आदि की भिन्नता से कहावतों का अनुवाद कठिन हो जाता है । ऐसे संदर्भ में कहावतों को व्याख्यात्मक रूप में प्रयुक्त करना होगा ताकि पाठक या श्रोता उनका ठीक-ठीक आस्वादन करें -

अंधेर नगरी चौपट राजा - मुक्किलाराज्यत्तु मुरिमूक्कन राजावुं ।

लगता है कि कहावत, मुहावरों का ही विस्तृत रूपान्तर है । कभी कभी एक ही अर्थ के मुहावरे तथा कहावत मिलता भी है[1]। लक्ष्यार्थ तथा व्यंग्यार्थ का मात्र अंतर पडता है । अतः अनुवाद में सरस मुहावरे या लोकोक्ति का औचित्यपूर्ण चयन होना चाहिए । दोनों के अभाव में चमत्कारपूर्ण उक्ति का चयन अनुवादक का कर्तव्य हो जाता है ।

वेणमेंकिल चक्क वेरिलुं कायक्कुं - जहां चाह, वहां राह।

अप्पं तिन्नाल पोरे, कुषि एण्णणो - आम खाने का मतलब गुठली गिनना है क्या ?

मुट्टत्ते मुल्लयक्कु मणमिल्ल - गांव का जोगी जोगडा आन गांव का सिद्ध ।

संस्कृत के साथ देशी तथा क्षेत्राय शब्दों से युक्त मुहावरे-लोकोक्तियों का प्रचलन भारतीय भाषाओं में है । अंग्रेज़ी के मुहावरों का भी समानार्थी प्रयोग हिन्दी व मलयालम दोनों भाषाओं में मिलता है ।

काला बाज़ार - करिंचन्त (Black Market)

एक शब्द में - ओट्ट वाक्किल (In a word)

ऐसे प्रयोगों का खूब प्रचलन आधुनिक युग की पत्र-पत्रिकाओं में मिलता है । अनुवाद में इनका प्रयोग प्रचलन की दिशा को तेज़ बनाई है । ऐसी शब्दों में 'पेरेस्ट्रोयिक्का' तथा 'ग्लास्तनोस्त' का आधुनिक युग में मुहावरेदार प्रयोग संसार भर की भाषाओं में मिलता है ।

अतः मुहावरे-लोकोक्तियों के अनुवाद के संदर्भ में अभिधार्थ पर पूरा विश्वास नहीं लगा सकता । मुहावरे कोश की सहायता ले सकता है। भावार्थ की सृष्टि में पूरकता की ज़रूरत पडे तो वह भी अनुवादकीय कर्तव्य है । मुहावरों के स्वरूप की पूर्ति केलिए अनुप्रास योजना, नाद सौन्दर्य की यथासाध्य रक्षा होनी चाहिए । मुहावरे लोकोक्ति सशक्त व चमत्कारी उक्ति है ।

मुहावरे-लोकोक्तियों के अनुवाद में शिल्प सौन्दर्य बनाए रखना असंभव सा महसूस होते समय भावसौन्दर्य की पूर्ति की मांग होती है । लेकिन इसके बहाने व्याख्यात्मक अनुवाद या वर्णनात्मक पाठ गठन करना ठीक नहीं होता । काम, बराबरी की कसौटी पर कस जाता है । इसकेलिए संक्षिप्तता के साथ रसवत्ता भी होनी चाहिए । औचित्य और गुण पर आधारित अनुवाद से यह संभव होता है । उदाहरण केलिए 'पारप्पुरत्तुं' के 'अरनाषिकनेरं' के हिन्दी अनुवाद में (आधी घडी नाम से) अनुवादक डॉ. विश्वनाथ अय्यरजी ने केरलीय अंचल की विशेषताओं की यथावत रक्षा करते हुए हिन्दी भाषा-भाषी को भी सफल अनुवाद प्रस्तुत किया है । उसमें मलयालम वाक्य 'एन्टे चेवि पोट्टियिट्टुम् मट्टुम् इल्लेटा' का शब्दानुवाद यथावत् 'मेरे कान अभी बहरे नहीं है' किया गया है जो संदर्भ और अनुभूति की रक्षा में सफल है[2]। हिन्दी के

---

1. डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर अनुवाद - भाषाएं, समस्याएं पृ. 249.
2. पारप्पुरत्तुं - अरनाषिकनेरम् पृ. 24 , आधी घडी पृ. 15.

निजी प्रयोग व शैलीगत प्रसंगों के अनुसार विश्लेषण करें तो बहरे के आगे कान जोड़ने की आवश्यकता नहीं । अतः शंका नहीं कि साधारण शैली से बढ़कर मुहावरेदार शैली अन्यतम है, चर्चित है, लुभानेवाली भी । पर इसका परिमार्जित, भावोद्दीपक अनुवाद कठिन होने पर भी प्रभावपूर्वक करना चाहिए ।

वाक्यगठन और अनुवाद

वाक्यगठन शब्दों का व्याकरणसम्मत क्रमबद्ध संगठन है । आवश्यकतानुसार अर्थपूर्ण शब्दों में आकृतियां-प्रकृतियां जोड़कर श्रृंखलाबद्ध रूप बनाया जाता है । इसमें यह आवश्यक है कि प्रवाहधारा आद्यन्त बनाई रहे । विचारधारा की महत्ता सर्व-प्रमुख है ।

वाक्यविन्यास की श्रेष्ठता अर्थ के साथ मन को लुभाती है । विचारों के स्पष्टीकरण की कई प्रणालियां हैं । उसकी व्यक्तिगत विशेषताएं भी हैं । पदों का पारस्परिक संबन्ध और शब्दों का चयन वाक्य का रूप निर्दिष्ट करते हैं । इस प्रवृत्ति में यान्त्रिकता नहीं आनी चाहिए । इसकी स्पष्टता, सरलता, श्रुतिमधुरता आदि ही वाक्य को असरदार बनाती है ।

एक ही वाक्य कहने की विभिन्न रीतियां हैं । रीति ही वाक्य को प्रौढ़ बनाती है । रचनाधर्मिता या लेखन के बहुआयामी कार्यों में इस रीति का महत्व सर्वाधिक है, जिसे ही हम श्रेष्ठ शैली कहते हैं । अन्वय, अधिकार और क्रम से पूर्ण वाक्य में अर्थ भी यथेष्ठ होता है । सरल, अर्थपूर्ण, प्रचलित शब्दों से युक्त भाषा का चयन, संदर्भ और औचित्य के अनुरूप होना चाहिए । अभिव्यक्ति की सहजता तथा सरलता संदर्भाश्रित भी है ।

विचारसंपन्न कृतियों के अनुवाद में यद्यपि शैली का उतना महत्व नहीं है तथापि उसमें भी प्रवाहमयी भाषा की मांग है । यथाशैली की आलंकारिक सौन्दर्यात्मक पक्ष की महत्ता मात्र यहां चर्चित नहीं । लेकिन काव्य या कलासंबन्धी रचनाओं के अनुवाद में ग्राम्य, शक्तिमयी तथा सहज भाषा का सक्रम व उचित प्रयोग वांछनीय होगा । लक्ष्याभिव्यक्ति में पण्डितोचित प्रदर्शन या व्याकरणज्ञान की अपेक्षा सहजता एवं सत्य का सृजन आवश्यक है ।

ठीक ही कुछ लेखकों में शक्तिशाली संस्कृतनिष्ठ शैली होती है, जिसके अनुवाद में भी उसी प्रवृत्ति बरतनी पड़ती है । दूसरी ओर ग्राम्य, मुहावरेदार शैली का प्रयोग होता है, जिसके अनुवाद में उसी के अनुसार अपने मन और अभिव्यक्ति को गठना पड़ता है । अतः प्रत्येक अनुवादक को यह जानना चाहिए कि उनकी सीमा कहां है, स्वतन्त्रता कहां तक है । फिर अपने भाषाज्ञान तथा व्याकरणज्ञान का प्रयोग लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करना चाहिए । शैली एवं औचित्य की दीक्षा चयन में प्रस्तुत होती है । वाक्य का सौन्दर्य चयन में है । सोच-समझ का मौलिक चयन और प्रकाशन सराह-नीय होता है - कभी कभी मौलिक कृति से बढ़ कर ।

भारतीय भाषाओं में वाक्यरचना के स्तर पर सामान्यत: साम्य देखने को मिलता है। आर्य-द्रविड़ संपर्क तथा परवर्ती विकास ने वाक्यरचना को असामान्य संभावनाएँ प्रदान किया। अनुवाद में वाक्यरचना की समस्या केवल गठन की नहीं, संरचना तथा व्यवस्था की भी है। पदक्रम तथा अन्वय में देखनेवाली समानताएँ भाव के साथ शिल्प के रूपायन में भी सहायक हैं। अन्यान्य कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1. क्रिया का पूरक (विशेषण) कर्ता और क्रिया के बीच में रहता है। यथावत् गौणकर्म पहले तथा मुख्यकर्म बाद में आने की रीति मानक है। जैसे -
मैं ने बच्चे को गेंद दिया - ञान कुट्टिक्कु पन्तु कोडुत्तु।
इसी प्रवृत्ति पूर्वकालिक क्रिया में भी है।

2. कारकीय संदर्भ विशेषवृत्तियों से युक्त है। क्रिया विशेषण का कभी कभी क्रिया के बाद आने की रीति भी प्रचलित है।

3. लिंग की तार्किकता क्रियारचना में बाधक नहीं होने के कारण मलयालम में संरचनात्मक सरलता है।

4. दोनों भाषाओं में कालरहित क्रिया तथा भूतकालिक कृदन्त की समानताएँ-असमानताएँ मिलती हैं। हिन्दी में कृदन्त का कर्ता सचेतन होता है, उसके साथ कर्म कारक या संबन्धकारक जुडता है। लेकिन मलयालम में नहीं [1]।

5. हिन्दी के सभी कालों में - सामान्य, तात्कालिक रूपों का स्वरूप मलयालम में सुनिश्चित नहीं है।

6. 'कि' वाली वाक्यरचना में अंतर है। वहाँ अंग-अंगी वाक्य का स्थान कभी कभी परिवर्तित होता भी। सामान्यत: आशयसंपन्नता तथा औचित्य को लेकर रमणीय वाक्यों की रचना होती है।

7. व्याकरणिक संबन्ध की सूचना केलिए लगातार प्रत्यय लगाने के कारण मलयालम वाक्य की दीर्घयोजना रहती है [2]। इनका अलग-अलग वाक्यों में अनुवाद संभव है, करणीय भी।

8. हिन्दी में उपवाक्यों का प्रयोग अभिव्यंजना की शक्ति बढानेवाली है, जहाँ मलयालम में संक्षिप्तता की रीति है [3]।

9. सहायक क्रिया तथा अनुप्रयोग से युक्त वाक्यों में स्थानवाचक मात्र दिखाई पडता है। मलयालम में संज्ञा या विशेषण के पूरक है तो सहायक क्रिया ही नहीं रहती। 'है' उदाहरण है [4]।

10. भाववाच्य, भावेप्रयोग तथा न्यूनाधिक संदर्भ में कर्मणिप्रयोग भी मलयालम में कर्तरिप्रयोग में चलता है। अकर्मक क्रियाओं में वाच्य नहीं चलता [5]।

11. 'जो', 'जितना', जैसे 'ज'कार के वाक्यों की रचना हिन्दी में ज्यादातर मिलती है, मलयालम में इनकेलिए कृदन्तीय प्रयोग की सुविधा है [6]।

1. कोच्चिन विश्वविद्यालय - परिभाषयुटे प्रश्नङ्ङळ पृ. 48.
2. ए. एल. मुसतु - द्राविड़भाषाशास्त्रम् पृ. 86.
3. कोच्चिन विश्वविद्यालय - परिभाषयुटे प्रश्नङ्ङळ पृ. 94.,
4, 5, 6. सं. भोलानाथ तिवा -अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान पृ. 94

12 ·कर्मकारकीय 'चाहिए' प्रयोग मलयालम में नहीं है ।

13 ·परसर्गीय प्रयोग में मलयालम अव्यय से काम चलता है, जहाँ हिन्दी में परसर्गीय प्रयोग चलता है । जैसे - के लिए, के बारे में ।

14 ·प्रश्न तथा निषेधवाचक वाक्यों की संरचना में उलटफेर है । प्रत्येक भाषा की अपनी रीति है ।

15 ·संयुक्त, सम्मिश्र वाक्यों का भी भाव तथा अर्थ की प्रधानता देखकर अनुवाद करना अच्छा है । इनमें स्थान परिवर्तन खूब मिलता है ।

निष्कर्ष

इन सामान्य संरचनात्मक अंतर के अलावा हिन्दी मलयालम अनुवाद में शब्दचयन तथा अर्थसंप्रेषण में अनुवादक सापेक्ष गलतियाँ-त्रुटियाँ मिलती हैं । जैसे - पुनरुक्तिदोष, अज्ञान, व्याकरणिक त्रुटियाँ । साधारणतः अनुवाद में मूल की छाया भी रहती है । लेकिन इसकी मात्रा अधिक है तो अनुवाद असुन्दर लगेगा । अतः आपसी प्रभाव के लाभ तथा नष्ट दोनों संभाव्य है । स्रोतभाषियों की संस्कृति, रीति, सभ्यता आदि के परिवहन के साथ उसकी भाषा तथा ढंग भी लक्ष्यभाषी तक पहुँच जाते हैं ।

भाषाई महत्ता की कसौटी में अनुवाद की सबसे बड़ी देन लोकोक्तियों-मुहावरों का आदान-प्रदान है । शब्दों का आपसी प्रभाव और लेन-देन, जहाँ वाक्यरचना तक पहुँच गई, वहाँ अर्थसंप्रेषण आसान होने लगा । बड़े-बड़े पदबन्ध भाषाओं में समानार्थी प्रभाव और आम विशेषताएँ उत्पन्न करने लगीं, जिससे अनुवाद में नवीन संभावनाएँ मिलने लगीं । हिन्दी-मलयालम भाषाओं के बीच में आम विशेषताओंवाले अनेक पदबन्ध तथा मुहावरे इस प्रकार प्रयुक्त हैं । अनुवादकीय समस्या असमान आर्थिक तत्वों के प्रकाशन को लेकर है । दोनों भाषाओं के विशिष्ट तथा समस्त प्रयोगों के ज्ञाता अनुवादक बड़े हद तक इन समस्याओं को समाधान दे सकता है । हिन्दी-मलयालम अनुवाद में विख्यात डॉ ·एन ·ई ·विश्वनाथ अय्यर, डॉ ·रविवर्मा, डॉ ·वी ·डी ·कृष्णन नंबियार, डॉ ·पी ·माधवन पिल्ले आदि इस श्रेणी के अनुवादक हैं ।

संरचना स्वनिष्ठ होती है, जीवन्त और पूर्ण भी । वह गतिशील होने के कारण परिवर्तन निरंतर होता रहता है, विकासशील भी । संरचना मनोवैज्ञानिक यथार्थ है, वही आन्तरिक अनुभव की उपलब्धि है । साहित्यिक-वैज्ञानिक कृतियों के घटकों की सत्ता एवं व्यवस्था, आपसी संबन्ध और शब्दावली इससे ही निश्चित किया जाता है । इस निश्चिति में भाषाविज्ञान के विविध नियमों से सहायता मिलती है ।

****** ******

चौथा अध्याय

हिन्दी तथा मलयालम अनुवाद की भाषावैज्ञानिक समस्याएँ

व्याकरण भाषा का नियम है । उस दृष्टि से भाषाविज्ञान व्याकरण से अलग नहीं है । लेकिन भाषाविज्ञान की व्याकरणिक संकल्पना व्यापक है । मानक भाषा के नियमों के अलावा भाषा की अनेक संरचनात्मक तथा प्रकृतिपरक विशेषताएँ तथा प्रवृत्तियाँ होती हैं, जिनका आकलन भाषाविज्ञान की सहायता से ही संभव है । भाषावैज्ञानिक अध्ययन की महत्ता तब हमारे सामने प्रस्तुत होती है, जब व्याकरणिक दृष्टि से अपूर्ण वाक्य भी भाषा में प्रयुक्त किया जाता है । अत: व्याकरण मानक या शुद्ध भाषा का है, न कि सामान्य या लोकभाषा का । इसकेलिए भाषावैज्ञानिकता का अध्ययन ही वांछनीय है ।

भाषाव्यापार और भाषाविज्ञान

भाषाव्यापार सर्वथा व्यवस्थित होना चाहिए । बाह्यवस्तु होने के कारण उसकी व्यवस्था वैज्ञानिक दृष्टि से की जाती है । भाषा का बहिर्निष्ठता एवं व्यवस्था अनुवाद के परिप्रेक्ष्य में भी चर्चित है । साथ ही वाक्यरचना तथा भाषाउपयोग मनोविज्ञान पर आधारित है । वक्ता की बात श्रोता की मनास्थिति से सामंजस्य में आकर अर्थवान होता है । अत: व्यवस्थित होना व्याकरणिक है तो व्यवस्था का परोक्ष अवयव - तान, अनुतान - मनोवैज्ञानिक है । समझने-समझाने का ढंग मनोविज्ञान पर आधारित है । एक ही शब्द, काल-प्रसंगानुसार अर्थ बदलकर आता है । इसका अध्ययन भाषा वैज्ञानिक दृष्टि पर आधृत है । विभिन्न कृतियों के एककालिक अध्ययन ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ व लिपि के स्तरों पर अनुवाद में आवश्यक है । मुख्यत: अनुवाद अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की शाखा है, जिसमें अन्य प्रकार के अध्ययन से भी लाभ उठा सकता है ।

अनुवाद में ध्वनिविज्ञान

ध्वनि भाषा की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति है । जो हमारे मस्तिष्क में है, वही ध्वन्यात्मक रूप में प्रकाशित होता है । बोलनेवाला एक ध्वनिप्रसारक यन्त्र है और सुननेवाला एक ध्वनिग्राहक यन्त्र ।

मूल की तरह अनुवाद में भी ध्वनियों के माध्यम से शब्दगठन होता है । अनुवाद के संदर्भ में तुलनात्मक ध्वनिविज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका है । संज्ञा तथा अन्य नामों के पुन: कथन में स्रोतभाषा की ध्वनि के समकक्ष रहनेवाली लक्ष्यभाषा की ध्वनि का चयन इसीतरह सरल होगा । दोनों भाषाओं की ध्वनियों का तुलनात्मक परिचय अनुवादक केलिए काफी सहायक है ।

मलयालम-हिन्दी ध्वनियों को भाषावैज्ञानिक दृष्टि से तीन विभाग में बाँट सकते हैं - 1 •समान ध्वनियाँ - संस्कृत का श्रोत तथा परवर्ती प्रभाव हिन्दी-मलयालम ध्वनियों में काफी दीखता है । कवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, और पवर्ग की ध्वनियों के साथ य, व, ह का उच्चारण समान ढंग से किया जाता है । लिप्यंतरण में ये काफी सहायक हैं ।

2 • लगभग समान ध्वनियाँ   भाषा की प्रकृति के असर से स्पर्शसंघर्षी तथा उष्म ध्वनियों में(र, ल, श, ष आदि में)   - लगभग समानता मिलती है । ये निकट मात्र की है । श्रवण व उच्चारण में अंतर मिलता है । इन ध्वनियों के उच्चारण में अंतर लाकर द्वित्व ध्वनि की सूचना भी है । 3 • भिन्न ध्वनियाँ - मलयालम में मिलनेवाली ऺ , ऺऺ , ष़ ध्वनियाँ हिन्दी में नहीं थी । आधुनिक प्रभाव से इनकी बोलबाला शुरू हुई ।

अनुवाद में समान ध्वनियों का अभाव और भाषाई प्रकृति की भिन्नता के कारण कभी कभी व्यक्ति, ग्रन्थ, भाषा इत्यादि के नाम में बदलाव आता है । यह परिवर्तन भाषा (लक्ष्यभाषा) में होता है जो काफी हद तक आकर्षक है । लेकिन इसका प्रयोग हमेशा उचित न रहता । आजकल इसके विरुद्ध भी ज़ोर उठा जाता है कि स्रोतभाषा की ध्वनियों का यथावत उच्चारण व वर्तनी लक्ष्यभाषा में भी प्रयुक्त करना चाहिए । लेकिन पूर्ववर्ती युग से ही परिवर्तन की यह प्रवृत्ति जारी थी । क्यों कि राम, लक्ष्मण आदि का मलयालम की प्रकृति के अनुसार रामन्, लक्ष्मणन् आदि रूप ही प्रचलित मिलते हैं । लिप्यंतरण में भी औचित्य मूल कसौटी है ।

हिन्दी व मलयालम में काफी समानताएँ हैं । साथ ही उच्चारण की दृष्टि से अनुच्चरित ध्वनियाँ बहुत कम हैं - इन्हीं कारणों से उच्चारण की भाषावैज्ञानिक समस्याएँ कम हैं । फिर भी अज्ञान, प्रयत्नलाघव, मुख-सुख इत्यादि कारणों से 'मैं', 'ग्यारह', 'बारह' आदि का उच्चारण यथावत् होता है । मलयालम भाषी अपनी अक्षरात्मक भाषा के अनुकरण में हिन्दी का उच्चारण गलत करते हैं ।

इस समस्या का समाधान लिखावट के अनुसार वर्तनी के एकीकरण से मात्र संभव है । प्रचलित उच्चारण गलत होने पर भी जारी रखा जाता है जिससे कठिनाई और भी जारी रहती है । वर्तनी और उच्चारण का एकीकरण अत्यन्त आवश्यक है ।

अनुवाद करते वक्त यदि स्रोतभाषा से बढ़कर अच्छे एवं समान उच्चारण लक्ष्यभाषा में मिलते हैं तो उसे स्वीकार करना उचित है [1]। वास्तविकता तथा लोकप्रचलन सामने रखकर इसमें उचित निर्णय लेना अनुवादक का काम है । इसमें ध्वनीय शैलीविज्ञान सहायक रहेगा । ध्वनि को लक्ष्यभाषा में प्रयुक्त करते वक्त जाने-अनजाने अनुवादक भाषा वैज्ञानिक पक्ष को भी छूते हैं । उनमें मुख्य प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं [2]।

1 • भाषण, ध्वनि, स्वराघात, स्वरकंपन और लय की अभिव्यंजना

लिखित अथवा उच्चरित ध्वनियों में समानताएँ होना चाहिए । संयोजित, व्यवस्थाबद्ध रूप में ही प्रवाहमयता होती है । पद्य में ध्वनिलय होती है, गद्य में ताललय । ध्वनिलय संगीतात्मक होता है । उच्चारण में लयबद्धता, उतार-चढाव की स्थितियों को बनाए रखना भाषा के सौन्दर्यशास्त्रीय स्वरूप की रक्षा करना है । अतः ध्वनिसौन्दर्य भाषा, मुख्यतः बोलचाल तथा औपचारिक भाषा को सुष्ठु बनाता है । सृजन में ध्वनि की महत्ता है, अनुवाद में भी । संगीत का आरोह-अवरोह कृतियों की

---

1 डॉ • मनोहर सराफ, डॉ • शिवाकान्त गोस्वामी - अनुवाद सिद्धान्त एवं स्वरूप पृ • 22
2 सुरेश विद्यालंकार - ध्वनीय शैलीविज्ञान भाषा 1966 सितंबर पृ • 44 •

मनोहारिता है । शब्दों के चयन के पीछे वर्तमान लगन ध्वनिमहत्व की है । 'ए' 'ओ', 'आ', 'ई', ऊ', 'औ', 'ऐ' आदि ध्वनियाँ अभिव्यंजक हैं । शारीरिक वेदना या अन्य भावप्रकाशन में इनका प्रयोग सार्वत्रिक है । 'न' का आवृत्तिमूलक प्रयोग भी इसप्रकार अभिव्यंजक है । इनका अनुवाद समानार्थी 'व्याक्षेपक रूपों' से मलयालम में होना चाहिए । ये वाक्य संरचनात्मक रूप नहीं, स्वतन्त्र प्रभावपूर्ण इकाई हैं जिनके कोशार्थ नहीं, प्रयोगार्थ मात्र हैं[1]। भाषावैज्ञानिक दृष्टि से ये अलग स्वनिम व्यवस्था है, जिसकी पारिवारिक विशेषताएँ होती हैं ।

2 ·भावाधिक्य अथवा बलाधिक्य के संदर्भ में ध्वनियाँ

अनुवाद का विचार संक्रमण तभी सार्थक और पूर्ण होगा जब प्रोताभिव्यक्ति का मनोभाव लक्ष्याभिव्यक्ति में भी महसूस होने लगता है । मनोभाव के परिवर्तन से अभिव्यक्ति का तान बदलता है । विस्मयादिबोधक ध्वनियों की सार्थकता पर विश्लेषण करना भावाभिव्यक्ति के प्रसंग में मात्र संभव होता है[2]। कोई अन्य शब्द से इसकी भावस्फूर्ति नहीं होती । इसप्रकार भावाधिक्य में ध्वनियों का प्रयोग विशिष्ट होता है । 'धत्, छि, ओ, अय्यो' आदि इनके उदाहरण हैं ।

3 ·ध्वनिअनुकार शब्दों की समस्या

कर्ण गोचरता केलिए 'झरझर, मरमर, फटफट, हिनहिनाना' आदि जो अनुकरणात्मक शब्द व प्रयोग मिलते हैं, वे कभी भाषीय होते हैं, कभी सार्वत्रिक । अभिव्यंजना के पक्ष से ये भाषागत होते हैं । भावव्यंजना में ये शब्द भाषा की उत्पत्ति मूलक भी बताए जाते हैं ।

4 ·भाषण ध्वनियों का मुखर मूल्य

विशिष्ट सामाजिक संदर्भ अनुवाद में दिक्कत पैदा करनेवाला है । आंचलिक कृतियों के अनुवाद में सर्वाधिक यही समस्या है । ध्वनियों का उलट पुलट कर उच्चारण व्यक्तिबद्ध होता है लेकिन उनका व्यापक सामाजिक स्वरूप होता है । उसकी अभिव्यक्ति वहाँ की जनता को लुभानेवाली होती है । इसको प्रान्तीय आँको दूसरी भाषा में उभारना कठिन है, कभी कभी असाध्य । सामाजिक संदर्भ के अनुसार हिन्दी भाषा की विशेषताओं में अंतर आ जाता है । बलाघात, स्वराघात आदि में अंतर आ जाता है । अशिक्षित या असंस्कृत लोगों की बोली तथा साहित्यिक भाषा का अंतर भाषागत रीतियाँ हैं । अव्यवस्थित होने पर भी इनका अनुवाद करना पडता है ।

साहित्यिक भाषा में भी ध्वनियों की मुखरता में अंतर है । हिन्दी प्रदेश के विद्वान लोगों से भी 'स, श, ष'आदि ध्वनियों का उच्चारण भिन्न भिन्न रूप में किया जाता है । मलयालम का उच्चारण तमिल के प्रभाव से संपन्न है[3]। इसलिए उसमें स्पष्टता है ।

---

1 ·के ·एम ·प्रभाकरवारियर - मोषियुं पोरुळुं पृ ·57

2 ·सुरेश विद्यालंकार - ध्वनीय शैलीविज्ञान भाषा सितंबर 1966 पृ ·46 ·

3 ·जगदीश प्रसाद कौशिक - भाषावैज्ञानिक निबन्ध पृ ·11

5 अनुप्रास का मुखर मूल्य

ध्वनिसौन्दर्य प्रत्येक रचना में मुख्य है। रचयिता रचना को विशिष्ट व स्तरीय बनाने के हेतु इसका प्रयोग करता है। साहित्य में वर्ण्यविषय के अनुरूप ध्वनियों का प्रयोग विशेषकर होता है। युद्धप्रसंग में 'ट'वर्गीय ध्वनियों तथा प्रेमप्रसंगों में तरल ध्वनियों का प्रयोग इसका कारण है।

अनुप्रास का उपयोग अलंकृत संदर्भों में प्राय: मिलता है। हिन्दी-मलयालम अनुवाद में ध्वनिसौन्दर्य को बनाए रखने के लिए संस्कृत तत्सम, तद्भव शब्दों का खूब सारे प्रयोग व्यवहार में हैं। अनुप्रासों का लयात्मक प्रवाह साहित्य में बनाए रखने को कोशिश अनुवाद में हमेशा सफल नहीं होती।

6. रीति की अभिव्यंजना

यही शैली की पहली सीढी है। प्रयोग के अनुसार गुण या विशेषता को सूचित करने के लिए विशिष्ट ध्वनि का उपयोग होता है। ध्वनि ही वह मौलिक सौन्दर्य है जो शिल्पपक्ष के साथ भावपक्ष को भी गरिमा प्रदान करती है। एक ही शब्द के विभिन्न पर्याय होते हैं। श्रुतिमधुरता, औचित्य और अभिव्यंजना को ध्यान में रखकर अनुवाद करना चाहिए।

ध्वनिविज्ञान के उपर्युक्त पक्षों का पालन श्रुतिकटुत्व को मिटा देता है। वैज्ञानिक युग में ध्वनिविज्ञान संबन्धी इन विशेषताओं को लेकर काफी अध्ययन विश्लेषण हुआ है ताकि यंत्रानुवाद में ध्वनिसंबन्धी समस्या न हो। हिन्दी-मलयालम के प्रसंग में अभी भी रहती है। पर ध्वनिशास्त्र पर आधारित यान्त्रिक पद्धति और अनुवाद, समस्याओं को दूर करते हुए स्वस्थ दिशा की ओर अग्रसर है। ध्वनिविज्ञान से ही तान और अनुतान की समस्याएं सुलझ सकती है। एक ही वाक्य के विभिन्न शब्दों या ध्वनियों पर आधारित बलाघात से अर्थ में अंतर आ जाता है। जैसे - 'वह आ रहा है।' - यह वाक्य विभिन्न संदर्भों में विभिन्नार्थी हो सकता है। इसमें वक्ता के मनोविज्ञान या मनोवांछित भाव का पुट आता है। जैसे -

वह आ रहा है - अवन् वरुन्नुण्टु (सूचना मात्र)
- अवन् (मात्र) वरुन्नुण्टु (दूसरा नहीं)
- आश्चर्य की सूचना (!)
- दूर से देखकर सूचना देना
- जल्दी क्या है, वह आ रहा है।
- आश्चर्यसूचक प्रश्न (?)

प्रसंगाश्रित ऐसे भेदों का अध्ययन भाषाविज्ञान पर आधारित है।

अनुवाद और रूपविज्ञान

वाक्य संरचना के रूपायन का तात्पर्य रूपविज्ञान से है। शब्दों का रूपधारण से ही भाषा अर्थवान होती है। प्रत्येक भाषा की रूपात्मक विशेषताएं होती हैं।

वे अन्य भाषा से अलग होती हैं । इस अंतर से अनुवाद में समस्याएँ उपस्थित होती हैं । एक भाषा के रूप का दूसरी भाषा में यथावत् रूप मिलना हमेशा सरल नहीं होता । इसमें उपस्थित मुख्य समस्याएँ दो हैं - (1) शब्द रूप का अंतर (2) शब्द वर्ग का अंतर ।

1 • शब्द रूप का अंतर

हिन्दी-मलयालम अनुवाद के संदर्भ में कभी कभी शब्दरूप का अंतर दिखायमान है । संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण आदि के उपयोग और रूपों में अंतर होता है । व्याक्षेपक सर्वनाम भी इसप्रकार के हैं । क्रियाविशेषण के बदले 'दिनेयेन्वं' का प्रयोग शब्दरूप के अंतर का मुख्य उदाहरण है ।

2 • शब्द वर्ग का अंतर

हिन्दी में संज्ञा रूप मात्र से लिंगवचन की सूचना नहीं मिलती, जहाँ मलयालम में मिलती है । रूपरचना से इनकी सूचना प्राप्त करना अनुवाद में कठिन होता है । यद्यपि आपसी संबन्ध से कुछ पता चलता है तथापि हमेशा उसपर निर्भर नहीं रह सकते । अत: नियमों के बावजूद भी भाषा के शब्दवर्गों का अंतर भाषाई कमी है जो अनुवाद में और बडी समस्याओं को पैदा करती है । मलयालम से हिन्दी में अनुवाद करते वक्त लिंग-वचन रूपों की समस्या गंभीर होकर आती है ।

व्याकरणिक गलतियाँ तथा कमियाँ रूपात्मक विशेषताओं तथा असमानताओं को खडी करती हैं । संज्ञाओं को, सजीव तथा निर्जीव वर्गों में बाटने की रीति से उत्पन्न लिंग संबन्धी विशेषताएँ रूपात्मक समस्याओं में मुख्य हैं । उर्दू, अंग्रेजी तथा अन्यभाषा प्रभाव से हिन्दी तथा मलयालम में रूपात्मक अंतर आए हुए हैं । अत: रूपविज्ञान से निर्धारित अंकन, आकलन तथा निष्कर्ष अनुवादक केलिए सहायक है ।

अनुवाद और वाक्यविज्ञान

अनुवाद और वाक्यविज्ञान का निकट संबन्ध है । क्यों कि वाक्यविज्ञान ही वह अंग है, जिससे अनुवादक वाक्यरचना की महत्ता का आभास देता देता है । संरचना की व्यवस्था देने केलिए जहाँ रचनाकार स्रोतभाषा के वाक्यविज्ञान पर आधारित होता है, वहाँ अनुवादक लक्ष्यभाषा पर आधृत है । अनुवादक को सर्जक से बढकर यहाँ सतर्क होना चाहिए कि लक्ष्यभाषा की वाक्यसंरचना अलग प्रकार की होती है ।

भाषावैज्ञानिक दृष्टिसे वाक्ययोजना के निम्नलिखित पक्ष विचारणीय है :-

वाक्य की बाह्य एवं आंतरिक संरचना

बाह्य संरचनावाले वाक्यों का भावानुवाद ही स्तरीय निकलता है लेकिन बाह्य के साथ आन्तरिक संरचना भी है तो अनुवाद में भी विभिन्नार्थसूचना बरतनी पडती है । यह हमेशा संभव नहीं होता । संदर्भ के आधार पर अर्थस्तर और

वाक्यसंरचना का आशय समझ लेते हैं जिसकेलिए वाक्यविज्ञान सहायक है । जैसे - 'वह गानेवाला है' वाक्य का हिन्दी में दो अर्थ हो सकते हैं कि 'वह अभी गानेवाला है' और 'उसकी गाने की आदत है' । अत: संदिग्ध वाक्यों के अनुवाद को आंतरिक व बाह्य संरचना को समझना कठिन है । पर उनका अनुवाद महत्वपूर्ण भी । प्रयुक्तशक्ति व भाषावैज्ञानिक ज्ञान अनुवादक को रास्ता दिखा देंगे । अत: उनकी सहायता से अनुवादक मलयालम में 'अवन पाटुं' (आदत), 'अवन पाटिक्कोण्टिरिक्कुन्नु' से उचित वाक्य को चुन लेगा ।

वाक्य के निकटस्थ अवयव

संरचना व्यवस्थापक्ष है । इसकेलिए आपसी संबन्ध आवश्यक है । भाषा रूपों का आपसी संबन्ध ही वाक्यरचना की बुनावट है । निकटस्थ अवयव के आधार पर, बोलने की ढंग और तान के अनुसार, अर्थ में बदलाव आ जाता है । इसकी वैज्ञानिक व्यवस्था को समझे बिना अनर्थ की संभावना बनी रहती है । शब्दों की निकटता मात्र इसका नियामक नहीं, वाक्यवैज्ञानिक संबन्ध है । उदाहरण केलिए 'रुको मत जाओ' वाक्य में अर्थाभास होता है कि इसका अर्थ 'रुको, मत जाओ' है या 'रुको मत, जाओ' है । ग्रंथरचना में ऐसा प्रयोग होता भी है जिसका संदर्भाश्रित सहायता रहने पर भी हमेशा अर्थग्रहण संभव नहीं होता । अत: यहाँ भी हमेशा वाक्यविज्ञान की दृष्टि से निकटस्थ अवयव की जानकारी आवश्यक है । इस दृष्टि से मलयालम में भाषावैज्ञानिक गलतियाँ कम हैं, लेकिन मलयालम भी पूर्णत: शुद्ध नहीं । अच्छे विद्वान भी कभी कभी इसप्रकार त्रुटियों का शिकार होते हैं ।

प्रयोगविधि

प्रत्येक भाषा की रीति अलग है । उसके अनुसार ही प्रयोग होता है । अत: भाषा में अपने व्याकरण तथा प्रयोगविधि से निर्धारित रूप प्रयुक्त होते हैं । व्याकरण के साथ भाषावैज्ञानिक व्यवस्था इसका वैज्ञानिक पक्ष है । व्याकरणिक नियमों के अलावा कुछ ऐसी क्रियाएं हैं जिनमें अर्थपुष्टता केलिए दूसरे प्रयोग व्यवहार में है । 'मैं तुमसे प्यार करता हूँ' वाक्य का अनुवाद 'ञान निन्ने प्रेमिक्कुन्नु' है । (ञान निन्ने प्रेमं चेय्युन्नु नहीं है) उसी प्रकार 'नाश्ता करना, यादन करना' इत्यादि अनेकों भाषागत रूप हैं जिनकेलिए केवल भाषाविज्ञान ही उत्तर दे सकते हैं ।

भाषाविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी व मलयालम भाषाओं का विश्लेषण लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल, पदक्रम, शब्दचयन आदि भिन्न भिन्न स्तर पर संभव है । ये व्याकरण के अध्याय में चर्चित हुए हैं इसलिए यहाँ विस्तृत चर्चा वांछनीय नहीं ।

वैयक्तिक अभिव्यक्ति अनजाने उत्पन्न भी हो सकती है । व्यवस्था का संबन्ध भाषाविज्ञान से भी । भाषा की प्रवाहमयता व्याकरण से बढ़कर भाषाविज्ञान का विषय है । द्विवार्थबोधक, पर्यायवाची तथा नानार्थवाची शब्दों या वाक्यों का अध्ययन विश्लेषण भाषाविज्ञान के नीचे ही संभव व पूर्ण रहता है । आशुभाषण में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है ।

उदा 'सति नटन्न राजस्थानिल पोयि' - इस वाक्य के (1) 'सति नामक लडकी जिस राजस्थान से चली थी वहाँ' या (2) 'सति (धार्मिक अनुष्ठान) घटित राजस्थान में' दो अर्थ निष्पन्न होते हैं । यह मूलभाषा की कमी या त्रुटि है ।

इसी प्रकार 'अवनुकोडुक्कान मनस्सिल्ल' - वाक्य के दो अर्थ हो सकते हैं - (1) उसको देने का हक (मुझे) नहीं । (2) उसे देने का हक नहीं (दूसरे को) ।

वाक्यविज्ञान की सहायता से ही ऐसे प्रसंग सूझ सकते हैं । वस्तुतः अनुवादक एक भाषा के ही नहीं, परोक्षतया दोनों भाषा के परीक्षक हैं । मूललेखन की त्रुटियों, कमियों तथा भाषागत वैरूप्यों को इन्हीं के हाथों से मुक्ति मिल सकती है ।

अनुवाद और अर्थविज्ञान

अनुवाद भाषान्तरण से बढ़कर भावान्तरण है । भावाश्रित अनुवाद ही श्रेष्ठ बताया जाता है । यद्यपि बाहरी तत्व असादार है तथापि भावतत्व ही नियामक है । शाब्दिक अनुवाद अनर्थ होने का कारण भी यही है । भाव का अनुवाद होने पर भी अनुवादक को सतर्क रहना चाहिए कि किस संदर्भ का अनुवाद वह कर रहा है, उसका बाहरी रूप कौनसा है और उसको अनुवाद में कैसे ढाला जासकता है । अर्थानुसार ,अर्थात् भावपक्ष के साथ शिल्पगठन भी किया जाना चाहिए । एक भाषा में कितने प्रतीकात्मक ,व्यंजनात्मक तथा अप्रस्तुत योजना से पूर्ण शब्द व वाक्य आ जाएँगे, उन सबको लक्ष्यभाषा में बिना किसी अंतर के साथ अनुवाद करना पडता है ।

अर्थविज्ञान को ध्यान में ले लें तो हिन्दी-मलयालम अनुवाद में निम्नलिखित तत्व विचारणीय हैं ।

काल

जैसे कालखण्ड की प्रधानता -प्रमुखता , शब्द तथा व्यापक संदर्भ, वाक्य या मुहावरे की सृष्टि करता है, अर्थ बदलता जाता है । पुरातन काल से लेकर आजतक भाषा की जो विकासरेखा है वह कालविशेष की घटनाओं तथा विशेषताओं से संबन्धित है । अनुवादक को यह ध्यान देना चाहिए कि स्रोतभाषा (हिन्दी हो या मलयालम) में व्यवहृत प्रचलित अर्थ लक्ष्यभाषा में है या नहीं । यदि नहीं है तो इसका पूर्ण अर्थ द्योतित करनेवाले अन्य शब्द की खोज करना पडता है । उदाहरण केलिए हिन्दी व मलयालम विभिन्न युगों में संस्कृत से प्रभावित है । संस्कृत के प्रभाव से व्युत्पन्न अनेकों शब्द दोनों भाषाओं में है । कभी कुछ का समान अर्थ है तो कभी भिन्न अर्थ । 'मृग' शब्द का हिन्दी में 'हिरण' अर्थ है तो मलयालम में अर्थ 'जानवर' है । अतः अर्थ के इन आयामों से अनभिज्ञ अनुवादक 'मृग' का अनर्थप्रयोग कर बैठता है ।

स्थान

एक ही शब्द विभिन्न प्रान्तों या प्रदेशों में विभिन्न अर्थ में व्यवहृत होता है । केरल के ही विभिन्न शब्द ऐसे हैं । हिन्दी की बात कहने की नहीं कि विभिन्न बोलियाँ तथा शैलियाँ होने के कारण उसके शब्दों के अर्थ में परिणाम संभाव्य है ।

उदा: - अतु चाटू - उसे फेंको ।
अवन चाटि - वह कूदा ।

अतः 'चाटुक' क्रिया के दो भिन्न अर्थ मलयालम में व्यवहृत हैं । एक ही क्रिया का इस तरह की देश्यभेद से उत्पन्न अर्थस्थिति भ्रमात्मक है ।

संदर्भ

अर्थ की बात पर संदर्भ ही मूलाधार है । नानार्थ से जूझने केलिए संदर्भ ही सहायक होता है । कविता तथा अन्य सृजनात्मक साहित्य की अर्थकोटियाँ, अर्थविज्ञान के संदर्भ में ही आधृत होती है । 'नीलांबर' कहने से 'नील वस्त्र धारण करनेवाला' होता है, 'नील आकाश' भी । निकटस्थ अवयवों तथा प्रयोगविधियों से इसमें किसी एक को चुनाया जाता है ।

शब्दशक्ति

वाक्यरचना में पोषक तत्व के रूप में इसका विवेचन हुआ है । शैली से संबन्धित इनकी अर्थपरक विशेषताएँ होती हैं । लक्षणा, व्यंजना तथा अलंकारों की पुष्टि अर्थविज्ञान से संबद्ध है । पूर्णवाक्य के शिल्पविधान में जो व्यवस्था निर्धारित है, वह भाषा की वैज्ञानिक दृष्टि से संपृक्त होती है ।

पर्याय

विभिन्न भाषाओं के बीच पर्यायवाची शब्दों की समस्याएँ काफी उत्पन्न होती हैं । हिन्दी तथा मलयालम केलिए संस्कृत का आधार ठोस होने के कारण उनके अर्थ में आनेवाले अंतर कभी कभी अनुवादक को भ्रम में डालते हैं । अपेक्षाकृत सरल शब्द भी परेशानियाँ पैदा करता है कि उसका विशिष्ट भाव, सामाजिक संबन्ध व धार्मिक भावनाएँ अर्थ में अंतर डालता है । अपनी तरीके से अनुवादक इनको सुलझाता है, अतः शब्दों की निजी समस्याएँ, आर्थिक स्तर पर निश्चित व पूर्ण बना सकता है । पारिभाषिक शब्द चयन के पीछे यही रीति अपनायी जाती है ।

सांस्कृतिक आधार

भाषा के निजी शब्द की झलक इसका कारण है । वस्तुतः ऐसे शब्दों केलिए दूसरी भाषा में समान अभिव्यक्ति मिलना कठिन है । सांस्कृतिक शब्दावली से संपन्न कृतियों में पादटिप्पणी की भरमार देखी जाती है । अर्थस्तर का अगाध परिचय अनुवादक की क्षमता बढा देगा ।

अर्थविज्ञान की दृष्टि से शब्द का उद्धारक अर्थ है । अर्थतत्व ही वस्तु (शब्द) को स्थिर रखता है । 'वस्तु का वैज्ञानिक बोध उसके तत्वप्रक्षेपण होता है । शब्द स्वयं वाचक नहीं हो सकता है, यदि वह अभिधा का भार वहन करता है तो विचार सत्य के काल परिप्रेक्ष्य में 'राम' उदाहरण है ।'[1]

कल्पना के योग से अनुभूतिगत अर्थ की व्यंजना होती है, शब्द उसका बाह्य रूप है । शब्द के स्फोटन में अर्थ या भाव अलंकृत होता है । अर्थ की रसात्मकता सृजनप्रक्रिया की उपलब्धि का मूलप्रयोजन है । अर्थ में ही रस निहित है । दोनों में

---

1 सच्चिदानन्द प्रसाद - भाषा सितंबर 1964 पृ. 93.

इतनो आनुषोंकिक संबन्ध है कि एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता है, किंतु शब्दरूप रसउत्पादन में महत्वपूर्ण है । अर्थ के सुष्ठुप्रेषण के लिए नए-नए शब्दों का निर्माण होता है ।[1]

शब्दों को सामूहिक ऋजुता के स्फोट से वाक्य के द्वारा अर्थ का उद्भव होता है । अर्थ को स्पष्टता के वास्ते स्वर और व्यंजन अपेक्षित है । सार्थक शब्दों की रसात्मक व्यंजना से अपेक्षित अर्थ तब प्रस्तुत होता है जब प्रयुक्त शब्दों में व्यंजना को समान शक्ति निहित हो । अत: अर्थस्फूर्ति में बाह्यसौन्दर्य भी कभी कभी पोषक हो जाता है ।

अनुवाद में अर्थवत्ता की विभिन्न कोटियाँ

1. सूचना परक :- समाचार इत्यादि के क्षेत्र का अनुवाद सूचना परक होता है । आजकल हिन्दो का विकास राष्ट्रभाषा के रूप में होने के कारण सूचनापरक अनुवाद विकासशील है । केन्द्रसरकार को ओर से केरल के कार्यालयों में आनेवाले सूचनापरक संदेशों का (टेलेक्स) अनुवाद इस वर्ग में आता है ।

समाचार पत्रों केलिए भेजनेवाले सूचनापरक बातों का अनुवाद भी वर्णनात्मक किया जाता है । यह अर्थवत्ता का एक आयाम मात्र है न कि पुन: सर्जन ।

2. संघात परक :- इसमें साहित्यानुवाद आता है । सामान्य शब्द के साथ साहित्यिक व मानक भाषा इसमें आतो है । मर्मस्पर्शिता से युक्त विधाओं के अनुवाद में नए शब्दगठन तथा प्रयोग भी संघात परक अर्थ से युक्त होते हैं । स्रोतभाषा के ग्रामोण शब्दों का अर्थ लक्ष्यभाषा में संघातपरक होकर आता है । तभी अर्थप्रकटीकरण संभव है ।

3. विधान परक :- ज्ञान-विज्ञान के किसो एक क्षेत्र से संबन्धित किसी भी बात का अनुवाद विधान परक है । प्रत्येक वैज्ञानिक विषय को अपनी शब्दावलो तथा अर्थवत्ता होती हैं, जिनका उपयोग उस विषय तक सीमित है ।

4. स्थान परक :- यह अर्थविज्ञान पर आधारित है । स्थान-काल विशेषता-ओं से युक्त अर्थ का एहसास अनुवाद में दिक्कत पैदा करता है । यह भाषा की आन्तरिक समस्या है । अनुवादक को विषय और काल के साथ संदर्भ और प्रयुक्त देश या क्षेत्र को ध्यान में रखना चाहिए ।

अर्थविज्ञान पर आधारित अर्थान्तर की समस्याएँ अनुवाद में सामान्य है । भिन्न भाषाओं के शब्दों में अर्थ के परिमाण में देखनेवाले सामान्य या सीमित अंतर को अनुवादक, तुलनात्मक दृष्टि और वैज्ञानिक परिचय से अपेक्षाकृत रूप में कम कर सकते हैं । हिन्दी मलयालम भाषाओं में अनूदित साहित्य का भाषावैज्ञानिक अध्ययन

---

1. सच्चिदानंद प्रसाद - भाषा सितंबर 1964 पृ. 93

विभिन्न रूपों में हो सकता है -

एककालिक

व्यावहारिक दृष्टि से एककालिक भाषाविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है । अनूदित साहित्य को ध्यान में ले लूँ तो पत्राचार और कार्यालयीन अनुवाद इसके अन्तर्गत आते हैं । आशु अनुवाद ही इसका अगला चरण है । हिन्दी के व्यापक संदर्भ रहने के कारण हिन्दी-मलयालम अनुवाद में ऐसे बहुत सारे प्रसंग आते हैं । संसद में पेश सामग्री से लेकर राजपत्र में विज्ञापित सूचनाओं तक का अनुवाद एककालिक भाषाविज्ञान पर आधारित है ।

बहुकालिक और तुलनात्मक

प्राचीन या मध्ययुगीन संस्कृत साहित्य व संहिताओं का परवर्ती काल में अनुवाद निकला है । मध्ययुगीन पौराणिक ग्रन्थों का अनुवाद भी आजकल मिलते हैं । इसकेलिए दोनों भाषाओं के शब्द समूह या भाषा संबन्धी संरचनात्मक व्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर तुलनात्मक दृष्टि वांछनीय है । कालिदास के 'शाकुन्तलम्' का अनुवाद जहाँ तक सारी भारतीय भाषाओं में मिलता है । संस्कृत के साथ उन भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन के बिना यह संभव नहीं है । 'तुलसी' और 'कबीर' के अनुवाद केलिए भी यही भाषावैज्ञानिक दृष्टि अपेक्षित है । तत्कालीन व्रज या अवधी के साथ आज के मलयालम का प्रभावपूर्ण समता केलिए तुलनात्मक भाषाविज्ञान ही सहायक हो सकता है ।

अनुप्रयुक्त

अनुवाद एकपक्षीय दृष्टि से अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की एक शाखा है । राजभाषा या कार्यालय की भाषा का उपयोग और प्रयोग अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान पर आधारित है । हिन्दी के व्यावहारिक रूपों की सृष्टि इसी दृष्टि पर आधृत है । भाषाविज्ञान की इस शाखा के सिद्धान्तों तथा निष्कर्षों के अनुसार ही भाषा के उपयोगों में दिशा निर्देश होता है । टाइपराइटरों के निर्माण, कोश निर्माण, पाठ्यपुस्तकों तथा व्याकरणग्रन्थों का चयन इत्यादि बुनियादी कार्यों केलिए अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान से सहायता ली जाती है । कार्यालय के उपयोग केलिए, शासन संबन्धी सामग्री का पारिभाषिक शब्दावली निर्माण आजकल जो शुरू हुआ है, वह भी अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की दिशा में है । कम्प्यूटर अनुवाद के मूल में भी इसी शाखा का सहयोग है ।

वस्तुतः व्यावहारिक हिन्दी तथा मलयालम के रूप में आनेवाले सभी भाषारूप इसी शाखा के अन्तर्गत आते हैं ।

व्यतिरेकी

भाषाओं की समानता अनुवाद में सहायक है, उसी प्रकार भाषाओं की असमानता परेशान का विषय है । व्यतिरेकी भाषाविज्ञान भाषाओं के व्यतिरेकों को समझाते हैं जिसके फलस्वरूप अनुवाद की कठिनाईयाँ दूर हो जाती हैं । व्यतिरेकों के पूर्वज्ञान से अनर्थ की गुंजाइश कम होती है । हिन्दी-मलयालम भाषाओं के बीच पाये जानेवाले व्यतिरेकों का अध्ययन व्याकरण के संदर्भ में चर्चित है ।

वाक्य , मनोविज्ञान पर आधारित अवसरोचित अभिव्यक्ति होता है । अत: वैज्ञानिक दृष्टि से व्याख्या करें तो वाक्य का परम रूप विचार या भाव की व्यवस्था है जो भाषा या वाक्य के माध्यम से प्रकट हों । अर्थ की मांग के अनुसार वाक्य रचना होता है । प्रभाव को प्रश्रय देकर प्रयुक्त करनेवाले कोई भी वाक्य उपयोग तथा सौन्दर्य के धरातल पर पीछे नहीं पडता । अनावश्यक पदप्रयोग छोडने केलिए इस वैज्ञानिक दृष्टि की आवश्यकता है । अवांछित तत्वों को आसानी से पकड कर लक्ष्यभाषा को शुद्ध बनाने की यही रीति है ।[1]

सरलीकरण की प्रवृत्ति से प्रत्येक भाषा का वाक्यरूप वियोगात्मक होने लगा है। सटीक उच्चारण मिलना कठिन-सा बन गया है । उसी प्रकार बदलते परिवेश में कम शब्दों में अधिक व्यंजना भाषा की आधुनिक रीति बन गई है । बलाघात या स्वराघात से भाषा के शब्दों व वाक्यों में अंतर आ जाता है जिसका अनुवाद साधारण से बढकर समस्यापूर्ण है । उदाहरण केलिए तुम्हारे (तुम हारे) , समझाया (समझ आया) , निकला (निकल आ) इत्यादि में आनेवाले स्वराघात शब्दस्तर की असमानताएं पैदा करती है । आशु अनुवाद में आनेवाले ऐसे शब्दों के अनुवाद में अनर्थ होने की संभावना ज़्यादा है । मलयालम में वाक्यस्तर के निकटस्थ अवयवों में मिलनेवाली असमानताएं छोडें तो वियोगात्मक भाषा होने के कारण हिन्दी की तुलना में ऐसी भाषा-वैज्ञानिक समस्याएं कम हैं ।

आशु अनुवाद में संरचना के बदलाव भी हो सकता है । नाटक इत्यादि में भी बोलचाल की भाषा आने के कारण इसप्रकार के वाक्यों को सतर्कता से अनुवाद करना चाहिए । हिन्दी-मलयालम संरचनात्मक भाषाविज्ञान आपस में मिलते जुलते हैं । इसलिए इनकी असमानताएं बहुत कम हैं ।
उदा :- देखा तू ने, उसकी चालाक (हि ·) - कण्टो नी, अवन्टे सूत्रं (मल ·)
यहाँ भाषा का अंतर केवल स्थानान्तर है, अर्थान्तर नहीं । अर्थात् वर्गीकरण कथनात्मक, आज्ञार्थक और मनोभावात्मक रूप में हो सकता है । वाक्यगठन रूपात्मक , ध्वन्यात्मक तथा अर्थात्मक विशेषताओं से युक्त होता है । इसके आधार पर विस्मयादिबोधक, इच्छा-बोधक, विधिवाचक, निषेधवाचक, प्रश्नार्थक, आज्ञार्थक, संकेतसूचक आदि वाक्यों का गठन और अनुवाद सरल, मिश्र व संयुक्त वाक्यों में होता है । संकेतात्मक वाक्य केवल मिश्रवाक्यों में ही मिलता है, यह भी भाषावैज्ञानिक परिणाम है ।

प्रत्येक भाषा में निहित रूपविज्ञान तथा अर्थविज्ञान की विशेषताएं शब्दनिर्धारण करती हैं । चिडिया की चहक (पक्षिकळुटे चिलक्कल), हाथी की चिंघाड़ (आनयुटे चिन्नं) सांप की फुफ्कार (पाम्पिन्टे चीट्टल), कुत्ते की भौंक (पट्टियुटे कुर) आदि के निर्धारण में भाषा की निजी वैज्ञानिक विशेषताएं कारण बताया जाता है ।

- -

1 · अवधेश मोहन गुप्त - प्रारंभिक अनुवाद विज्ञान पृ · 57

निष्कर्ष

भाषावैज्ञानिक व्यवस्थाओं का भाषान्तरण अनुवाद है । इसकेलिए तुलनात्मक दृष्टि आवश्यक है । पर भाषा मनोविज्ञान पर आधृत रहने के कारण अभिव्यक्ति सहज है, उसको व्यवस्था हमेशा नियमाबद्ध नहीं होती । अत: औचित्य व क्षमता से उसका आकलन अनिवार्य है । वक्ता की मनस्थिति से श्रोता की मनस्थिति का तादात्म्य होना है । अभिव्यक्ति परायी होने के कारण अर्थस्तर की विशेषता पकड़ना मुश्किल होता है, क्यों कि भाषाविषयक समस्याएं अनन्तिम हैं । इसे कम करने केलिए, व्यवस्थापक्ष और नियोजित रूप की मांग होती है । मानकीकरण से घिस कर आनेवाली अभिव्यक्ति दिक्कत पैदा करती है । नैसर्गिक वस्तु की लीक पर त्रुटियां कम करने की कोशिश जारी है । अनुवाद को, कथ्य के साथ शिल्प रूप में भी सार्थक व पूर्ण बनाने में भाषावैज्ञानिक विशेषताएं महत्वपूर्ण हैं । अनुवादक प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में इनसे संबन्धित भी ।

****** ******

पांचवां अध्याय

हिन्दी और मलयालम में अनूदित साहित्य के आधार पर उनकी शैलीपरक समस्याएं

भाषा के स्वरूप निर्णय में व्याकरण, संरचना तथा भाषाविज्ञान के साथ प्रयुक्ति की महत्ता भी है। प्रयुक्ति या अभिव्यक्ति किसी भी भाषा में दो प्रकार की होती है। मौखिक तथा लिखित रूप में। इन रूपों में स्वरूपान्तर है। मौखिक प्रयुक्ति व्याकरणिक व संरचनात्मक दृष्टि में शुद्ध व पूर्ण नहीं होती, उसको सुधारने का अवसर भी प्रयोक्ता को नहीं मिलता। ये अधूरा होने पर भी आंगिक चेष्टाओं से युक्त होने के कारण प्रभावशाली हैं। लिखित प्रयुक्ति में व्यवस्थाबद्ध, साहित्यिक भाषा मिलती है जिसका स्वरूप सुधार-बदलाव से निष्पन्न स्वतन्त्र व स्तरीय रूप है।

अनुवाद में शैली

कथन व लेखन संदर्भाश्रित है। अतः विभिन्न चेष्टाओं, भावों, संचारी-भावों के प्रस्फुटन के साथ व्यक्ति मन की प्रयुक्ति विभिन्न भाव, तान व रूप धारण करती है। इस प्रकार की अवस्थाओं से शैली का सीधा संबन्ध है। भाषा के विभिन्न रूप संदर्भाश्रित है। अवसरानुकूल बोलना या लिखना सतत अभ्यास के द्वारा प्राप्त होनेवाली सुन्दर कला है।

भावप्रकाशन व्यक्तिबद्ध होता है। यथा शैली भी वैयक्तिक होती है। ऐसे संदर्भाश्रित कथन या लेखन के अनुसार भाषा या बोली को भिन्न-भिन्न रूप है, जिसे हम भिन्न नाम से पुकार सकते हैं। एक ही भाषा के अन्तर मिलनेवाली शासकीय भाषा, वैज्ञानिक भाषा, आराधन की भाषा, साहित्यिक भाषा इत्यादि उदाहरण हैं। इनकी शैलियां विभिन्न हैं। इन भाषारूपों के विभिन्न सौन्दर्यात्मक पक्षों का अध्ययन शैलीविज्ञान का विषय है। लेखक की विलक्षणता, औचित्यदीक्षा तथा सूक्ष्मदृष्टि इस भाषा के चयन में रहती है। अतः अनुवाद में भी इसकी रक्षा आवश्यक है।

सामान्यतः शैली का मतलब साहित्य तथा अन्य ग्रन्थों में आनेवाले प्रयोग विशेष से है। वास्तव में यह शैली भाषा की होती है। यह शैली, भाषा से अभिन्न रहनेवाली सामान्य रीति होती है। इसलिए इसका शब्दानुवाद संभव होते हुए भी अर्थपूर्ण नहीं रहता। क्यों कि शैली एक ओर भाषा की प्रकृति ही है।

रचना की सुन्दरता तथा विलक्षणता शैली पर आधारित है। किसी भी भाषा की किसी भी विधा या कृति को लेकर चर्चा करें तो उसका आकलन शिल्पपक्ष पर भी आधारित है। भाषा के इस तत्व का संकलन या मिश्रण ठीक नहीं है।

शैली के विभिन्न पक्ष

किसी भी भाषा की शैली व्याकरणवेत्ताओं या भाषावैज्ञानिकों के हाथ में नहीं है । भाषा परिष्कृत हो या अपरिष्कृत, शैली तो होती है । परिष्कृत भाषा में नूतन अलंकारों तथा भाषा प्रयोगों का जहाँ परिनिष्ठित शैली मिलती है, वहाँ अपरिष्कृत या ग्रामीण भाषा में मुहावरे तथा लोकोक्तियों की सुन्दर तथा सहज विधि मिलती है । अत: शैली का स्थान प्रमुख है ।

ग्रामीण बोली के मुहावरे तथा लोकोक्ति मिट्ठी के गुणों तथा परंपरा की रीतिरिवाज़ों से युक्त है । उन विशेष, कल्पित तथा सरस रूपों से युक्त भाषा, विज्ञान संपन्न तथा अर्थगर्भित होती है । इसकी अर्थसंपन्नता तथा सरस व्यंग्यात्मक स्वरूप देखकर इनका प्रयोग अन्यान्य भाषा भाषी भी उसी रूप में या भाषा की प्रकृति के अनुरूप बदल कर प्रयुक्त करने लगे । इससे इनका प्रचार प्रसार भी होने लगा ।

भाषा की निजता बनाए रखने में अपूर्व संपत्ति के रूप में शैली की ही महत्ता है । अन्य भाषा संकलन से कृत्रिम होनेवाली भाषा के प्रयोग विशेष और मेलमिलाव, शैली के आधार पर भाषा की प्रकृति के अनुरूप बदलना है । ऐसे परिप्रेक्ष्य में शैली ही एकमात्र रास्ता है, जो अन्य भाषा प्रभाव पर नियन्त्रण रखती है । भाषा को शुद्ध, औचित्यपूर्ण तथा सुकुमार बनाने केलिए शैलीभ्रंश को रोकना चाहिए । भाषा की चेतना तथा सौन्दर्य को बनाए रखने में शैली जहाँ तक उपयोगी है, वहाँ तक इसके आधार पर विभिन्न ढंगी अध्ययन भी हो सकता है । भाषा के अध्येताओं को शैली से भी इस दृष्टि से लाभ उठाना चाहिए । साहित्यिक शैलियों की महत्ता उनके रचनाकार तक को पहचानने केलिए उपयोगी है ।

प्रत्येक भाषा में विभिन्न शैलियाँ होती हैं । शैली पर प्रान्तीय, सामाजिक तथा सामुदायिक प्रभाव पड़ते हैं । इसलिए प्रत्येक भाषा की शैलियों के अन्तर अनेकों शैली भेद मिलते हैं । भाषा की व्यापक एवं सामान्य शैली जनता की स्वच्छ वृत्तियों की महक फैलाती है । सांस्कृतिक गरिमा को निष्पन्न करनेवाली शैली सांस्कृतिक फलक को प्रस्तुत करती है ।

सांस्कृतिक उन्नति की विभिन्न अवस्थाओं को पहचानने में शैली इसी दृष्टि से सहायक है । पौराणिक या प्रागैतिहासिक युग से अभी तक की भाषाई तथा सांस्कृतिक प्रगति तत्कालीन साहित्य से माने साहित्यिक शैली से प्रस्तुत होती है । जहाँ तक दृश्य कला भी शैली से विशिष्ट है । शैली तथा भाषा के आधार पर कृति, कालखण्ड या कृतिकार को पहचानने की विधि 'पदपरिचय' भी आज काफी विकसित है ।

अनुवाद में शैली की समस्या बड़ी दिक्कत पैदा करती है । एक भाषा में आनेवाली शैलीगत प्रयोग का समानार्थी प्रयोग दूसरी भाषा में मिलना हमेशा आसान नहीं है । कभी कभी समान मुहावरे या लोकोक्ति मिलती है । लेकिन अधिकाधिक

असंभव ही है । ग्रामीण या आंचलिक कृतियों के अनुवाद में ये ही समस्याएं प्रमुख हैं ।

शैलीगत प्रयोग व्याकरण या भाषावैज्ञानिक नियमों के अनुरूप होना हमेशा संभव नहीं है । साहित्यिक भाषा की स्वतन्त्र प्रवृत्ति मानक भाषा के व्यवस्थित ढांचे के बाहर रहती है । सामान्य भाषा सिद्धान्तों को मानते हुए भी विशाल है । व्याकरण सम्मत या मानक भाषाप्रयोगों के अलावा सामाजिक वृत्ति व वैयक्तिक अभिव्यक्ति दोनों साहित्यिक भाषा में मिलती है । अनुवादक की देन इसपर है कि अभिव्यक्ति माध्यम की दृष्टि से संसार के विविध भाषाओं से लाभ उठाएं । समय और संदर्भ से आपसी संपर्क बढनेवाला है । मानव मन के काल देशातीत एकरूपता, इस प्रकार अनुवाद का महत्वपूर्ण उप-फल बन जाती है ।

शैली के पक्ष में एक शिकायत है कि दूसरी भाषा के शैलीगत महत्व को देखकर उसे अपनाने का श्रम । यह काफी भ्रमात्मक और कृत्रिम बन जाता है । लेकिन भाषा मिश्रण भाषा की ढांचे को बदलनेवाला कभी नहीं होना चाहिए । आजकल प्रयुक्ति के अभाव से शैलीमहिमा कम रहने की आशंका है । अनुवादक इसके दोष से दूर रहे । कालानुसार परिवर्तन, परिवर्द्धन वांछनीय है पर अन्य भाषा प्रयोग आवश्यक मायने में मात्र होना चाहिए ।

शैली के विकास में साहित्य ही सर्वाधिक महान है । शैली की नींव भी साहित्य है । साहित्य का भ्रष्ट होना शैली का नाश है, क्यों कि भाषा की शैली गहराई तक पहुँची हुई है ।

वक्ता की रुचि तथा संदर्भ की मांग के अनुसार भाषाशैली में परिवर्तन आती है । गद्य में हो या पद्य में, भाषा नई प्रवृत्ति, रीति और शैली का सृजन करती है । इसमें ध्यान देने की बात यह है कि शैली का मतलब बात को घुमाफिराकर प्रस्तुत कर पाठक को असमंजस या अचंभे में डालना नहीं बल्कि समुचित तथा संदेहरहित आख्यान है । पाठक के अज्ञान से उत्पन्न होनेवाली त्रुटियों को यथावसर मिटाने के साथ अभिव्यक्ति को संक्षिप्त, साथ ही अर्थसंपन्न बनाना है । अनुवादक सतर्क रहें कि अन्यभाषा के कार्यों की पुन: सर्जना में मातृभाषा पीछे न छूट जाय ।

विभिन्न शैलियां

भाषा के विभिन्न रूपों में क्षेत्रीय प्रभाव बोलियों में अधिक पाया जाता है । वाक्यविन्यास व रूपों का अंतर ही भाषा की विभिन्न शैलियों का रूपायन करते हैं । हिन्दी के तीन शैलियों की चर्चा यहां विचारणीय बनती है । हिन्दी की विकास-यात्रा में तद्भव और देशज शब्दों का रूप विकसित होता हुआ दिखायमान है, जिसे हिन्दुस्तानी नाम से पुकारने लगा । इसमें अप्रचलित संस्कृत परंपरा के तत्सम शब्दों को शामिल कर स्तरीय रूप बनाने की कोशिश से 'हिन्दी' का रूप विकसित हुआ । हिन्दुस्तानी में अतिरिक्त अरबी-फारसी-तुर्की शब्द प्रयुक्त करने से उर्दू की व्युत्पत्ति हुई । इन तीनों के रूप, हिन्दी भाषा के मिलावट से व्युत्पन्न स्थानीय या क्षेत्रीय

बोलियों में हैं । अंग्रेजी शासन के कारण व्यावहारिक दृष्टि से व्युत्पन्न 'अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी' की शैली भी प्रयुक्त होने लगी [1]। ये शैलियां पूरी भाषा की हैं । अत: इनमें परिनिष्ठित शैली के रूप में 'संस्कृतनिष्ठ हिन्दी' को ले सकते हैं[2]।

इन तीनों शैलियों में व्युत्पन्न कृतियों-रचनाओं तथा अन्य व्यावहारिक भाषा रूपों के अनुवाद में क्षेत्रीय या स्थानीय अंतर की ओझलता बनाए रखना कठिन है । मलयालम को ले लें, तो भी मलबार तथा तिरुवितांकूर की भाषाशैली का आकलन दूसरी भाषा के संदर्भ में संभव नहीं । रचना की शैली का अनुवाद सीमित धरातल पर उसका अपना होता है । उसमें किसी प्रमुख लेखक की रचना का अनुवाद, एक भाषा की प्रतिनिधि रचना का अनुवाद है । साथ ही उस व्यक्ति के तथा उनके आंतरिक-बाह्य परिवेश का अनुवाद है । अत: शैली की चर्चा व्यापक व बहुस्तरीय है ।

एक ही वाक्य अवसरानुकूल विभिन्न संरचना के माध्यम से ढाल सकता है । अवसरानुकूल शिल्पगठन केलिए शैली का आवरण महत्वपूर्ण है । ये, मूल के शिल्प के आवरण के रूप में नहीं, लक्ष्यभाषाभाषी केलिए उपयुक्त और व्यावहारिक दृष्टि से संपन्न भी होना चाहिए । एक रचना की शैली समझने के बाद उनके उपयुक्त शब्दों व रूपों का निर्धारण करना है । बाद ही अनुवाद की कोशिश होती है । भाषा शिल्पप्रयोग, लेखक सापेक्ष होने के कारण शैलीप्रधान वाङमय की विभिन्न शैलियां प्रचलित हैं[3]। तत्सम या संस्कृत शब्दप्रधान शैली , आम शैली, बोलचाल की शैली, विदेशी वातावरण की सृष्टि केलिए विदेशी शैली, आलंकारिक शैली, सपाट शैली, सामान्य शैली, सरस शैली, गुंफित शैली, मुहावरेदार शैली, व्यापक शैली, उदात्त शैली, लाक्षणिक शैली आदि ।

विषय के अनुरूप इनमें किसी भी शैली को लेकर अनुवाद किया जाता है । वस्तुत: शैली निर्धारित करके अनुवाद करना है । पूरे वाङमय, शैली के अनुसार दो भागों में विभक्त है । 1 . शैली प्रधान - कविता, कहानी, नाटक, व्यंग्य, उपन्यास, लघुकथा, निबन्ध, गद्य काव्य, रेखाचित्र, संस्करण, जीवनी आदि । 2 . तथ्य प्रधान - विज्ञान, प्रौद्योगिकी, गणित, अर्थशास्त्र, समाज विज्ञान, विधि, प्रशासन, न्याय, दर्शन आदि ।

इनमें साहित्य विपुल और व्यापक है । इसके विविध प्रकारों को लेकर चर्चा करें तो शैली की चर्चा अनन्तिम होगी । शैली की दृष्टि से अनुवाद तभी उच्चकोटि का कहा जा सकता है जब अनुवाद मूलकृति की शैली का स्वनिम, शब्द, रूप और वाक्य के स्तर पर अधिकाधिक अनुसरण करता है । यदि मूल लेखक की वैयक्तिक शैली के ही अनुरूप अनुवादक की वैयक्तिक शैली रह जाए तो सोने पर सुहागवाली उक्ति चरितार्थ हो सकती है । मूल लेखक के व्यक्तित्व और रुचि के अनुसार शैली

- -

1 . डॉ . भोलानाथ तिवारी - हिन्दी भाषा की सामाजिक भूमिका पृ . 22

2 . डॉ . इबाहल सिङ काङजम - हिन्दी - मणिपुरी की क्रिया संरचना पृ . 29 .

3 . अवधेश मोहन गुप्त - प्रारंभिक अनुवाद विज्ञान पृ . 47-48 .

इतिवृत्तात्मक, प्रसादपूर्ण, अलंकृत, गंभीर, भावमय, हास्य-केन्द्रित, सरल, सुबोध, सुगम या व्यंग्यमय हो सकती है । पर सर्जना के आयामों का पारावार नहीं होता, अत: इसमें विवाद का न रहना असंभव है ।

शैलीगतसमस्याएं और समाधान

भाषा की बाह्य परिस्थिति में व्याकरण का नियम लगाया जाता है । मनोविकार की सूचनात्मक इकाईयों की आंतरिक संरचना में भाषावैज्ञानिकता का स्पष्ट प्रभाव है । इन प्रभावों का शैलीपरक भाषाविज्ञान के अन्तरगत माना जाता है । जो कथ्य से घुल मिल गया हुआ दिखाई पड़ता है । यह वक्ता के अपने सामाजिक, सांस्कृतिक और भौतिक विशेषताओं को सामने लाती है । तथ्य के साथ शिल्प का अनुवाद असंभव रहने के कारणों से यही मानसिक व संदर्भगत प्रभाव है । इस प्रभाव के एहसासों में शिल्प की महिमा प्रमुख भी है । आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'शिल्प' की चर्चा और भी महत्वपूर्ण ठहरती है । शैलीप्रभाव की दृष्टि से लेखक या साहित्य तक को आंकने की प्रवृत्ति वर्तमान युग की देन है । अत: शैलीविषयक अध्ययन का अनुवाद में महत्वपूर्ण स्थान है ।

अनुप्रयोग भाषाविज्ञान की दृष्टि से अनुवाद का संदर्भगत आकलन किया जाता है और औचित्यानुसार अनूदित सामग्री का मूल्यांकन किया जाता है । इस संदर्भ में शैली की निम्नलिखित समस्याएं प्रस्तुत होती हैं -

चयन

अनुवाद में चयन की महिमा अनिवार्य है । शैली की प्रतिष्ठा में इसका महत्व अनन्य भी । एक भाषा में उपलब्ध पर्याय-गुच्छों से जो अभिव्यक्ति प्रसंग तथा उद्देश्य के उपयुक्त हो, उसका चयन उसकी शैली निर्धारित करती है । मूलभाषा के आवरण शैली को समतुल्य शैली की लक्ष्यभाषा में प्रयुक्त करना अनुवाद की शर्त है । अत: शैलीविज्ञान का योगदान भी यहाँ उल्लेखनीय है कि वही शब्दानुवाद की प्रवृत्ति रोक कर भ्रान्तियों का निवारण करता है और अच्छे अनुवाद की संभावनाएं खोलती है । इस तरह के चयन पर आश्रित अध्ययन लेखक तक की पहचान करने में सहायक है । सांस्कृतिक शब्दों से युक्त व्याख्यात्मक शैली को 'प्रसाद' में और गांव-कसबे की महक लिए हुए बोलचाल की मुहावरेदार शैली को 'प्रेमचन्द' में मानने कीरीति इसी वजह से उत्पन्न व प्रसिद्ध हुई है । अध्यतन युग में इसतरह लेखक की पहचान की नवीनतम रीति 'पदपरिचय' भी विकासपथ पर है ।

चयन की समस्या शब्द, ध्वनि, कथ्य और रूप के स्तर पर वाक्य संरचना में बाधक है । रचनाकार की मानसिकता से तादात्म्य स्थापित करना अनुवादक केलिए तभी अनिवार्य बन जाता है ।

ध्वनिचयन

वस्तुत: ध्वनियों का व्यवस्थित उपयोग अनुवाद में खरा नहीं उतरता । क्यों कि स्रोत-लक्ष्य भाषा की ध्वनियों में अंतर हो सकता है । समानता होते हुए भी प्रयोगान्तर बना रहता है । हिन्दी-मलयालम भाषाएँ भी इसके अपवाद नहीं हैं । दीर्घ-ह्रस्व उच्चारण के अंतर से प्रायः इन दोनों के अनुवाद में देखने को मिलती है । जैसे - मलयालम के नामों तथा जातिनामों का हिन्दी में अंतर है । देवकि(मल) देवकी(हि), तकषि (मल·) - तकषी (हि ·), कुरुप (मल ·) - कुरूप (हि ·) । स्वरों के चयन में देखनेवाले इन अंतरों के कारण अनूदित सामग्रियों में साधारण दृष्टि से भी रूपान्तर दिखायमान है ।

ध्वनिचयन की समस्या गाँव-कसबे की बोली या भाषा के अनुवाद में सर्वाधिक है । हिन्दी-मलयालम भाषाओं के अनुवाद में ऐसे अनेकों उदाहरण उद्धृत कर सकते हैं ।

'सुखदा' का मलयालम अनुवाद 'सुखद' नाम से निकला है[1]। 'चेम्मीन' का हिन्दी अनुवाद 'मछुवारा' नाम से प्रसिद्ध है[2]। इनमें ध्वनिविकार, ध्वनि अनुकार आदि संबन्धी उदाहरण हैं । नाटक इत्यादि रंगमंचीय कलाओं में ध्वनियों की प्रमुखता प्रभावरूप में है । व्याक्षेपक सर्वनाम या संबन्धबोधक सर्वनामों के स्वरूपों में दोनों भाषाएँ विभिन्नता रखती हैं । हिन्दी में 'रा· ·म' पुकारता है तो मलयालम में दीर्घान्तता 'रामा प्रयुक्त है ।

शब्दचयन

शब्दचयन की समस्या गठन पर आश्रित मात्र नहीं है । आर्थिक धरातल पर भी कठिन है । एक ही शब्द के पर्यायवाची, समानार्थी शब्द कई मिल सकते हैं । अत: औचित्य के बल पर उसमें एक को चुनना होगा । अनुवाद में शब्द न मिलने के प्रसंगों की कमी भी नहीं रहती । क्षेत्रीय भाषाओं तथा बोलीविशेषों के प्रभाव से उत्पन्न शब्दविकार को अनुवाद में प्रस्तुत करना संभव नहीं है । अन्य भाषा के उपसर्ग तथा प्रत्यय जोड़कर शब्दचयन की रीति हिन्दी व मलयालम दोनों में चलती है । यह अनुवाद के संदर्भ में सुविधापूर्ण भी है ।

हिन्दी तथा मलयालम के अनूदित साहित्य को ले लें तो शब्दों का अनेकार्थी प्रयोग होते हुए दृष्टिगत होता है । अभिधार्थ, लक्ष्यार्थ, व्यंजनार्थ इत्यादि अनुवादक की कुशलता पर व्यक्त होते हैं । उदाहरण देखिए 'चिन्ताविष्टयाय सीत' नामक कुमारन आशान् के काव्य के अनुवाद हरिहरन उण्णित्तान द्वारा 'सीता' नाम से(1974 राघवन् एस के द्वारा 'चिन्ताविष्टयाय सीता' नाम से(1974), तथा सुधांशु चतुर्वेदी के द्वारा 'त्यक्ता के आँसू' नाम से (1976) निकले हैं । अर्थ के धरातल

- -

1 ·यशपाल - सुखदा 1955, अनु: ई·के·शारदादेवी - सुखद 1961
2 ·तकषि - चेम्मीन 1956, अनु: भारती विद्यार्थी - मछुवारा 1991

पर सूक्ष्म विश्लेषण करें तो इनमें स्पष्टतः अन्तर है । पर प्रभाव को सामान्य परिणति को दृष्टि में लेकर देखें तो अनूदित हो मालूम पड़ता है । इसी प्रकार 'वैकम मुहम्मद बषीर' के उपन्यास 'बाल्यकालसखि' के अनुवादों में भी शब्दान्तर देखा जा सकता है । 'रत्नमयी दीक्षित'(1971) तथा 'सुधांशु चतुर्वेदी' (197?) ने उसी नाम से उसके अनुवाद किए हैं तो 'भट्टतिरि' ने इसका नाम 'शाहजादी' उपयुक्त समझा ।

इसीप्रकार अनेकों उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं, जिनमें मूल तथा लक्ष्य भाषा में अर्थान्तर का गणनात्मक अंतर दृश्यमान होता है । जैसे - 'निङ्ङळ एन्ने कम्यूणिस्टाक्कि' का अर्थ है - 'तुम मुझे कम्यूणिस्ट बना दिया' – तोप्पिल भासी के इस प्रसिद्ध मलयालम नाटक का अनुवाद श्री लक्ष्मण शास्त्री ने भावार्थ के तौर पर 'उत्थान' (1969) नाम पर किया है ।

अतः शब्दचयन की महिमा अर्थ के आधार पर निश्चित करना वांछनीय होगा । पर इस स्वातन्त्र्य को प्रेरणा से अनुवादक मूलमुक्तानुवाद कर बैठे तो साहित्यिक कृतियों के सौन्दर्य के आस्वादन में अंतर आ जाएगा । मातृभाषी की मानसिकता से विदेशी की मानसिकता न मिलने का यही कारण है । लेकिन भावार्थ का और भी ओझल हो जाने केलिए भावानुवाद समर्थक भी रहता है ।

<u>रूपचयन</u>

रूपचयन संबन्धी विशेषताएं भाषा की प्रकृति से संबन्धित हैं जो प्रत्येक भाषा की अलग-अलग होती हैं । हिन्दी व मलयालम भी इसके अपवाद नहीं हैं । पर संस्कृत भाषा के प्रभाव व प्रसार की भूमिका ने इन दोनों भाषाओं के रूपों पर भी वियोगात्मकता के मार्ग पर ही सही, प्रभाव डाला है । तद्भव तथा तत्सम रूपों का खूब सारे प्रयोग दोनों भाषाओं में प्रचलित है ।

सामान्य भाषाप्रयोग को ले लें तो रूपवैभव के अनेकों उदाहरण ऐसे हैं जो भाषागत हैं । हिन्दी नाटकों में मिलनेवाले बोलचाल के प्रयोगों में करा, मेरे को, मेरे से, काहे का जैसे रूपों का अनुवाद शुद्ध भाषा में मात्र हो सकता है । लेकिन अनुवाद करने पर भी उसका यथावत् प्रभाव नष्ट हो जाता है ।

'चेम्मीन' का हिन्दी में 'मछुआरा' नामक जो अनुवाद निकला है, केरल के तटीय प्रदेश के रीतिरिवाज़ों तथा सामाजिक गतिविधियों से संपन्न इस उपन्यास के भाषारूपों को यथावत् उभारने में 'भारती विद्यार्थी' सक्षम निकला है - इसका वादा नहीं कर सकते । इसके अनेकों शब्द-वाक्य रूपों का हिन्दी मानक भाषा में अनुवाद हुआ है । ग्रामीण भाषाप्रयोग के अग्रगण्य 'वैक्कम मुहम्मद बषीर' के उपन्यासों के अनुवादों से भी इसप्रकार के उदाहरण उल्लेख कर सकते हैं ।

वाक्यचयन

यह संरचना की समस्या ही है । पर यहाँ भी चयन की महिमा लगातार अनुवादक को भ्रम में डालती है । वाक्य संरचना के वैविध्य से अनुवादक को चयन की कुशलता दिखानी चाहिए । ध्वनि, शब्द तथा रूप के सम्मेलन से वाक्य मिलता है । अतः इनसे संबन्धी चयन की समस्याएँ भी वाक्य चयन में निपटना पड़ता है । 'आना' क्रिया की आसन्न रूप रचना 'आती हूँ', 'आ रही हूँ', 'अभी आयी', 'जी आयी' जैसे विभिन्न ढंग से मिल सकते हैं । चयन की महत्वपूर्ण भंगिमा के अनुसार वाक्य तथा संदर्भ को शैलीपूर्ण बता सकता है ।

एक ही रचना के विभिन्न अनुवाद लेकर वाक्यचयन की भंगिमा समझ सकता है तथापि इससे ही अनुवाद का स्तर ऊँचा हो सकता है । रचनाकार के मनोवांछित अर्थ तथा भाव के संप्रेषण केलिए उस शैली को आत्मसात करना पड़ता है जो रचना की शैली है । चयन ही इसे बढ़िया बना सकता है । इस प्रसंग में इसकी आज़ादी अनुवादक को दी जाती है कि वह निर्दोष प्रसंगों में कुछ तकलीफ़ उठाए बिना कार्य संभाले । वाक्य का मर्म पहचान कर कार्य करना न्याय है ।

विचलन की समस्या

विचलन अभिव्यक्ति कौशल को प्रदर्शित करनेवाला होता है । शैली की व्यंजकता से इसका प्रौढ प्रयोग होता है । विचलन से ही काव्य आदि में अनेकार्थ व्यंजना परिलक्षित होती है । विचलन के इन आयामों का यथावत् अनुवाद कठिन है । शब्द, पद और वाक्य के स्तर पर यह दिखाई पड़ता है ।

मूल रचना में विचलन संबन्धी कई विशेषताएँ हो सकती हैं । उसके अनुभव संप्रेषण सर्वथा पूर्ण नहीं रहता । हिन्दी-मलयालम अनुवाद में शब्दस्तर के विचलन की समस्याएँ हैं ।

मलयालम की मध्यकालीन काव्यधारा के अग्रगण्य कवि श्री कुंजन नंबियार की कविताओं के अनुवाद किसी भी भाषा में विचलन की समस्याओं से युक्त रहेगा । काव्यतत्व को अभिनय तथा नृत्य से मिलाकर पाठक को हास्य-व्यंग्य की उच्चकोटि तक पहुँचानेवाले उस वैभवयुक्त अनन्य शैली को हिन्दी में उभारना कभी संभव नहीं है । इसी प्रकार बिहारी तथा तुलसी के दोहों-पदों में भी 'गागर में सागर' जैसा प्रयोग-वैभव जो मिलता है, वह अनुवाद में विचलन की समस्याएँ पैदा करता है ।

अनुवादकीय चेतना जहाँ मूल लेखक की भावना से जाग्रत व उद्घरित होता है, वहाँ कभी कभी संप्रेषण समानार्थी समप्रभाव उत्पन्न करता है । पूर्ण विचलन की दृष्टि से वाक्य तथा परिच्छेद समस्यास्पद है । छन्दबद्धता तथा रूप-सौकुमार्य विचलन की रक्षा के बाहर हो जाते हैं । अतः काव्य, नाटक इत्यादि के अनुवाद में विचलन की समस्या स्थूल है ।

अप्रस्तुत योजना

संरचना के पोषक तत्वों में शब्दशक्तियों के अलावा अलंकार तथा छन्दों का प्रयोग भी शैली को अनुपम बनाता है । अन्यार्थवाचक तथा प्रतीकात्मक शब्दों के चयन से इनकी पुष्टि होती है । सामान्य जनजीवन से जुडे हुए अनेकों ऐतिहासिक, पौराणिक, सांस्कृतिक व सामाजिक संदर्भ इनके अर्थ के पीछे रहते हैं । संकेत और संक्षिप्त रूपों से इनका प्रकाशन प्रसारित होता है ।

संस्कृत के सामान्य स्रोत से हिन्दी और मलयालम केलिए पृष्टभूमि मज़बूत रही । इस साहित्य की परंपरा के तत्व का सामान्य प्रयोग तथा प्रभाव दोनों भाषाओं में वर्तमान है । 'राम', 'सीता' आदि के अर्थ परंपरा से जुडे हुए हैं । इसी प्रकार अलंकारों में भी कई लक्ष्यार्थ के द्वारा समान प्रभाव उत्पन्न करनेवाले हैं । लेकिन कई अलंकार ऐसे भी है, जिनकी समानार्थी अभिव्यक्ति दूसरी भाषा में मिलना कठिन है ।

कामायनी के मलयालम अनुवाद में प्रसादजी के सभी दर्शन सुसंगत नहीं मिलता क्यों कि काव्यस्तर की अप्रस्तुतयोजना की व्याख्या अनुवाद में होती है । निपटाने की कोशिश होते हुए भी कविता से इन तत्वों का धुल मिल जाने के कारण, पूर्ण रूप से अनुवाद - काव्य शिल्प की दृष्टि से - नहीं निकाल सकता ।

समानान्तरता

यह तुलनात्मक भाषाविज्ञान पर आधारित शैलीपरक समस्या है । संस्कृति, इतिहास तथा प्रकृति को ध्यान में रखकर, संप्रेषण स्तर के निर्माण में समान्तरता की समस्या अनुवादक के सामने खडी हो जाती है । सामान्य कथन के अलावा साहित्यिक, विधात्मक तथा उपमा, रूपक आदि आलंकारिक रूपों में समान्तरता खोजना कठिन कार्य है । 'रामचरितमानस' के विभिन्न लोगों द्वारा मलयालम में किए गए अनुवादों में तुलनात्मक दृष्टि से सर्वाधिक निकट श्री भट्टतिरि के अनुवाद कहने का यही कसौटी है [1]।

ध्वन्यात्मक बलाघात

यह भाषावैज्ञानिक विश्लेषण में चर्चित समस्या है जो शैलीपरक भी है । औपचारिक विशेषताओं से अर्थ के अनेक आयाम हो सकते हैं । औचित्य व समझदारी के बल पर उनकी अनुवाद करना होगा । नाटक इत्यादि के अनुवाद में इस समस्या को लेकर सर्वाधिक सतर्कता बरतनी है । समानता अभिव्यक्ति के तान, अनुतान आदि में भी होना चाहिए । एक ही पुकार को हम विभिन्न संदर्भों में विभिन्न भाव-रसों से ओतप्रोत उक्ति बना सकती है । अत: यह भाषा की सामान्य समस्या है, पर आशु अनुवाद में इसका महत्वपूर्ण स्थान और महत्व है । दृश्य कलाओं में इसकी उपस्थिति नहीं होने पर रसात्मकता खो सकती है ।

- -

1 तंकमणि अम्मा - भाषा जनवरी-मार्च 1992 पृ. 134.

बिंब - प्रतीक

साहित्य के आधुनिक संदर्भ में बिम्ब-प्रतीक योजना की महत्ता है । मिथक, फान्टसी जैसे अतिनूतन वस्तुओं के बल पर गद्य तथा पद्य को अतिप्रभावयुक्त अनुभव बनाने का यह नव्ययुग है । अर्थ के नवीन स्तरों के साथ शिल्प के इन प्रयोगात्मक पहलुओं को अनुवाद के संदर्भ में आंकना कठिन कार्य है । 'सर्वेश्वर दयाल सक्सेना' तथा 'धर्मवीर भारती' जैसे आधुनिक कवियों की कविताओं का मलयालम अनुवाद निकले हैं जिनमें पद्य के लय, संगीत तथा ताल की भंगिमा बनाए रखने के साथ साथ आर्थिक सफलता की कोशिश हुई है । मलयालम के युवापीढी के प्रशस्त कवि 'बालचन्द्रन चुळ्ळिक्काड की कृतियों के हिन्दी अनुवाद में भी यही प्रवृत्ति अपनायी गयी है[1]। अतिस्थूल लगने वाले कुछ ऐसे अंश कभी कभी अननूदित रह जाते हैं ।

नादसौन्दर्य

शैली में नादसौन्दर्य की महत्वपूर्ण भूमिका है । 'कंकण किंकिणि नूपुर धुनि सुनि' वाले नादसौन्दर्य से पूर्ण प्रसंगों का अनुवाद दूसरी भाषा में किया जाता है । संस्कृत की कथकाथा में हिन्दी-मलयालम अनुवाद काफी हद तक भावसौन्दर्य से मण्डित है । जहाँ तक हो सके, उन्हीं शब्दों तथा रूपों का शब्दानुवाद करने का प्रयास होता है । 'स्वनिम व्यवस्था तथा लेखिम व्यवस्था दोनों शैली के पोषक तत्व हैं । ये भाषा शैली के उपकरण हैं[2]। आधुनिक युग में नादसौन्दर्य से बढकर काव्य के अन्य अंग भी समान महत्व के बन गए हैं । अनुप्रास इत्यादि के प्रयोग के बदले लय-ताल-संगीतमयी अनुभव के रूप में काव्य सृजन होता है ।

आंचलिकता

शैलीगत समस्याओं में सर्वाधिक कठिनाईयाँ आंचलिकता संबन्धी हैं । आंचलिक उपन्यास, कहानी आदि का अनुवाद अधिकतर व्याख्यात्मक होता है । प्रतिस्थापन के कर्म में अनुवादक की बुद्धि व सृष्टि सर्जक के समान उच्च हो जाती है क्यों कि मूल अभिव्यक्ति का सार आंचलिक है । उसे सामाजिक या विश्वलौकिक बनाने का कर्म वहाँ होता है । प्रसारण का यह काम समन्वय का रूप धारण करता है । संस्कृति के एकीकरण व खास जीवनमूल्यों का विश्वबंधुत्व इस प्रक्रिया का परोक्ष ध्येय है ।

एक अंचल की जीवन छटाओं को दूसरी भाषा में उभारना कठिन है । पर व्याख्यात्मक अनुवाद से यह संभव होता है । 'मैला आंचल' के मलयालम अनुवाद में काफी त्रुटियाँ और कमियाँ रह गयी हैं । उसकी तुलना में 'गोदान' का स्तरीय अनुवाद निकला भी है । मलयालम में अनूदित कृतियों में 'चेम्मीन' का 'मछुवारा' अनुवाद में आंचलिकता की रक्षा की पूरी कोशिश हुई है । इनके अलावा 'पारप्पुरत्तुं' की रचना 'अरनाषिकनेरम्' का हिन्दी अनुवाद 'आधी घडी' स्तरीय और सृजन प्रक्रिया के स्पन्दन से युक्त लगता है । यह अनुवाद मूलकृति का सर्वाधिक निकट का है ।

- -

1 ·बालचन्द्रन की कविता - संस्कृत प्रतिष्ठान, नई दिल्ली 1991 ·

2 ·सुरेश कुमार - शैली विज्ञान पृ·127

अतः शिल्प की सूक्ष्मताएँ अर्थ छटा पर असर डालती हैं । शैली एवं शिल्प सूक्ष्म होता है, जो तत्संबन्धी अंचल के लोकजीवन का निकटतम परिचय देता है । यहाँ अनुवादक को वहाँ की मिथकीय और दार्शनिक परिकल्पनाओं एवं सांकेतिक शब्दों को अर्थ छटाओं का संकेत देना पडता है[1]। क्योंकि आंचलिकता की गहराई नित्यजीवन, लोक जीवन, तथा विश्वजीवन के इतिहास और भविष्य को आत्मसात करनेवाली है ।

हिन्दी-मलयालम का अनूदित साहित्य संदर्भ

वस्तुतः शैली की व्यावहारिक चर्चा बहुत विस्तृत है । साहित्यिक विधा के आधार पर सौन्दर्यात्मक विश्लेषण के अनेक स्तर हो सकते हैं । साहित्यिक कृति के आधार पर भी शैलीविषयक अध्ययन संभव है, आवश्यक भी । यही प्रक्रिया अनूदित साहित्य में भी होना चाहिए ताकि अनुवाद संबन्धी शिकायतों को दूर कर सके । अनूदित साहित्य के स्तर की सीमाएँ लगातार पूरे अनुवाद को खोटा या निम्नप्रकार का घोषित कर देती हैं । अतः इसपर अध्ययन-सर्वेक्षण की महती आवश्यकता है । इन दोनों भाषाओं में परस्पर अनूदित संपूर्ण साहित्य की चर्चा यहाँ संभव नहीं है । इसलिए दोनों भाषाओं में उल्लेखनीय अनुवादों पर आश्रित संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत है

गद्य साहित्य के विशाल खण्ड में कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, इतिहास, जीवनी, आलोचना, रेखाचित्र आदि आते हैं । इनमें हर शाखा की दृष्टि से अनुवाद विभिन्न मात्रा में हुए हैं । आधुनिक काल में ही हिन्दी व मलयालम दोनों भाषाओं में गद्य का परम विकास व प्रसार हुआ है । पर पूर्वयुग की झाँकियाँ इन केलिए पोषक व प्रभाववर्धक रही हैं । अतः आधुनिक युग के गद्य के विभिन्न आयामों के साथ आदि मध्यकालीन साहित्यिक रूपों का अनुवाद भी बीसवीं शताब्दी में होने लगा ।

हिन्दी-मलयालम भाषाओं का दृढ संपर्क आधुनिक युग में सशक्त रहा । विभिन्न युगीन साहित्य का अनुवाद व्यावहारिक कसौटी पर आवश्यकता और आडंबर की दृष्टि से होने लगा । कथा-साहित्य की सर्वाधिक प्रमुखता रही ।

हिन्दी से मलयालम में अनूदित ग्रन्थों की सूची लंबी है, जहाँ उल्टे में उतनी लंबी नहीं है । मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य के भी कई रीतिग्रन्थों तथा काव्य शास्त्रीय दर्शनों का सारानुवाद या वर्णनात्मक पुनराख्यान मलयालम में मिलता है । इसे संपूर्ण अनुवाद की कोटि में गिन नहीं सकता पर ये भी पुनःसर्जना हैं । उदाहरण केलिए केशव, चिन्तामणि आदि की रीतिसंबन्धी सिद्धान्तों का पुनराख्यान मलयालम में हुआ है जो मूल की छाया से जुडता है । भावानुवाद की पूर्णता नहीं है तो भी इनमें वर्णनात्मकता की आवश्यक महत्ता है ।

---

1. पी. एम. आन्टणी - अनुवाद मार्च 1991 पृ. 56.

कथा साहित्य

आधुनिक युग में हिन्दी कथा साहित्य का स्फोटन सा विकास-परिणाम हुआ है । इसलिए राष्ट्रभाषा में सृजित कृतियों के अनुवाद केलिए सर्वभारतीय भाषाएं प्रतीक्षार्थी रहीं । इस प्रकार आधुनिक कथा साहित्य में जहां तक कह सके, बहुताधिक कृतियों का अनुवाद मलयालम में भी निकले हैं । इनमें मुख्य चर्चित व ख्यातिप्राप्त सभी उपन्यास, कहानी, नाटक, जीवनी और अन्य गद्य विधाएं शामिल हैं । हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकार भारतेन्दु से लेकर प्रेमचन्द, प्रसाद, राहुल सांकृत्यायन, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, हजारी प्रसाद द्विवेदी, लक्ष्मीनारायण मिश्र, हरिकृष्णप्रेमी, अज्ञेय, भीष्म साहनी, मोहन राकेश, कमलेश्वर तक के अनेकों साहित्यकार की विभिन्न रचनाओं के अनुवाद मलयालम में निकले हैं । इन अनुवादों के माध्यम से ही हिन्दी के कथाकार केरलियों केलिए परिचित व प्रिय बन गए हैं । अद्यतन युगीन हिन्दी साहित्यकारों की सभी चर्चित कृतियों का अनुवाद भी बिना विलम्ब प्रकाशित होने लगा है ।

दूसरी दिशा में देखें तो मलयालम से हिन्दी में अनूदित रचनाओं की संख्या अपेक्षाकृत कम है । पर यह इसलिए है कि मलयालम का हिन्दी की तुलना में अपेक्षाकृत सीमित संदर्भ है । साथ ही राष्ट्रभाषा होने के कारण हिन्दी से अनुवाद की अनेकों संभावनाएं उपलब्ध हैं । पर मलयालम के विपुल साहित्यसंपन्नता के कारण और भाषागत एकरूपता तथा सरलता के वास्ते कई कृतियों के अनुवाद निकले हैं । जैसे - 'तकषि' की विश्वप्रसिद्ध रचनाओं में 'तोट्टियुटे मकन(चुनौती - भारती विद्यार्थी 1952), रण्टिटङङषि (दो सेर धान - भारती विद्यार्थी 1957), चेम्मीन (मछुवारे भारती विद्यार्थी 1959), तकषियुटे कथकळ(तषि की कहानियां - वी.डी.कृष्णन नंबियार 1985) आदि, कारूर नीलकंठ पिल्ले की कहानियां(मलयानिल कहानियां - भारती विद्यार्थी 1953), के.एम.पणिक्कर की रचना केरळसिंहम् (केरल सिंह - रत्नमयी दीक्षित), के.दामोदरन् का उपन्यास नारकत्तिलनिन्नं (पद्मावती - लक्ष्मण शास्त्री 1960), वैक्कम मुहम्मद बषीर के विख्यात उपन्यासों में न्टुप्पाप्पाक्कोरानेण्टार्न् (दादा का हाथी - रविवर्मा 1960), पात्तुम्मायुटे आटु, बाल्यकाल सखि (पात्तुम्मा की बकरी - रत्नमयी दीक्षित 1971), केशवदेव के ओटयिल निन्नं (नाली से - सुधांशु चतुर्वेदी 1964), कण्णाटी (आईना - केशवन नंपूतिरि 1973), जोसेफ मुण्टश्शेरी का प्रोफेसर(प्रोफेसर - सुधांशु चतुर्वेदी 1967), एम.टी.वासुदेवन नायर की रचनाओं में नालुकेट्टु(चार दीवारों में - पद्मिनी मेनोन 1972), मञ्ञु(तुषार - श्रीमति हफसन सिद्दीकी 1982), मलयाट्टूर रामकृष्णन का उपन्यास वेरुकळ(जड़ें - एन.ई.विश्व नाथ अय्यर 1976) । विभिन्न लेखकों द्वारा लिखी गई कहानियों का संग्रह भी समय समय पर निकलते रहें । उदाहरण केलिए 1970 में निकले मलयालम की कहानियां - सुधांशु चतुर्वेदी, कथा भारती - सुधांशु चतुर्वेदी, समकालीन कहानियां - लक्ष्मीकुट्टि अम्मा इत्यादि । इसके बाद भी नामप्राप्त तथा चर्चित कहानियों तथा उपन्यासों का अनुवाद हो रहा है ।

अभी अभी गतयुगीन साहित्य में से प्रमुख रचनाओं को लेकर स्तरीय अनुवाद का प्रयास भी हुआ है । मलयालम के पहला प्रशस्त उपन्यास इंदुलेखा(चन्दुमेनोन) का

अनुवाद 1978 में केशवन नंपूतिरि से हुआ है।

नाटकों का अनुवाद अन्य विधाओं की तुलना में कम हुआ है । रंगमंचीय धारणाओं का अन्तर, सांस्कृतिक पहचान तथा भाषाई संभावनाओं में दिक्कत आदि इसके कारण हैं । फिर भी बहुचर्चित नाटकों के अनुवाद का प्रयास हुआ है । हिन्दी से मलयालम में प्रसाद तथा बाद के युग के नाटककारों में हरिकृष्णप्रेमी, उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण मिश्र आदि के नाटकों के अनुवाद का प्रयास सतत दीखता है । साथ ही कमलेश्वर, मोहन राकेश, जगदीशचन्द्र माथुर आदि आधुनिक नाटककारों-एकांकीकारों की रचनाओं का अनुवाद आकाशवाणी द्वारा प्रसारित होता है । कभी कभी इनका संदर्भ केरलीय अंचल के अनुसार परिवर्तित किया जाता है ।

मलयालम से हिन्दी में अनूदित नाटकों में 1960 में अनूदित तोप्पिल भासी के उपन्यास निङ्ङळेन्ने कम्यूणिस्टाक्कि(उत्थान - लक्ष्मण शास्त्री), मूलधनम् (पूंजी- लक्ष्मण शास्त्री) प्रमुख हैं । सुधांशु चतुर्वेदी द्वारा अनूदित नाटकों में पद्मनाभ पिल्ले का वेलुत्तंपिदलवा 1966, कांचनसीता (श्रीकंठन नायर 1966), आदि के साथ एकांकियों के दो संग्रह (एक - 1970 में, दूसरा - 1977 में) भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं ।

वर्तमान युग में इस दृष्टि से अनेक नाटकों-एकांकियों का अनुवाद निकलते हैं कि प्रचार व प्रयोग दोनों पहलू स्तरीय निकलें । समीक्षात्मक ग्रन्थों का भी अनुवाद आधुनिक युग में निकलने लगे हैं । 1976 में परमेश्वरन नायर 'मलयालम साहित्य चरित्रम्' का हिन्दी में 'नागप्पा' से अनूदित हुआ । साथ ही एस ·के ·पोट्टेक्काड जोसफ मुण्टश्शेरी, एम ·पी ·पोळ तथा सुकुमार अष़ीक्कोड जैसे आलोचकों के विभिन्न दर्शनों से युक्त भाषणों - निबन्धों के अनुवाद निकले हैं । 'तत्वमसि' का अनुवाद हिन्दी जगत में भी बहुचर्चित रहा है ।

वस्तुतः यह देखने लगा है कि अच्छी रचना, चाहे उसका रूप कोई भी हो, का अनुवाद जल्दी से जल्दी होने लगा है । इस कार्य के प्रोत्साहन केलिए साहित्य अकादमी और अन्य संस्थाओं ने काफी कुछ प्रोत्साहन योजनाएं निकाली हैं । केन्द्र तथा केरल साहित्य अकादमी, केरल भाषा शास्त्र इंस्टिट्यूट आदि का कार्य स्मरणीय और महान है । भारतीयता को दृष्टि में रखकर अनुवाद कराना इनकी पद्धति है ।

काव्यधारा

कविता का अनुवाद सर्वाधिक दिक्कतपूर्ण व अपूर्ण बताया जाता है । पर अब, आस्वादन के संप्रेषणार्थ कविता का अनुवाद खूब होने लगा है । पद्यानुवाद वैसे संभव नहीं है तो गद्यानुवाद या छन्दमुक्तानुवाद की रीति अपनाई जाती है । विभिन्न लोगों द्वारा हिन्दी तथा मलयालम दोनों में काव्यानुवाद का प्रयास हुआ है ।

मध्ययुगीन तथा आधुनिक युगीन कविता का अनुवाद हिन्दी से मलयालम में हुआ है । प्राचीन या मध्ययुगीन दोहों तथा चौपाईयों का यथावत् अनुवाद असंभव

है । इसलिए उनका सारानुवाद हुआ है । इसप्रकार 'रामचरित मानस' के एकाधिक अनुवाद मलयालम में मिलते हैं ।

आधुनिक युग के चर्चित कवियों की कविताओं का अनुवाद सभी भारतीय भाषाओं में निकला है । मलयालम इसका अपवाद नहीं है । छायावादी कवियों में पन्त, प्रसाद इत्यादि के अनुवाद को मलयालियों द्वारा सर्वाधिक स्वागत मिला है । कामायनी का अनुवाद (पी.श्रीधरमेनोन 1968) केरल में बहुचर्चित रहा है । इसी प्रकार आंसू, दिनकर की उर्वशी, गुप्तजी की यशोधरा, साकेतआदि काव्यों के प्रशस्त अंशों का अनुवाद भी सामयिक ढंग से भिन्न भिन्न पत्र-पत्रिकाओं में निकले हैं । भाषा, अनुवाद, दस्तावेज़ आदि पत्र-पत्रिकाओं में अद्यतन युग के लेखकों की कविताओं का अनुवाद खूब सारे निकलते हैं । इससे आजकल अनूदित साहित्य को भी मूल साहित्य की जैसी मान्यता मिलने लगी है ।

भाषा की क्लिष्टता का मूलकारण काव्यानुवाद में शब्दों को लेकर है । छन्द व अलंकारों की क्षमता लाने तथा नाद सौन्दर्य की भंगिमा बनाए रखने केलिए पर्याय ढूंढने और फिट करने की प्रवृत्ति से प्रयत्नसाधक व याचित अनुवाद निकलते हैं [1]। विन्यास की यह हठ काव्यास्वादन को नष्ट करता है । इसलिए भावऔर रूप का योग अनुवाद में बनाए रखने का प्रयास प्रमुख है । रूप नष्ट करने पर भी भाव को अधिक महत्ता मिल जाती है तो उसका मार्ग अपनाया जाय । यहां भी यह न भूले कि मनगठन्त रूप देकर कविता को लक्ष्यभाषा में डालनहीं सकता । अनूदित कविता का शिल्प कुछ कम नहीं, मूल से बढकर गुरुतर और महत्वपूर्ण है[2]।

मलयालम की प्रशस्त कविताओं का अनुवाद आंशिक या पूर्ण रूप में हिन्दी में प्रकाशित हुआ है । कवित्रयों की चर्चित कविताओं का अनुवाद साहित्य अकादमी द्वारा प्रस्तुत हुआ है । जैसे आशान के काव्यों में चिन्ताविष्टयाय सीत (राघवन एस. 1974, हरिहरन उण्णित्तान 1974), करुणा (शिवराम अय्यर 1974), तीनकविताएं (श्रीधर मेनोन 1973), उल्लूर के काव्यों में भक्तिदीपिका (शिवराम अय्यर 1974), प्रेमसंगीत (शिवराम अय्यर 1978), वल्लत्तोळ की कविताएं (रत्नमयी दीक्षित 1959) स्मरणीय हैं । 'कविश्री माला' नाम से श्रीधर मेनोन द्वारा 1961 में अनूदित जी. शंकरकुरुप तथा वल्लत्तोळ की प्रमुख रचनाओं का संकलन भी उल्लेखनीय है । जी.शंकरकुरुप का ज्ञानपीठ पुरस्कृत 'ओटक्कुषल' विभिन्न अनुवादकों के द्वारा हिन्दी में प्रस्तुत हुआ है । इस प्रकार महाभारतम् का हिन्दी रूपान्तर 1976 में के.एस. एस अय्यर ने तथा आध्यात्म रामायणम् का हिन्दी अनुवाद 1974 में एन. के. कुट्टन पिल्लै ने प्रस्तुत किया है ।

आधुनिक कवियों में बालामणि अम्मा के छप्पन कविताओं का अनुवाद (जी. एन.पिल्लै 1971) भाव और शिल्प की दृष्टि से अपेक्षाकृत सफल है । 'मलयालम काव्यधारा' नाम से प्राचीन और आधुनिक कविताओं के दो अनूदित संकलन 1976

- -

1 .डॉ.आलोकुमार रस्तोगी - व्यावहारिक राजभाषा पृ. 11

तथा 1978 में कोच्चिन विश्वविद्यालय ने प्रकाशित किये हैं । ये शिल्प की दृष्टि से भी स्तरीय व प्रभावशाली हैं । मलयालम की नई कविताओं के अनुवाद का सफल प्रयास डॉ. जी.गोपिनाथन ने भी किया है । अद्यतन कवियों में एम.पी.अप्पन, सुगतकुमारी, डी.विनयचन्द्रन, अय्यप्प पणिक्कर, ए.अय्यप्पन आदि की कविताओं के अनुवाद भी नव-अनुवादकों के सहयोग से हिन्दी में प्रकाशित होने लगे हैं । रचना, शैली और कला की दृष्टि से मूल के निकट होने में ये अनुवादक अधिकाधिक सफल होते हुए दिखाई पड़ते हैं । ज्ञान गरिमा और अनुभव की तीव्रता आज के अनुवादक को मूल लेखक की कोटि तक ले जाती है । वस्तुत: यह कह सकता है आधुनिकता की प्रवृत्तियों में काव्यानुवाद कोई कठिनतम कार्य न होकर श्रमसाध्य होने पर भी ज़रूरतपूर्ण और सहज बन गया है । वर्तमान की विचारधारा में जो एकरूपता निकली है उसे आत्मसात करके अनुवादक भी मूल लेखक का सा प्रभाव पैदा करने लगा है ।

सामान्य दृष्टि से अनुवाद में लगाए जानेवाली कठिनाई व कमियाँ हैं - कठिन शब्द, निरर्थक वाक्य, अर्थ की अपूर्णता, पुनरुक्ति, ग्रामीण शब्दों की गलतियाँ, पर्याय द्योतन की अपर्याप्तता, अनुपयुक्त शब्द, धारारहित विवरण आदि । पर इन्हें दोषरहित रूप में ढालना और कृति की स्वच्छता, सरलता तथा प्रभाववर्धक अनुभव बनाना प्रतिभावान अनुवादक केलिए सर्वथा संभव सिद्ध हुआ है । आधुनिक दृष्टि और कुशल निरीक्षण पटुता इनकेलिए सहायक हैं ।

निष्कर्ष

साहित्यिक भाषा की सोद्देश्यता में शैली भी समीक्षा के योग्य है । किसी न किसी प्रकार भावप्रकाशन के साथ शैली की निकटता भावाभिव्यक्ति की महत्ता की कसौटी है । साहित्य में साहित्येतर शैलियाँ भी पायी जाती हैं । उसमें प्रतिपादित विषय, काल-स्थान-देश के परे भी होता है ; जिसमें भाषानिष्ठता रहती है । भाषा ही वहाँ साहित्य बन जाती है, अत: साहित्य की भाषा अन्तर्मुखी व बहिर्मुखी दोनों है ।

शैलीपरक अध्ययन और अनुवाद में सर्वाधिक ध्यान देनेयोग्य बात यह है कि एक ही भाषा की एकाधिक शैलियाँ होती हैं । विषयगत वैविध्य तो कहना ही नहीं । भाषा के इन रूपों का अनुवाद संभव नहीं होते और ऐसे प्रसंग में मानक भाषा का रूप व्यवस्थित रखना भी कठिन है । क्यों कि भाषा का एक ही शैली है तो उसका मानक व अच्छा रूप निश्चित कर सकता है । किंतु एकाधिक शैलियों से युक्त भाषा का मानकीय रूप निश्चित करना कठिन है, एक हद तक असंभव भी[1]। ऐसे अवसर पर भाषा मान्यता पर अडिग रहना कट्टर भाषावादिता होगी । शैली को प्रसंगाश्रित रूप देना व्यावहारिक है । भाषा विषयक समस्याओं का समाधान देने केलिए 'भाषा नियोजन' पर ज़ोर लगे हुए हैं[2]। पर, सच तो यह है कि लेखक तथा विषय की सापेक्षतायुक्त रचना की शैली का नियत विधान किसी भी भाषा में अतिश्रमसाध्य है ।

- -

1 .डॉ.भोलानाथ तिवारी - अच्छी हिन्दी कैसे बोले कैसे लिखे पृ.16.

2 .डॉ.आलोक कुमार रस्तोगी - व्यावहारिक राजभाषा पृ.58.

यहाँ शैली परिवहन की समस्या विवाद का विषय है । इसके विरुद्ध कटु विमर्श हो रहा है । दूसरी भाषा के अनुकरण, अज्ञान व आडम्बरवश करने की रीति स्वभाषा प्रकृति को ठेस पहुँचाती है । इसके विरुद्ध 'शैली विज्ञान' के विभिन्न स्तर का अध्ययन हो रहा है । दूसरी भाषा के जबरदस्त प्रभाव में अपनी भाषा की विशेष शैली खोना सार्वत्रिक त्रुटी बनगई है । उसे रोकना भाषा प्रेमी का काम है । भाषा परिवहन भावपरिवहन है, भाषा आधिपत्य या भाषा प्रशासन नहीं ।

अतः साहित्य का अनुवाद सर्जनात्मक भाषान्तरण है । क्यों कि व्यक्ति या कथा बहुखंडीय कलावस्तु है । कविता में सुनिश्चित वाक्यक्रम नहीं होता । इसका संयोजन, समेकन और समाहरण होने पर भी पुनः सर्जना की सफलता मापने केलिए वस्तुनिष्ट कसौटी भी नहीं है । ये सब ज्ञान, परिचय और आस्वादन पर निहित हैं । अतः साहित्यिक अनुवाद मूल रूप से भाषा (संरचना तथा शब्दकोश) की समस्या न होकर शैली (उक्ति के चयन, प्रवर्तन तथा विन्यास) की समस्या है[1]।

साहित्य में मानकीयता भी भाषा शैली की दृष्टि से सर्वथा निरपेक्ष व स्वतन्त्र है । वह सौन्दर्य पर आधारित है । सौन्दर्य की अभिवृद्धि के साथ जुडी हुई संकल्पना अनुवाद में अनुभूति की कसौटी पर खरा नहीं उतरती । सौन्दर्यबोध मानसिक तथा वैयक्तिक है । उसका प्रत्यक्षीकरण वैयक्तिक सामर्थ्य पर आधारित है । भावातिरेक या हृदयानुभूति मूलभाषा में पूर्ण नहीं है तो लक्ष्याभिव्यक्ति में समस्या और अधिक चेष्टापूर्ण है । प्रतिमानों की सृष्टि भी इनसे बाहर रहती है । पर जहाँ तक हो सके, भाषा की शुद्ध रखते हुए भावाभिव्यक्ति के निकट लक्ष्याभिव्यक्ति के भाव व शिल्प को जोडने की कोशिश होती है ।

****** ******

---

1. सुरेश कुमार - शैलीविज्ञान पृ. 174.

छठा अध्याय

हिन्दी और मलयालम अनुवाद की समस्याएं - प्रयोजनमूलक भाषा के परिप्रेक्ष्य में

वस्तुत: तथ्यप्रधान मात्र होने के कारण वैज्ञानिक व प्रयोजनमूलक भाषा व विषयों का अनुवाद सरल नहीं है । यह भी ठीक नहीं है कि तथ्य प्रधान साहित्य के अनुवाद की समस्याएं नहीं हैं । बात तो यह है कि तुलनात्मक दृष्टि से इसकी भावगत-शैलीगत समस्याएं कम हैं । भाषागठन, विज्ञान का हो, या भाव का, समस्या-रहित नहीं है । तथ्यप्रधान साहित्य के अनुवाद की महत्ता भावात्मक साहित्य से बढकर व्यावहारिक बन गया है, प्रासंगिक भी । क्योंकि विकासशील देशों के बहुस्तरीय विकास की अभिव्यक्ति की माध्यम है भाषा । अत: उस भाषा की एकरूपता एवं पूर्णता उसकी अभिव्यक्ति को गरिमावान और प्रभावशाली बनाती है ।

प्रयोजनमूलक भाषा : स्वरूपगठन और अनुवाद

दैनिक उपयोग की भाषा में एकरूपता नहीं होती । समाज की प्रतिबिंब व प्रतिध्वनि होने के कारण अभिव्यक्ति तरंगायित होती है । इसमें एक ही शब्द का इतिहास विशिष्ट व अनेकार्थी होना भी स्वाभाविक है । अत: अनुरूपता और एकार्थता बनाए रखने केलिए भाषा का सामान्य रूप निश्चित करने की ओर ज़ोर लगने लगी । यही मानक भाषा के रूपायन का परिप्रेक्ष्य है । भाषा का रूप मानक बनाए तो भाषाप्रक्रिया में जुडे हुए लोग उससे सर्वाधिक लाभ उठा सकते हैं ।

व्यावहारिक दृष्टि से अनुवाद आज का सख्त ज़रूरत व सहज प्रवृत्ति बन गया है । विकासशील देश होने के कारण इसकी जबरदस्त उपस्थिति भी प्रयोजनार्थ होनी चाहिए । आधुनिक युग के वेग के साथ समाज और संस्कृति के पक्षों को समरूप बनाने की कोशिश विभिन्नस्तरीय विकास को आगे बढाया । हमारे यहां जो कुछ नहीं है, अविकसित व अपूर्ण है, उन्हें ऋण या अनुकरण में अपनाया जाय - यही वृत्ति ज्ञान-विज्ञान व तकनीकी-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में समस्त विषयों को लेकर दौड़ने लगी । नए शब्दों की गठन के साथ ही भाषा रूपों का विकास व प्रचलन होने लगा । प्रक्रिया ही वह मार्ग है जो अभिव्यक्ति क्षमता बढाने में सहायक थी । वर्तमान की आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए आदान का वेग बढ गया जिससे भाषाओं में एक प्रकार की समभावना विकसित होने लगी । साहित्यानुवादों से बढकर तथ्यप्रधान विषयों में एकभावना ज़्यादात्तर है । आर्थिक धरातल पर व्यवस्थित तथा समान प्रभाव बनाए रखने केलिए विशेष शब्दों की गठन हुई है । इसके द्वारा तथ्यप्रधान साहित्य का अनुवाद अपेक्षाकृत पूर्ण व व्यवस्थित बन गया है । अनुभूति से बढकर आवश्यकता होने के कारण वैचारिकता के स्तर पर अनुवाद का स्वस्थपक्ष इस प्रसंग में देखा जा सकता है । पर भाषा की लिबास कभी कभी ढीली हो जाती है कि वैचारिक संदर्भों

को भी यथावत पूर्णता देना असंभव लगता है । नियम व व्यवस्था को बनाए रखने केलिए कभी कभी पुर्णार्थवाची शब्द भी नहीं मिलता । अत: पारिभाषिक, तकनीकी, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी व शास्त्रीय विषयों को लेकर विशेष प्रकार की शब्दावली का निर्माण प्रत्येक भाषा में होने लगी । हिन्दी व मलयालम के संदर्भ में यह सर्वाधिक द्रुत रहा है कि वे अन्तर्राष्ट्रीय तल पर भी चर्चित भाषाएं हैं । अनुवाद के संदर्भ में इन दोनों का स्रोत संस्कृत रहा है । इन दोनों भाषाओं ने अंग्रेज़ी जैसी भाषाओं से समान शब्दों को आत्मसात किया है । अत: भाषाई निजता के अलावा इस प्रकार के अनुवाद में परस्पर प्रभाव रहने के कारण काफी सुविधा मिलती है ।

भाषान्तरण में प्रस्तुत प्रयोजनमूलक भाषा के रूप

तथ्यप्रधान साहित्य का संदर्भ प्रयोजनमूलक है । अत: यहां व्यावहारिक भाषा की कसौटी में भाषा के विभिन्न रूपों का अध्ययन किया जाता है । साहित्यिक रूपों से अधिक विचारात्मक व ज्ञानवर्धक होने के कारण इनका क्षेत्र दैनंदिन जीवन के निकट तथा उपयोगी पक्षों पर आधारित है । इसका मतलब व्यावहारिक जीवन विनिमय के विभिन्न रंगों से युक्त भाषा प्रयोगों से है । व्यक्तिजीवन का संबन्ध समाज के विभिन्न अंगों से होता है । जिससे उसकी आवश्यकताओं तथा संकल्पनाओं की पूर्ति होती है । ज्ञान-विज्ञान के विकास ने ही उसके जीवन को सुखसुविधापूर्ण बनाया है । अत: जीवन के चकाचौंध के अनुरूप प्रयोजनमूलक भाषासाहित्य बदलता तथा विकसित होता रहता है । आज की खोज और गवेषणा, कल तथ्य और प्रमाण हो जाती हैं, तो उसकी व्याख्या व परिभाषा नए आयामों व अर्थ से जुड जाती है । इन जीवनाकांक्षाओं की कई शाखाएं हैं । व्यावहारिक प्रयोजन में प्रतिष्ठित हिन्दी तथा मलयालम भाषारूपों की दृष्टि से निम्नलिखित शाखाओं का उल्लेख सामयिक होगा

1. प्रशासन व राष्ट्रव्यवहार की भाषा

केरल की प्रशासनिक भाषा (कार्यालयों की भाषा) औपचारिक रूप में मलयालम घोषित की गई है । प्रशासनिक कार्रवाई के रूप, प्रभाव और परिणामों के अनुसार अन्य भाषाओं में भी - मुख्यत: अंग्रेज़ी में - काम किया जाता है । इसी प्रकार हिन्दी प्रदेश की राजभाषा हिन्दी है । पर भारत की विशेष संस्कृति ने संविधान की मान्यता प्राप्त 18 भाषाओं को अपना लिया है । कोई भारतीय नागरिक अपनी मर्जी के अनुसार भाषार्जन और भाषाप्रयोग कर सकता है । राजभाषा हिन्दी होने पर भी सभी भाषाओं का प्रयोग होता है । संपर्कभाषा के रूप में हिन्दी का प्रसार उल्लेखनीय है । साथ ही अंग्रेज़ी भी व्यवहार में है ।

संसद सामाजिक, आर्थिक एवं अन्य अनेकों क्रान्तिकारी परिवर्तनों का केन्द्र[1] होने के कारण राष्ट्र की मान्यताप्राप्त सभी भाषाएं उसकी उपयोग का माध्यम बन जाती है । हिन्दी का सशक्त रूप इन परिणामों से जुडा रहता है और सभी भारतीय

1. डॉ. गार्गी गुप्त पारिभाषिक शब्दावली की विकासयात्रा पृ. 49.

भाषाओं में प्रसारित होता है । राष्ट्रीय आवश्यकता के रूप में हिन्दी का विकास अब द्रुततर है ।

केरलीय वातायन से देखें तो प्रशासनिक कार्य मलयालम में होता है । पर भारत का राज्य होने के कारण हिन्दी व अंग्रेज़ी केरलीय अंचल की उपयोगी भाषाएं है । मलयालियों की शिकायतों व टिप्पणियों को केन्द्रसरकार तक पहुँचाने केलिए हिन्दी या अंग्रेज़ी ही माध्यमबन जातीहै । इस प्रकार के अनुवाद में सामान्य तौर पर संरचनात्मक समस्याएं उभर आती हैं । नेताओं तथा प्रशासनिक प्रमुखों के भाषणों का आशु अनुवाद संरचना की दृष्टि से सामान्य भाषा के निकट है, जिनमें कई प्रशासनिक, पारिभाषिक शब्द भी आते हैं । हिन्दी से मलयालम में ऐसा खूब सारे अनुवाद करने का प्रसंग उभर आता है । प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति के केरलीय दौरे में होनेवाले वक्तव्यों तथा भाषणों में ऐसी कठिनाईयाँ होती हैं । इनमें वैयक्तिक बातों तथा विषयगत विशेषताओं से जूझना पडता है । उसी प्रकार केरल की विधानसभा तथा सचिवालय के विभिन्न निर्णयों तथा संशोधनों को केन्द्रसरकार तक पहुँचाने केलिए हिन्दी में अनुवाद किया जाता है । सामान्यत: अंग्रेज़ी ही इसका माध्यम बन जाता है । द्विभाषी व्यवस्था तथा पाठ्यक्रम में त्रिभाषापद्धति लागू करने के पीछे यही विचारात्मक वृत्ति है कि राष्ट्र भाषा तथा राज्यभाषा को प्रमुखता मिलने के साथ साथ पूरे के पूरे भारतवासी समझ लें । प्रशासन का प्रभाव मंत्रालयों-विभागों तथा कार्यालयों के द्वारा जनता पर है । अत: इसी केलिए भाषा का व्यापक प्रयोग होता है ।

हिन्दी मातृभाषा के राज्यों के साथ केन्द्रसरकार केलिए भी हिन्दी राजभाषा है । इस प्रकार के व्यापक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी का व्यवहार अतिविस्तृत भी है । केन्द्रसरकार के विभिन्न मंत्रालयों-विभागों तथा कार्यालयों में काम और विषय के अनुसार विभिन्न ढंगी शब्दावली भी बनाई गई हैं । प्रत्येक विभाग का अपना शब्दकोश है , साथ ही प्रशासनिक भाषा रूप भी । वाक्यगठन और भाषागठन का विभिन्न रूप भी निश्चित किया गया है । कार्यालय के उपयोगार्थ निश्चित रूपमें प्रयुक्त करनेवाले अनेकों वाक्यांश और वाक्य बनाए गए हैं । इनकी सरकारी मंजूरी भी घोषित हुई है ।

मलयालम भी हिन्दी की तरह कार्यालयीन भाषा की दृष्टि से निजी स्वत्व बनाने लगे । केरल की राजभाषा की दृष्टि से उसे भी सुष्ठु बनाए गए । कार्यालय में प्रयुक्त शब्दावली बनाए गए । हिन्दी की तुलना में मलयालम पारिभाषिक शब्दावली संख्या में कम रहने पर भी व्यवहार में सरल और सपाट है । इनमें संस्कृत व अंग्रेज़ी दोनों का प्रभाव लक्षित है । अभी अभी इनमें अधिक शब्दों को गठन होने लगी है । जैसे -

मलयालम	हिन्दी	अंग्रेज़ी
सूप्रण्ट	अधीक्षक	Superintendent
एन्जिनीयर	अभियन्ता	Engineer
विभागम्	विभाग	Department
सेक्रेटेरियट	सचिवालय	Secretariat

वायिच्चु नोक्कियालुं	अवलोकनार्थ	for perusal
आज्ञापिच्चालुं	आदेशार्थ	for order
निर्देशत्तिनुवेण्टि	निदेशार्थ	for direction

प्रशासनिक भाषा की शैलीगत विशेषताएं होती है । इसमें प्रक्रिया का महत्व अधिक रहने के कारण भाषा भी प्रक्रियाबद्ध होती है । अकर्तृवाच्य वाक्यों की आवृत्ति का यही कारण है । इसमें कर्ता प्रमुख नहीं, प्रक्रिया मुख्य है[1]।

उदा

आदेश दिया जाता है	-	ओर्डर तन्नु कोळ्ळुन्नु ।
मंजूरी दी जाती है	-	अनुवादं तन्निरिक्कुन्नु ।
प्रदान की जाती है	-	प्रदानं चेय्यप्पेट्टिरिक्कुन्नु ।
जारी की जाती है	-	प्राबल्यत्तिल वन्निरिक्कुन्नु ।

इनमें से यह स्पष्ट होता है कि अंग्रेज़ी का यथा अनुकरण (लिप्यंतरण या लिप्यंकन) हिन्दी से बढकरमलयालम में अधिक है जो व्यवहार केलिए विदेशी भाषा के शब्द होने पर भी सामान्य जन केलिए समझदार बन गए हैं ।

प्रशासनिक उपयोगार्थ प्रस्तुत होनेवाले आदेशों, अधिदेशों, घोषणाओं तथा अन्य कागज़ों का रूप भी अनुवाद में इसप्रकार भाषागत ढाँचे में सुरक्षित रहता है । वर्तमान के अनुरूप भाषा के इन प्रयुक्त पक्षों में परिवर्तन लाने की कोशिश जारी है । यथा, पूर्णता की खोज ने इस विषयक अनेकों शब्दों को पारिभाषिकबना दिया है । जनतन्त्र की दृष्टि से देखें तो हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली मलयालम की तुलना में कहीं दूर विशिष्ट रूप में है जो प्रस्तुतिपक्ष में भी अतिविशिष्ट हो रहता है । इसको जन सामान्य के निकट लाने की अपेक्षा है ।

शिक्षा और धर्म की भाषा

हिन्दी-मलयालम अनुवाद के इतिहास में धर्म और शिक्षा की भूमिका कभी इनकार नहीं कर सकता । वस्तुत: अनुवाद का इतिहास सर्वत्र धर्म तथा शिक्षा से जुडा रहा है । अत: पुरातनकाल में धर्मप्रचार केलिए अनुवाद सारी भारतीय भाषाओं की कडी रहा है । बाइबिल का अनुवाद सभी भाषाओं में निकला है । साथ ही धर्मप्रचार संबन्धी पुस्तकों तथा भाषणों का अनुवाद भी यथावसर प्रस्तुत होने लगा ।

धर्म के साथ धर्मशिक्षा भी प्रचारवादी दृष्टि से शुरू हुई तो अनुवाद के विभिन्न रूप विकसित होने लगा । सारानुवाद तथा व्याख्यानुवाद इनमें प्रमुख रहें हैं । भारतीय धर्मप्रचार की दृष्टि से हिन्दूधर्म के प्रचार स्वरूप साधु-सन्तों की तीर्थ यात्रा तथा पर्यटन ने ही पहली भूमिका बाँध दी है । अत: केरल में अनुवाद या परदेशी भाषा का प्रचलन साधु-सन्तों के द्वारा ही आरंभ हुआ था । सांस्कृतिक आदान

---

1 .डॉ .गार्गी गुप्त पारिभाषिक शब्दावली की विकासयात्रा पृ .100 .

प्रदान की इस शुरुआत से भाषाई आयात-निर्यात भी पनपने लगा ।

हिन्दी-मलयालम भाषाएं अनुवाद के इन पक्षों से लाभान्वित भी हुई है कि शब्दावली की दृष्टि से असंख्य पदों-शब्दों का बोलबाला हुआ । धर्मप्रचार परोक्षतया भाषासंपर्क का रास्ता निकाला था ।

शिक्षा तथा शिक्षण केलिए आज का युग बहुत ही सतर्क और प्रचारयुक्त है । इसके विकास के हेतु आत्यन्तिक प्रयास होता है । अन्यभाषा शिक्षण का मार्ग भी इससे प्रस्तुत हुआ है । धर्मशिक्षा का रास्ता पकड़ कर अनुवाद के द्वारा समस्त वाङ्मय की शाखाओं को सार्वभौमिक रूप देने की कोशिश जारी है ।

यहाँ भी हिन्दी-मलयालम का संदर्भ निकट संबन्ध रखता है । द्रविड़ भाषा होने पर भी, संस्कृत तथा हिन्दी से उसकी समानता हमेशा आकांक्षा का विषय बन गया है ।

धर्म तथा शिक्षा दोनों ने इन भाषाओं केलिए शब्दावली की दृष्टि से आपसी सहयोग प्रदान किया है । धार्मिक शब्दों, रीति-रिवाज़ों के रूपों और अर्थों में समानता दीखने का यही कारण है । जैसे - पूजा, नमाज़, कारसेवा इत्यादि शब्दों का प्रचलन पूरी भारतीय भाषाओं में समान रूप से देखा जा सकता है । इसीप्रकार शिक्षा संबन्धी अनेकों शब्द पूरी भारतीय भाषाओं में दिखायमान है ।

विधि तथा न्यायव्यवस्था की भाषा

राष्ट्रीय अस्मिता में विधि तथा न्याय व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है । जीवन के सभी पक्ष इसका विषय बन जाता है । इस दृष्टि से 1948 से विधि तथा न्याय संबन्धी विवरणों, व्यवस्थाओं तथा आदेशों का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने की प्रशासनिक प्रविधि शुरू हुई ।

पर क्षेत्रीय न्यायालयों तथा राज्यसरकार के अधीन के कार्यालयों के व्यवहार केलिए राज्यसरकार की मान्यता प्राप्त भाषा का उपयोग होता है । क्यों कि राज्यसरक की भाषा ही वहाँ की अभिव्यक्ति की विशेष माध्यम रहती है । यदि निर्णय अंग्रेज़ी में जारी किए गए हैं तो भी सामान्य जन की समझदारी केलिए इनका रूप राज्य की भाषा में बनाया जाता है । अतः इस क्षेत्र में संपर्कभाषा के रूप में अंग्रेज़ी ही अपनी अधीनता रखती है ।

हिन्दी तथा मलयालम प्रदेशों में भी यही प्रणाली चलती है । पर विधि न्याय व्यवस्था की भाषा हिन्दी तथा मलयालम पर अंग्रेज़ी का प्रभाव अधिक है । हिन्दी में विधि शब्दावली का अभाव था, अनुक्रमणिकाओं की कमी थी, जो परवर्ती काल में प्रस्तुत हुए । पर इनका प्रचलन, सुचारू उपयोग नहीं हुए । फिर भी किसी भी

कार्य केलिए अकेले हिन्दी का प्रयोग अनुमन्य नहीं है[1]। अत: हिन्दी प्रदेश तथा उच्चतम न्यायालयों की कार्यवाही हिन्दी तथा अंग्रेज़ी में चालू है तो केरल तथा अन्य राज्यों में वहाँ की भाषा के साथ अंग्रेज़ी भी प्रयुक्त है ।

इनकी सामान्यत: वस्तुपरक शैली होती है । भाषा की रीति कोई भी हो, शैली का सामान्य प्रभाव तथ्य पर आधारित रहता है ।

विधि-न्याय शब्दावली का रूप एक हद तक अंग्रेज़ी के कड़े अनुशासन में है । मिश्र संस्कृति का राष्ट्र होने के कारण अंग्रेज़ी का उपयोग सार्वत्रिक होने लगा । यह भी ठीक है कि विधिशास्त्र की पुस्तकों का निर्माण भी हिन्दी में बहुत कम है । आधुनिक प्रयास जो होता है, वह भी अंग्रेज़ी के बहाव में नगण्य-सा रह गया है । अत: इन क्षेत्रों में अपनी निजी पहचान प्राप्त भाषाएँ होने पर भी हिन्दी और मलयालम आपसी संबन्ध में नहीं है । इस प्रकार का अनुवाद बहुत ही कम है ।

विज्ञान व प्रौद्योगिकी की भाषा

कहना नहीं चाहिए कि आज के जीवन के सभी पहलुओं को विज्ञान व प्रौद्योगिकी ने ग्रस लिया है । यान्त्रिक तथा व्यावहारिक पद्धतियों से नए-नए आयामों को छूती हुई सभ्यता केलिए विज्ञान सदैव उत्तेजक और प्रेरक रहा है । एक दृष्टि से विज्ञान के बिना जिन्दगी अरोचक और असिद्ध है । इस प्रकार के वैज्ञानिक विषयों का अनुवाद भी बुनियादी ज़रूरत बन गया है । अनुवाद इस प्रकार विषयों का होने के कारण, इनकी समस्याएँ कम नहीं हैं । साहित्यिक विषयों में शैलीगत समस्याएँ ज़्यादातर रहती हैं तो यहाँ शैलीगत-भावगत दोनों रहती हैं । हिन्दी और मलयालम दोनों में इन समस्याओं की दृष्टि से समानताएँ हैं क्यों कि दोनों भाषाएँ अविकसित और अद्यतन युग में विकासप्राप्त भाषाएँ हैं । आधुनिक काल में विकसित भाषाएँ होने के कारण शब्दावली और प्रभाव दोनों की ओर ध्यान दिया गया और भाषा को स्वयं पर्याप्त बनाने की कोशिश हुई । साथ ही निजता केलिए मेलमिलाव कासख्त विरोध भी हुए । स्वभाषा के शब्दों के साथ विदेशी शब्दों को भी लेकर गठन तथा निर्माण दोनों जारी रहे । ये शब्द व्यावहारिकता पर सटीक भी निकले । पर इस प्रकार गठित सभी शब्द इस क्षेत्र में पूर्ण प्रभावयुक्त नहीं निकले क्यों कि बने-बनाए शब्दों में कुछ अटपटे और संप्रदायरहित या धारणायुक्त निकलें । इस संदर्भ में वेत्ताओं का यह विचार है कि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी संबन्धी तकनीकी पारिभाषिक शब्द विशेष वर्ग के शब्द हैं, जिनका जन-सामान्य रूप होना असंभव है । इन विषयों का विशेष संदर्भ है । अत: इसका उपयोग विशेष वर्ग के लोगों केलिए होता है । यह ठीक है, पर ऐसे विषयों का विकास और प्रचार भारत में अंग्रेज़ी के माध्यम से होता है । पारिभाषिक शब्दावली की गठन के बाद भी हिन्दी या मलयालम में इनकी प्रभावयुक्त व्यवहार शंकापूर्ण है । क्यों कि निजी तौर पर इन शाखाओं में पुस्तकों-प्रपत्रों का निर्माण सीमित है । इन भाषिक प्रतीकों का अर्थ भी सामान्य जन से दूर है ।

---

1. डॉ. गार्गी गुप्त - पारिभाषिक शब्दावली की विकासयात्रा पृ. 101

यह दृष्टि, गठन और प्रयोग में अनिवार्य है कि विषय विशेष होने पर भी वह जनोपयोगी होना चाहिए । तो उसका अर्थ कहीं दूर नहीं होना चाहिए । कोशों तथा विवरणों से मात्र अर्थ निकलने केलिए जनता समय नहीं जुटायेगी । इसलिए ऐसे विषयों के अनुवाद में जहाँ तक हो सके, पारिभाषिक शब्दावली को कम संख्या में प्रयुक्त करना चाहिए[1]। कृषिसंबन्धी विषयों के अनुवाद में शब्दावली तथा भाषा की दृष्टि से लालित्य बुनियादी आवश्यकता है । कृषक वर्ग केलिए वह सुग्राह्य व सपाट होना अनिवार्य है ।

विज्ञान की शाखाएं अनन्तिम हैं । वैज्ञानिक युग के विकास के फलस्वरूप उनमें अभूतपूर्व परिणाम हो रहे हैं । इसी परिणामों ने आधुनिक युग के मनुष्य को, काफी हद तक सफल जीवन का वरदान दिया है । एक ही विषय से सम्मिलित कई प्रकार की वैज्ञानिक शाखाएं-उपशाखाएं होती हैं । भाषागत दृष्टि से इनमें प्रत्येक की अपनी पारिभाषिक शब्दावली तथा भाषागत अन्तर होते हैं । नए विषय या नई शाखाओं के संदर्भ में हिन्दी व मलयालम में शब्दों की कमी बराबर महसूस हुई है । इन्हें विकास तथा ज़रूरत की कसौटी पर बनाने लगे । पर अब भी इस प्रकार की शब्दावली के पूर्ण प्रयोग और प्रभाव की दावा नहीं कर सकते ।

वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के विभिन्न संप्रदायों में अन्तिम, समान रूप से प्रभाववाले, पर प्रचलित, सरल, संक्षिप्त व गुणसंपन्न शब्दों को लेने पर ज़ोर देते हैं । फिर भी शब्दों के व्यावहारिक उपयोग पर पूर्ण निर्णय नहीं पा सका ।

विज्ञान के विषयों में - गणित, रसायन, भौतिकी, इंजिनीयरी आदि में - अनेकों शब्दों तथा संकेतों का प्रयोग अधिक होता है । बिम्बों तथा सूत्रों को अधिक प्रयुक्त होने के कारण इनके अनुवाद में सीधे ध्वन्यात्मक रूपों का अंकन संभव भी है । इसकेलिए हिन्दी और मलयालम दोनों अन्तर्राष्ट्रीय रूपों का अनुकरण करती हैं । लिप्यंकन और लिप्यंतरण दोनों आवश्यक तौर पर व्यवहृत है । इन विषयों का अनुवादक वैज्ञानिक होने पर विषयोकृत अनुवाद स्तरीय निकलेगा । साथ ही इन विषयों में प्रस्तुत पारिभाषिक शब्दों में एकरूपता भी होनी चाहिए । भारतीय भाषाओं में मुख्यत: हिन्दी और मलयालम में इन शब्दों का रूप समान है । जैसे -

अंग्रेज़ी	हिन्दी	मलयालम
Technic	तकनीक	टेक्निक
Isotop	ऐसोटोप	ऐसोटोप
Bulb	बल्ब	बल्ब
Switch	स्विच्च	स्विच्च
Anode	आनोड	आनोड

सस्यविज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, जीव विज्ञान, कृषि विज्ञान, राष्ट्र विज्ञान, धन विज्ञान, मनोविज्ञान, भू विज्ञान आदि नित्यजीवन के नितान्त उपयोगी विषयों का

---

1 लेखक संघ - विवर्तनम् पृ. 105.

अनुवाद सामान्य भाषा में व्याख्यात्मक ढंग से होना चाहिए । नहीं तो उसका रूप परिसीमित होकर विशेषीकृत बन जाएगा । क्यों कि भाषिक प्रतीक के सौचनात्मक, बोधात्मक, लाक्षणिक अर्थों से पूरी तरह परिचित होना और पचने योग्य बनाना व्यावहारिकता की न्यूनतम सिद्धि है । यह पारिभाषिक शब्दावली के संदर्भ में सर्वाधिक चर्चित समस्या है । पर व्याख्यात्मक रूप देने की कठिनाई से प्रचलित और प्रभावशाली अन्तर्राष्ट्रीय शब्द रूपों को यथावत् लेना उचित बन गया । इन शब्दों को औचित्यानुसार भारतीय रूप देने की कोशिश भी हुई है । ऐसे शब्दों को संस्कृत का तत्सम या तद्भव रूप में ढाला गया । उदाहरण केलिए -

अंग्रेज़ी	हिन्दी	मलयालम
Entomology	षड्पद् विज्ञान	षड्पदविज्ञानम्
Energy	ऊर्जा	ऊर्जम्
Assimilation	सात्मीकरण	सात्मीकरणम्
Dynamics	बलतन्त्र	बलतन्त्रम्
Measure	मान	मानम्
logarithm	लघुबीजक	लघुबीजकम्
Analysis	विश्लेषण	विश्लेषणम्
Atom	अणु	अणु

अतः अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली को अपनी भाषा के अनुरूप बदला तो सकते हैं । यथा अनुकरण यदि लाभदायक है तो उसे आत्मसात करना होगा । वैज्ञानिक व तकनीकी विषयों के अध्ययन-अनुवाद केलिए व्याकरणिक कट्टरता पर भाषा को कसना ठीक नहीं है । विदेशी शब्दों को अपनी भाषा के अनुरूप लिप्यंकन या लिप्यंतरण करना ठीक होगा । उसी प्रकार भावानुवाद की कसौटी पर अपूर्णसिद्ध वैज्ञानिक या प्रौद्योगिकी तकनीकी विषयों का अनुवाद, सारानुवाद या पुनराख्यान की स्वतन्त्रता में करना उचित होगा क्यों कि प्रभावरूप में उसका महत्वपूर्ण स्तर होता है [1]। पाठपुस्तकों तथा शोध ग्रन्थों में यही रीति अपनाई जाती है । अतः अनूदित साहित्य का परम उद्देश्य मूलभाषा अज्ञानी लक्ष्यभाषा पाठक होता है । पारिभाषिक शब्दों से संपन्न अनुवाद भी सामान्य जन के लाभार्थ, उपयोगी व परिचित होना समीचीन है ।

कुलमिलाकर वैज्ञानिक विषयों का अनुवाद विचारात्मक अधिक है । अर्थ के अनुसार अनुवाद करने के कारण अनुवाद के रूपों में - शब्दानुवाद, भावानुवाद, सारानुवाद या व्याख्यानुवाद - कोई भी चुन सकता है । मूल की आत्मा से जुड़नेवाली कोई भी पद्धति अनुवादक अपनी विवेचना के अनुसार अपनाया जा सकता है ।

शोध व अनुसंधान की भाषा

तुलनात्मक, व्यतिरेकी, एककालिक, बहुकालिक आदि सब प्रकार के शोध

---

1 लेखक संघ - विवर्तनम् पृ.101

व खोज केलिए अनुवाद का सहारा लेना पडता है । परभाषा में सृजित-चर्चित ग्रन्थों को स्वभाषा के उपयोगार्थ प्रयुक्त करने केलिए ही इन विषयों को लेकर अधिकाधिक अनुवाद होता है । वैज्ञानिक युग होने के कारण उस संबन्धी विषयों की भरमार व प्रगति हो रही है । साथ ही साहित्यिक व सांस्कृतिक मैत्री से तत्संबन्धी विषयों का आदान-प्रदान भी होता है । शिक्षा के विभिन्न पक्षों के साथ जीवन के स्तरों को जोडनेवाले खोजों के प्रकाशन के संदर्भों में अनुवाद या कम से कम पुनराख्यान का महत्व है

वैज्ञानिक शोध व अनुसंधान की दिशा में देखें तो हिन्दी व मलयालम दोनों भाषाएं उतना विकसित या प्रचारयुक्त नहीं हैं । वैज्ञानिक विकास व संपन्नता अंग्रेज़ी के द्वारा ही विश्वभर प्रफुल्लित है । अंग्रेज़ी के माध्यम से ही नए विषय का विकास होता है । पर द्वितीय प्रकार का अनुवाद, कभी कभी अंग्रेज़ी के माध्यम से हिन्दी या मलयालम में निकलते हैं । मौलिक, वैज्ञानिक शोध व अनुसंधान की दृष्टि से विषयो-कृत दोनों भाषाएं सीमित रहती हैं ।

पर साहित्यिक शोध व सांस्कृतिक अनुसंधान की परंपरा में इन दोनों भाषाएं परस्पर उपजीवि रही हैं । इस दृष्टि से काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों का भी खूब अनुवाद निकले हैं । शिक्षा, धर्म, संस्कृति तथा सामाजिक विषयों को लेकर भारतीयता के संदर्भ में अनुवाद करते समय इन दोनों भाषाओं की रचनाएं भारतभर की भाषाओं में उपयुक्त व चर्चित हैं ।

व्यापार-व्यवसाय की भाषा

व्यापार-व्यवसाय की मुख्य प्रवृत्ति ने ही हिन्दी के संपर्कभाषारूप को प्रभाव-शाली बना दिया है । आपसी यातायात, अभिव्यक्ति स्तर तक होने लगी तो भाषा का प्रभाव एवं समन्वय का सामान्य प्रवाह स्थापित होने लगा । शताब्दियों के पहले ऐसे समन्वय का सिंहद्वार खुल गया था जिससे एकता का शाश्वत रास्ता तैयार हुआ था

वस्तुत: व्यापार के माध्यम से ही अनेक देशी-विदेशी शब्दों का सार्वभौमिक प्रयोग प्रचलित हो गए । विदेशियों के भारतीय अधिक्रमण से, उनकी भाषाओं भारतीय भाषाएं लाभान्वित हुई हैं । प्रान्तीय सहयोग तथा मिश्रण देशी भाषाओं के बीच में खूब प्रभाव डाला । हिन्दी और मलयालम केलिए यह देशी-विदेशी प्रभाव सर्वाधिक उपकृत रहा है ।

मध्यकाल से ही अनेकों विदेशी शब्दों के साथ हिन्दी तथा मलयालम के भाषा-भाषी आपसी संपर्क और भाषा-व्यवहार करने लगे थे । बीसवीं शताब्दी में यह मिश्रण और समन्वयन तेज़ हो गए । अत: हिन्दी के प्रचार केलिए केरलीय वातायन सदैव खुला रहा । मलयालियों केलिए हिन्दी कोई अछूती या नासमझी भाषा नहीं है । केरलभर के व्यापारीवर्ग अंग्रेज़ी के साथ हिन्दी भी संपर्कभाषा के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं । जहां तक कह सके, विदेशी व्यापारी भी भारत में संपर्कभाषा के

रूप में हिन्दी प्रयुक्त करने लगे हैं । सस्ता, कंजूस, महंगा, कितना जैसे साधारण व्यापार-व्यवहार के शब्द पूरे व्यापारसंसार में प्रचलित हैं । इसप्रकार अनेकों चीज़ों तरकारियों तथा नित्योपयोगी समानों के नामों के प्रचलन में भी एकरूपता देखने को मिलती है । चीनी, कुर्सी, कचरा, काला आदि का प्रयोग मलयाली भी यथावत् अर्थ में प्रयुक्त करते हैं ।

इन दोनों भाषाओं का संपर्क व्यापार और व्यवसाय की दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक हुआ है । व्यवसाय की दृष्टि से अंग्रेज़ी का सख्त प्रभाव विद्यमान है पर हिन्दी भी विकासमान है ।

संचार व पत्रकारिता की भाषा

संचार व पत्रकारिता भी आधुनिक युग में जीवन के अभिन्न अंग हैं । इस क्षेत्र में प्रयोजनमूलक भाषा का ही रूप उपयुक्त है । शैली की अप्रतिम शक्ति की प्रस्तुति नहीं, छोटी अभिव्यक्ति में अर्थ का व्यापक असर इन विषयों की विशेषता है । लेकिन उसमें सरसता तथा लालित्य के साथ सामान्य जनजीवन की निकटता भी आवश्यक है [1]।

इस क्षेत्र की शाखाओं में प्रमुख हैं - समाचारपत्र, रेडियो, दूरदर्शन आदि । जासूसी कार्य भी इसी के सहारे होता है । प्रत्येक शाखा की भाषा की विशेषताएं अलग होती हैं । समाचारपत्र में भाषा सुपाठ्य होती है, जहाँ रेडियो की भाषा विधानुसार मधुर । इनमें भी जनजीवन की निकटता तथा अनेकरंगी विविधता रहती है ।

संचार व पत्रकारिता दोनों में हिन्दी मलयालम भाषाओं पर लोकभाषा अंग्रेज़ी का व्यापक व गहरा प्रभाव है । अंग्रेज़ी के अनुवाद में इस संदर्भ में आनेवाली कठिनाईयां ज़्यादात्तर होती रहती हैं । क्यों कि विज्ञान, प्रौद्योगिकी, शिक्षा, खेलकूद आदि के विषयों का सर्वाधिक विकास विदेशों में होता है और अंग्रेज़ी के माध्यम से संसार भर की भाषाओं में प्रचलित होता है । खेलकूद के विवरण सुनते समय प्रत्येक वाक्य में प्रयुक्त होनेवाले अंग्रेज़ी शब्दों की मात्रा का आकलन कर सकते हैं । इनमें अनजाने विषयों तथा बातों का वर्णनात्मक रूप भी प्रस्तुत करना होगा ।

संचार व पत्रकारिता के माध्यम से भी काफी हिन्दी शब्द मलयालम में आए हैं । जैसे - कमाल, बुरा, अखबार, पत्र ।

संचार व पत्रकारिता में विज्ञापन की भाषा का मुख्यस्थान है । अतिशयोक्ति तथा वक्रोक्ति से मानव की कमज़ोरियों का पूर्ण शोषण भाषा के माध्यम से होता है । इस कौशल का अनुवाद भी विज्ञापन में होता है । मन लुभानेवाले शब्दों को सभी भाषाओं में प्रयुक्त करके लाभदृष्टि बढानेवाले युग में, भाषा ही उसका माध्यम है ।

- -

1 . लेखक संघ - विवर्तनम् पृ . 185 .

बीसवीं शताब्दी की देन है - कला तथा मनोरंजन के साधनों, विषयों का आयात-निर्यात । प्रान्तीय व राज्यों के समन्वय या आपसी लेन-देन के अलावा विदेशी भाषाओं तथा सभ्यतागत विशेषताओं की झांकियों के अर्जन-अध्ययन के हेतु अनुवाद यानी पुनसर्जना का मार्ग खुल गया । विदेशों में मनानेवाले भारतोत्सव या एशियाई मेला के समन्वयन के पीछे यही निकटता की कांक्षा है ।

एक दृष्टि से फिल्म या कला-विषयक अनुवाद या पुनः सर्जना की बोलबाला अब के युग में बहुत सामान्य बात है । 'हॉलीवुड' में विजयप्राप्त सिनेमा को या अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर चर्चित या प्रसिद्धिप्राप्त रचना को जितनी जल्दी हो सके, 'डब्बिंग या 'रीमेक' के द्वारा अन्य भाषाओं में प्रस्तुत किया जाता है । इस प्रकार के रूपान्तरण में भाषा आजकल कोई समस्या नहीं रहती । जिस रूप में संभव है, उस रूप में लिया जाता है । अतः इस संदर्भ में संवेदनीयता तथा प्रभावात्मकता की कसौटी ही देख लिया जाता है, न कि भाषा को ।

हिन्दी तथा मलयालम के प्रसंग में इसका सर्वाधिक प्रयास किया जाता है । प्रान्तीय या प्रकृति विषयक विशेषताओं को यथावत् लेना असंभव है तो लक्ष्य भाषा की प्रवृत्ति के अनुसार यथासंभव नया रूप देता है । मनोरंजन के सभी स्तरीय साधनों का अनुवाद या रूपान्तरण जहां तक हो सके, जल्दी तथा प्रचारवादी-सुधारवादी दृष्टि से प्रस्तुत करने की कोशिश जारी है ।

अन्तर्राष्ट्रीय संबन्धों का भाषारूप

अन्य राष्ट्रों की तुलना में विकासमान भारत भी, विश्वमंच पर श्रद्धा व चर्चा का पात्र बन गई है । संपन्न सांस्कृतिक तथा सामाजिक पृष्ठभूमि के कारण भारत विदेशियों केलिए कुतूहलवर्द्धक भूमि रही है । आदान-प्रदान के ज़रिए भारत के अनेकों झांकियों का निर्यात सभी विकसित-विकासमान राष्ट्रों में हुआ है । ज्ञानदृष्टि के साथ शोधकार्य विधिन्याय की गवेषणाएं तथा सांस्कृतिक प्रचार-प्रसार आदि अनेकों पक्षों का खूब अनुवाद निकले हैं । प्रगति की चाह में अन्य राष्ट्रों के मंच पर हिन्दी को प्रतिष्ठित रूप देने का प्रयास होने लगा । अनेकों विदेशी राष्ट्रों में हिन्दी को एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में प्रस्तुत किए गए । हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय रूप सर्वथा अवलोकन और अध्ययन का विषय है । तीन विश्व हिन्दी सम्मेलन के अलावा हिन्दी केलिए एक अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय स्थापित करने पर भी अब ध्यान दिया गया है ।

इसकी तुलना में मलयालम की बात अलग है । ज्ञानगरिमा होने पर भी काम की तलाश में निकले केरल के लोग विश्वभर अपनी भाषा की सुगन्ध फैलाते हैं । इस दृष्टि से मलयालम को औपचारिक भाषाप्रचार की मान्यता न मिलने पर भी विदेशों में भी चर्चित व नामप्राप्त भाषा है ।

अनुवाद की प्रक्रिया का रूप, इन संबन्धों में यथावत नहीं है । तो भी अनुवाद के विभिन्न रूपों की अनिवार्य उपयोगिता हर देश, युग और जीवित समाज केलिए उसकी भावी प्रगति एवं उसके अन्तर्राष्ट्रीय संगठन को समकालीन रखने केलिए सदा ज़रूरी है[1]। यही विश्वबंधुत्व का मार्ग है ।

इन प्रयोजनमूलक पक्षों के अलावा इनसे जुड़ी अनेकों शाखाएं-उपशाखाएं उपलब्ध हैं जिन सबका विश्लेषण अतिव्यापक होगा । विज्ञान मात्र के विभिन्न अंगों में प्रचलित शब्दावली का अन्त नहीं दिखता । प्रयोजनमूलक भाषारूप के कारण भाषा साधारण रूप भी कुछ बदलता हुआ क्रियमाण है । प्रत्येक भाषा के हर एक विषय के अनुसार शब्दों तथा रूपों की गठन होती है । भारत में साधारणतः अंग्रेज़ी से अनुवाद मिलते हैं । हिन्दी को प्रयोजनमूलक भाषा के मंच पर पहुंचाने केलिए सर्वाधिक प्रयास हुआ है । और अब प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हिन्दी भाषा का असर इस पर भी होने लगा है ।

मलयालम की दृष्टि से इस प्रकारका अनुवाद नहीं के बराबर है । समाजविज्ञान या सामान्यविज्ञान में फले ही कुछ पुनः कथन होता है, वह भी तुलनात्मक दृष्टि से बहुत कम है । संपर्क भाषा के रूप में भी वह केरल तक सीमित नहीं है । हिन्दी प्रदेश के मुख्य नगरों में इसका प्रबल रूप मिलता है ।

इन दोनों भाषाओं में प्रयोजनमूलक भाषा तथा विषयों को लेकर मिलने वाले अनुवादों में, मूल लेखन के अनुसार लोकभाषा अंग्रेज़ी का प्रभाव अतिप्रबल है ।

प्रयोजनमूलक भाषा समस्याएं और समाधान

प्रयोजनमूलक भाषा के अनुवाद की शैलीगत समस्याएं साहित्यानुवाद से कम हैं । पर इसका अध्ययन विशिष्ट भाषाभेद तथा सार्वजनिक रूप होना चाहिए । प्रयोजनमूलक भाषा में शैलीविज्ञान का स्थान है । संदर्भ के अनुसार वाक्य के अन्तर विभिन्न स्तरीय भाषिक इकाईयों तथा उपश्रेणियों का अध्ययन होना चाहिए । प्रयोजनमूलक भाषा की शैलीगत विशेषताओं का निर्धारण इसी ढंग से होता है । इस भाषा तथा शैली की सफलता लक्ष्योचित होने में अधिक है[2]।

प्रत्येक उपयोग की भाषा की अपनी एक शैली होती है । उदाहरण में व्यापारी शैली, तकनीकी शैली, साहित्यिक शैली आदि आम भाषागत शैली के नाम हैं । इनमें तकनीकी भाषा विशिष्ट, सीमित और शब्दों पर केन्द्रित है । इसकी अपनी व्याकरणिक शैली हो सकती है । औपचारिक व संकल्पना पर आधारित मकुवारी

- -

1. रामविनायक सिंह - भाषा दिसंबर 1965 पृ.23
2. डॉ. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवाद भाषाएं, समस्याएं पृ.72

तथा बढईयों की भाषा इस श्रेणी की हैं [1]। कारखाने की भाषा वैज्ञानिक व सामान्य दोनों के बीच रहती है। यह अमूर्त, तर्कहीन अर्थ में प्रयुक्त भाषा है। इसकी तुलना में व्यापारी भाषा अपेक्षाकृत व्यक्तिनिष्ठ व स्वतन्त्र है।

वैज्ञानिक शैली सीमित, केन्द्रित, वर्णनहीन, प्रयोजनाधिष्ठ, मानक, सूक्ष्मतम तथा विषयप्रधान होती है। इसका रूप कभी कभी रुचिहीन भी हो जाता है। इसकी तकनीकी शैली, साहित्यिक शैली का बिलकुल विपरीत है। उसका लक्ष्य व्यक्ति को यथासंभव कम महत्व देकर औसत, अतिसामान्य और व्यक्तित्वहीन शैली का सृजन करता है। इसमें क्रियापदों का प्रयोग कम रहता है। कर्मवाच्य अधिक प्रयुक्त है। संज्ञाप्रधान वाक्य संरचना वैज्ञानिक भाषा की विशेषता है [2]। वस्तूपरक शैली को विशेष व अन्तिम प्रश्रय देकर एतदर्थ पाठकों के विशिष्ट स्तरों और वर्गों को दृष्टि में रखकर गठन करना इस भाषा के सृजन की रीति है [3]।

शैली की दृष्टि से प्रयोजनमूलक भाषा का अध्ययन अतिव्यापक हो सकता है। वाणिज्य शैली, विज्ञापन की शैली, पत्रकारिता की शैली, बैकिंग की शैली आदि नित्योपयोगी विषयों की शाखाओं को लेकर अध्ययन संभव है। इनमें प्रत्येक की विशेषताओं का अध्ययन तथा अनुवाद तद्विषयक अनुवादक करें तो लाभदायक सिद्ध होगा।

भाषा का मानकीकरण - एक दृष्टि

संसार की प्रगति ने भाषा को भी अनेकों आयामों से जोडा है। एक दृष्टि से कृत्रिम भी बना दिया है। भाषा की प्रत्येक इकाई को लेकर अपेक्षित अध्ययन तथा मानकीकरण प्रस्तुत है। वैज्ञानिक सभ्यता की यह तीव्रगामी प्रवृत्ति ने भाषाई स्वतन्त्रता पर रोक लगा दी है। सुधारकामना की सीढियों पर बनावट की लांछन भी लगा देती है।

मनुष्य अपनी इच्छानुसार प्रयोग करने के कारण भाषा में आनेवाले बहिरन्तर परिवर्तन से, उसका मूल या आरंभकालीन स्वरूप बदल जाता है। यह प्रक्रिया सार्वभौमिक है। कोई भी भाषा इससे बच नहीं सकती।

स्तरीयता की माँग ने जिन्दगी के सभी पहलुओं को पलट दिया है। उसने ही भाषा को बहाव पर लगाम देकर मानक भाषा पर ज़ोर दिया है। ठीक है, हमें मानक भाषा चाहिए। वह हमारी प्रगति का प्रतिफलन है। इसीवजह से हम आज वैज्ञानिक या तकनीकी भाषा प्रयुक्त करते हैं।

लेकिन भाषा के इस रूप ने लोकमानस पर कितना प्रभाव छोडा है।

- -

1 श्री शरण - अच्छी हिन्दी सुन्दर हिन्दी पृ. 45.
2. डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर - अनुवाद भाषाएं, समस्याएं पृ. 72
3. रमानाथशर्मा - भाषा मार्च 1965 पृ. 25.

मानक भाषा 'विशेष भाषा' है । विशेष संदर्भ और विषय उसका परित्राण करते हैं । उसके वाक्य सामान्यत: छोटे होते हैं । साथ ही शब्दसमूह भारी और अर्थ संपन्न । इस प्रकार 'साल वाक्य' में आनेवाले पारिभाषिक शब्द भाषा को वैज्ञानिक मुखौटा देते हैं । हमारे दफ्तरों की भाषा का यही रूप है । अत: भाषा का यह रूप स्वतन्त्र भाषा से काफी उच्च मगर दरिद्र है [1]। क्यों कि इसको लिखते हैं -'कुछ मानकवर्ग', इसका प्रयोग करते हैं - 'कुछ मानक दफ्तर' । सामान्य लोग इसकी शब्दावली से अपरिचित रहते हैं । इसलिए डॉ. भोलानाथ तिवारी जैसे लोग कहते हैं कि शास्त्रों और विज्ञानों की भाषा सहज रूप में ही जटिल होती है । इसका मुख्य कारण होता है पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग । इसे अवगुण नहीं माना जा सकता । वास्तविकता यह है कि भाषा की सुबोधता सापेक्ष होती है, निरपेक्ष नहीं [2]। फिर भी समस्याओं का समाधान नहीं होता । विविधढंगी कमज़ोरियों से भाषा का रूप कृत्रिम बनता जा रहा है । कई लोग ऐसे भी हैं जो अपनी भाषा तथा शैली को कठिन व दुर्बोध बनाने में गरिमा समझते हैं [3]। भाषा की दुर्बोधता बनावटीपन से उत्पन्न दाय नहीं होना चाहिए ।

यहाँ पारिभाषिक शब्दावली में लोकदृष्टि की अपेक्षा का प्रश्न उभर आता है । व्याकरण या भाषा के अन्य नियमों से बढकर, भाषा व्यवहार महत्वपूर्ण है । भाषा में लगानेवाले मानदण्ड उसकी व्यावहारिकता की पुष्टि के बदले कभी कभी अस्थिर और अस्वीकार्य हुआ करते हैं । सामान्य लोगों का भाषासंस्कार शुद्ध एवं मानक नहीं होते हुए भी, व्याकरण को पूरी तरह नकारने का नहीं है ।

लोकभाषा के प्रमुख अंग शब्द होते हैं । क्यों कि वे भाषा की अर्थसीमा की दायरे में काट-छाँट कर उसके रूप पर मुद्रा नहीं रखते । मतलब यह है कि उनकी व्यावहारिकता प्रयोगात्मक स्तर पर नहीं, निरी उपयोगात्मक पहलू पर है । मन में अन्तर्लीन व्याकरण के अनुसार वे अपने भावों को प्रयुक्त करते हैं । इसमें परिनिष्ट विचार से बढकर भावपूर्ण सहजता रहती है । अशिक्षित लोगों की व्यवस्थित भाषा या बोली की एकरूपता, उनसे व्यवहृत व्याकरण या भाषाई मानदण्ड का प्रमाण है ।

भाषा की सार्वजनीनता होती है । इसको संकुचित दायरे में लेनेवाले प्रयोगिक पक्ष है व्याकरण की वैज्ञानिक दृष्टि । प्रत्येक पारिभाषिक शब्द पूर्वधारणाओं से युक्त प्रतीक होता है [4]। संक्षिप्त व्यवस्था के इस 'टिकिया' का प्रयोग 'विशेष बिमारी केलिए मात्र होता है । हर एक बिमारी केलिए विशेष टिकिया । स्वतन्त्र अस्तित्व होते हुए भी सामान्य भाषा की तुलना में इसकी यह परवशता है कि बाहर के लोग इन्हीं के प्रभाववाले अन्य शब्दों से काम लेते भी हैं । कार्यालय के कुछ लोगों तक समाए रहना इसकी प्रभुता पर लगानेवाला सीमाचिह्न है ।

- -

1. ए. कोप्टूटोव - शब्दक्रम् चिह्नक्रम् पृ. 33.
2. डॉ. भोलानाथ तिवारी - अच्छा हिन्दी कैसे बोलें कैसे लिखें पृ. 25.
3 ,, ,, पृ. 24.
4. रा. प्र. जायसवाल - भाषा दिसंबर 1966 पृ. 20.

परिमार्जित भाषा गढ़ी जाती है । इसलिए सहज मिट्ठी की बास से वह दूर रहती है । संस्कृत से अनभिज्ञ लोग ही नहीं, संस्कृत जाननेवाले भी हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली से अनजान रहते हैं । साथ ही दिन-ब-दिन प्रगति के नाम पर अनेक संयुक्त शब्दों का निर्माण होते रहते हैं । इसके बदले अपेक्षित शब्दों को अधिक उपयुक्त तथा प्रचार-प्रसार करने में ध्यान देना है । जनता अब वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली को समझेंगे तभी हमारी भाषा परिनिष्ठित धरातल पर गढ़ पाएगी । हम बनावट की जकट से दूर रहें । पारिभाषिक शब्द का अलोकतन्त्रीय रूप को यथा-साध्य हटाएं । जहां तक हो सके, पारिभाषिक शब्द को अलग मानने की दृष्टि छोड़ दें । सरकार तो अपनी है, सरकारी भाषा क्यों अपनी से अलग ? इसका अर्थ यह नहीं कि सारे के सारे सरकारी कार्य जनता से कहना है । बात तो इतना है कि सरकारी भाषा, कार्यालयीन भाषा, राजभाषा आदि खण्डित व्यक्तित्व को मिटा दें और लोकदृष्टि से संपन्न राष्ट्रभाषा का भारतीय रूप स्थापित करें । अतः इन धारणाओं के प्रतीकों को यथासंभव सरल बनाकर, उनका प्रचार-प्रसार करना चाहिए ।

सामान्य भाषा जनसाधारण के हृदय की प्यारी अभिव्यक्ति होती है । उसका परिमार्जन तथा परिष्करण आवश्यक है । संस्कृत के प्रभाव से तत्सम शब्दों का मोह अब विद्यमान है । ऐसे कार्य से उत्पन्न समस्तपदों का, जनता से कम संपर्क है । संस्कृत तथा अंग्रेज़ी भाषा का प्रभाव सभी भारतीय भाषाओं पर है, उसका लाभ उठाना चाहिए । पर अटपटे रूप में कृत्रिम तथा विचित्र पदों का प्रणयन उचित नहीं होगा । यहां यह भी ध्याध्व्य है कि अपनी टूटी-फूटी भाषा में सामान्य लोग भी कुछ प्रचलित अंग्रेज़ी या संस्कृत शब्दों का इस्तेमाल करते हैं अतः जनव्यापी सिद्धान्त युक्त प्रक्रिया न होकर सहज प्रवृत्ति है । अनजाने प्रयुक्त जनभाषा में अर्थवान अभिव्यक्तियों का ढेर भी रहता है ।

अब अनुवाद के ज़रिए काफी शब्दों का मेलामिलाव होने का समय है । उससे चयन समिति लाभ उठाएं । प्रचलित शब्दों को अधिक महत्व देना चाहिए । साथ ही उनकी तुलना पारिभाषिक शब्दों से करते हुए निष्कर्ष पर पहुंचना भी । ठीक है कि पारिभाषिक शब्द साधारण नहीं, स्तरीय है, होना चाहिए । फिर भी तुलनात्मकता से निकटता का मार्ग खुलेगा, अलगाव और औपचारिकता दूर होगी ।

वाक्य के स्तर पर भी सरलता के नियम होते हुए तत्समप्रधान संयुक्तपद कार्यालयीन भाषा की जटिलता का कारण बन जाता है । अर्थ द्योतित करना इनसे तो संभव नहीं । इसलिए इनकी प्रस्तुति न व्याकरणवेत्ता से संभव है, न साहित्यकार से और न सामान्य नागरिक से । अब तो लगता है कि पारिभाषिक शब्द का उद्देश्य लेखक या पाठक को समझाने के बदले कोई औपचारिक कार्रवाई है, जिसे कोई कोश के सहारे लिखें, कोई उसी के सहारे पढ़ें । बाद में सब भूलकर 'अच्छी हिन्दी सुन्दर हिन्दी' का नारा लगा दें । इस कामकाज से शब्दों की जड़ें मज़बूत नहीं होती ।

हम यह न भूलें कि राज्य या सरकारी कामकाज और राष्ट्रव्यवहार

तथा नियमनिर्माण का आत्यन्तिक लक्ष्य जनता का कल्याण है । उनकी भाषा चिरन्तन है । उन्हें संस्कृत या किसी अन्य भाषा का लिबास न पहनाएं । गढने के पहले ज़रा परिप्रेक्ष्य भी सोचें । इसलिए यह कथन सामयिक लगता है कि पारिभाषिक शब्दों का निर्माण सेक्रेटेरियट के ठंडी टेबुल पर नहीं बल्कि जनता की जिह्वा पर होना है [1]। पारिभाषिक शब्दावली विकास का लक्षण मात्र नहीं, भाषा की श्रीवृद्धि का कारण भी है[2]।

परस्पर अपवर्जिता तथा एकरूपता शब्द निर्माण का अनिवार्य नियम है, पर हिन्दी जैसी भाषाओं में यह पूर्ण नहीं है [3]। पारिभाषिक शब्द कभी कभी मिले जुले या भ्रामक ठहरते भी हैं । जैसे - अधीक्षक, निरीक्षक, परीक्षक, पर्यवेक्षक, सर्वेक्षक । इसमें कहीं कहीं असामान्यता तथा विलक्षणता होती है । सामान्य भाषा से यही अहेतुक श्रम इन्हें दूर रखती है । भाषा को पूर्ण और प्रयोगसिद्ध बनाने का आशय, उसे स्वयं संपूर्ण बनाने के साथ साथ सार्वभौमिक बनाना भी है । हिन्दी की तुलना में मलयालम में इन शब्दों का अंग्रेज़ी लिप्यंकन और लिप्यंतरण अधिक उपयुक्त है । अत: सर्वेयर, सूप्रण्ड, इनस्पेक्टर, सूपरवैसर आदि शब्दों का खूब प्रयोग वर्तमान है । अत: गठन के पहले यह सोचें कि उनका समानार्थी शब्द अन्य भाषा के ही सही, व्यवहृत व प्रचलित है या नहीं ।

फिर नए वैज्ञानिक युग के नूतन आशयों को नई शब्दावली में प्रयुक्त करने का मामला है । नए मस्तिष्क तथा मानस से व्युत्पन्न नव साहित्य देखिए । पुरानी भाषा और शिल्प के बदले नई भाषा बिना किसी संपर्क के पनप उठती है न ? उसमें कोई आरोप या अधिरोपण की बात नहीं है ।

हिन्दी-मलयालम के तथ्यप्रधान साहित्य के अनुवाद में उपर्युक्त सभी समस्याएं हैं । तुलनात्मक दृष्टि से मलयालम में शब्दावली बहुत कम है, समस्याएं भी । अखिल भारतीय दृष्टि से पारिभाषिक शब्दों को एकरूप बनाने तथा सरल व प्रयोगपूर्ण रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश जारी है ।

शिक्षा में पारिभाषिक शब्दावली का स्थान आज भी सही मायने में नहीं है । अध्यापक भी इन शब्दों से अनभिज्ञ रहते हैं । साहित्य तथा भाषा के विद्यार्थियों केलिए पारिभाषिक शब्द खटकनेवाले हैं । उसे वे परीक्षा की दृष्टि से कुछ रटी-रटायी पढते हैं । उनकी संख्या भी सीमित है । इसपाठावली को कंठस्थ करने के पीछे अंक का अर्थात् नौकरी का मोह है । अत: सहज आवश्यकता के रूप में इसको नहीं पढते, पढाते या समझाते ।

नागरिक भाषा अयाचित या श्रमसाध्य नहीं होनी चाहिए । समस्त सरकारी

- -

1 • रामवृक्षबेणीपुरी - भाषा दिसंबर 1965 पृ • 35 •

2 • रा • प्र • जायसवाल - भाषा दिसंबर 1966 पृ • 21

3 • महेन्द्र चतुर्वेदी - भाषा 1962 पृ • 50 •

उपक्रमों के सामान्य शब्दावली का संकलन और उनको पढाईनिचली स्तर से अपेक्षित है । राष्ट्रीयता का प्रश्न पुस्तकों तथा कोशों के निर्माण तक सीमित नहीं बल्कि वहाँ से दूर देश के प्रत्येक कोने के नागरिक तक पहुँचना है । वहीं राष्ट्रीय अस्मिता की पूर्ति है । पारिभाषिक शब्द भाषा के प्राकृतिक विकास मात्र का द्योतक नहीं होते । संस्कृति, सौन्दर्य एवं ज्ञान के विकास के साथ साथ वे राष्ट्रभाषा केलिए भी लाभदायक सिद्ध होना चाहिए । इस तरह की आम विशेषताओं से युक्त व्यावहारिक व प्रयोजनमूलक भाषा का निर्माण हमारा सदुद्देश्य है ।

मशीनी अनुवाद

पारिभाषिक शब्दों तथा प्रयोजनमूलक भाषाओं को सुनिश्चितता देकर उन्हें उपयोगार्थ प्रस्तुत करने केलिए मशीनी अनुवाद पर ज़ोर देने लगे । दोनों भाषाओं में दक्ष अनुवादक भी कभी कभी कठिन अनुवाद के संदर्भ में असफल रह जाता है । मनुष्य के द्वारा अनूदित सामग्री की विविधता और कमियों को देखते हुए, भाषा को प्रभावशाली बनाने केलिए मशीनी खोज होने लगी ।

आधुनिक युग में यन्त्रों का विकास अतिवेग में है । अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर कम्प्यूटरों का विकास और भाषाई उपयोगों केलिए भी उनका सार्वत्रिक प्रयोग करने लगे हैं । सत्य प्रत्यक्षीकरण में प्रयुक्त मशीनों का उपयोग पूर्वमान्यता तथा अयादेश के बिना कार्य करने की सुविधा प्रदान करती है । व्याकरणानुकूल व्यवस्थित भाषा को भाव व शैली की दृष्टि से पूर्ण और तर्करहित रूप में शुद्ध करने का प्रयास होता है। पर भाषा की रचना का वैविध्य इकाईयों के सृजन में कठिनाई डालती है । हिन्दी और मलयालम दोनों में इसप्रकार की सभी समस्याएं हैं । गतिशील भाषा की ही नहीं, व्याकरण और भाषा के सामान्य प्रयोग की दृष्टि से भी ये दोनों भाषाएं कमियों और खामियों से युक्त हैं । अब तक इन दोनों भाषाओं में मशीनी अनुवाद का प्रयास सफल नहीं हुआ है । कार्यालयीन उपयोगार्थ प्रयुक्त शब्दों की लक्ष्याभिव्यक्ति दूसरी भाषा में निश्चित कर कम्प्यूटर द्वारा उनका अनुवाद करने की रीति अब प्रचलित है । मलयालम में इसका शोध कम ही हुआ है ।

प्रयोजनमूलक भाषा की दृष्टि से ही अब मशीनी अनुवाद पर खोज चल रही है । यह भी शाब्दिक स्तर पर अधिक । शैली विषयक कार्य अब भी बहुत दूर पर है । व्याकरणिक तथा भाषावैज्ञानिक दृष्टि से पूर्ण भाषा ही इन खोजों में प्रभावशाली परिणाम दिखाती है । वैज्ञानिक अनुवाद की सख्त अनिवार्यता के कारण खर्चीली होने पर भी मशीनी अनुवाद की खोज गतिशील है । इसपर पूर्णता कब प्राप्त होगी - यह कहा नहीं जा सकता ।

साहित्यिक व अन्य शैलीनिष्ठित रचनाओं का मशीनी अनुवाद कठिन है । मानव की बुद्धि, मन, आत्मा आदि की सहायता अनूदित रचना की विलक्षणता बढाती है । संवेदना रहित मशीन के द्वारा इसका रूप अर्थरहित हो जाए तो अद्भुत नहीं ।

सटोक अनुवाद केलिए अपवादों का रहना मना है । लेकिन मशीनी अनुवाद को व्यवस्थित व मोहक संभावनाएं इस ओर की खोज को त्वरित बनाती हैं । आजकल मशीनी अनुवादों के उपरान्त अच्छा खासा संपादन करके अनूदित रचना या वस्तु को सुष्टु और पूर्ण बनाने का प्रयास भी गतिशील है । फिर भी भाषावैज्ञानिक विशेषताओं से उत्पन्न समस्याओं के कारण मशीनी अन्तरण संदर्भानुसार असिद्ध लगता है । एक ही शब्द के विभिन्न उच्चारण एवं अर्थ से उत्पन्न वैविध्य, जब भाषानुवाद में कठिनाई डालती है तब उसका प्रभाव भी बदल जाता है । इसलिए मशीनी अनुवाद के समय गतिशील भाषा के अपवादों को कम करने की कोशिश होती है । कम से कम एक निश्चित समय और संदर्भ में इनकी संख्या न्यूनतम हो[1]।

इसी प्रकार भाषाविदों की सहायता लेकर कम्प्यूटर विशेषज्ञ अपनी समस्याओं को संभाल लें और विश्लेषण और निर्धारण की समन्विति से एक सामान्य निर्णय बना लें । अतः कम्प्यूटर से अप्राप्य सौन्दर्य के पक्षों को समुचित रूप से इकट्ठा कर उन्हें आकर्षक निष्कर्ष देना वांछनीय है । क्यों कि सच्ची और संपन्न अभिव्यक्ति ही प्रभाव की उपस्थिति में सारयुक्त निकलेगी ।

निष्कर्ष

वस्तुतः भारतीय भाषाएं वैज्ञानिक व पारिभाषिक शब्दों की दृष्टि से कमज़ोर रही थीं । आदान, चयन तथा अनुकरण के वास्ते इनका उपयोग होने लगा और भाषाएं - मुख्यतः राष्ट्रभाषा हिन्दी- अभिव्यक्तिसंपन्न हो गईं । भाषा के सर्वमुखी विकास केलिए यह पहलू महत्वपूर्ण था, प्रयोगात्मक भी ।

सीमित क्षेत्र की भाषा होने पर भी प्रबुद्ध चेतना तथा प्रगतिपरक खाद्यों के कारण मलयालम आज के ज़माने में सामर्थ्य रखता है । इसमें भी उपयोगार्थ पारिभाषिक शब्दों का चयन व प्रयोग चालू है । औचारणिक, वर्तनीबद्ध या अर्थपरक विशेषताओं से इन्हें प्रभावपूर्ण व सुनिश्चित बनाने की कोशिश होती है । प्रगति के प्रतिफलन के वास्ते इस भाषा के रूपों का लाभदायक पक्ष राष्ट्रभाषा हिन्दी केलिए भी वरदान रहा है । यह भी सच है कि अन्य दक्षिण भारतीय भाषाओं की तुलना में, मलयालम हिन्दी केलिए सदैव खुला रहा है, रहती है ।

राष्ट्रीय उन्नमन की पूर्ति के हेतु हिन्दी के महत्व को, केरलीय जनता ने यथावत् स्वीकार किया है । दोनों भाषाओं में वाक्यविन्यास की भिन्नता होने पर भी पची हुई अभिव्यक्ति की जैसी बहाव देखने को मिलती है, जो अनुवादक केलिए सर्वथा सहायक और उत्साहवर्द्धक है ।

पर हिन्दी के शुद्ध मानक रूप का प्रयोग समस्त हिन्दी जनता केलिए भी बहुत सरल नहीं है । इसका कारण है कि भारतीय संस्कृति की अनेकरूपताओं

---

1 ·डॉ ·मोतीलाल गुप्त - आधुनिक भाषाविज्ञान: चिन्तन की कतिपय दिशाएं पृ ·105 ·

में एकरूपता लाने की कठिनाईयाँ । इसलिए भाषा को भी एकतानता में लाना श्रमसाध्य है ।

प्रयोजनमूलक भाषा साहित्य के कथ्य को विवेचना शक्ति के अनुसार रूप विधान को महत्व देकर अनुवाद होना चाहिए । विशिष्ट संदर्भों में भावपक्ष का अन्तर पहचानना, व्याख्या करना तथा अन्त: प्रेरणा के अनुसार कार्य की पूर्ति, नैसर्गिक तथा मौलिक विशेषताओं से युक्त भाषा में प्रस्तुत करना एकमात्र रास्ता है । क्यों कि वैज्ञानिक विषयों तथा प्रयोजनमूलक भाषाओं का मौलिक प्रयोग भारतीय भाषाओं में कम हुआ है । इसलिए ही वे भाषाएं अशक्य रहती हैं । देश की प्रबुद्ध चेतना का प्राचुर्य मिलने पर इन विषयों का अपढ कारीगर तक पहुंचना आसान होगा और तभी भाषा प्रबुद्ध चेतना को वाहिका होगी [1]। वही प्रयास आज का महत्वपूर्ण मार्ग भी बन गया है । मिश्र संस्कृति के देश में इस लक्ष्य की पूर्ति केलिए अपनी एक भाषा - राष्ट्रभाषा हिन्दी - का परम विकास और प्रसार नितान्त ज़रूरी है । इस दृष्टि से उस पर अनुसंधान-अनुशीलन होते हैं । रूप और माध्यम की दृष्टि से भारतीय संस्कृति की वाणी बनाने केलिए उसपर अधिक महत्वपूर्ण नज़र डालनी चाहिए । अत: इसकेलिए अनुवाद का रास्ता प्रशस्त है । इस मार्ग में सभी भारतीय भाषाओं की देन के साथ मलयालम का हिस्सा भी सदैव रही है । इन दोनों भाषाओं की अपवर्जिता इनकी निजी पहचान को और अधिक ओझल बनानेवाली है ।

****** ******

---

1. क्रान्तिकृष्ण अपूर्व - भाषा 1969 पृ. 14.

उपसंहार

अनुवाद के सिद्धान्त और प्रक्रिया पर काफी चर्चा मिलती है । पर, किसी भाषा पर केन्द्रित काम भारत में विशेषतः हिन्दी के माध्यम से बहुत कम हुआ है, होता है । राष्ट्रभाषा के व्यापक असर के कारण ऊपर अध्ययन तो हुआ है पर तुलनात्मक शोध की दृष्टि से विरले ही चर्चा हुई । बराबर सुननेवाली शिकायतों तथा अपूर्णता के एहसासों से अनुवाद 'अधूरा काम' मानने लगा है । जो निकला है, उससे संतुष्ट होना अनुवाचक का भाग्य रहा है ।

यह शिकायत अनुवाद के इतिहास से जुडी हुई है । अनुवाद किसी भी भाषा में क्यों न हो, बैठे-ठाले का काम नहीं है । वही अनुवादक अपनी प्रक्रिया से न्याय कर सकता है, जो ध्यान और श्रम के साथ लगन को इकट्ठा ले । सूझबूझ की महिमा उसकी भाषा व्यक्त करेगी जो अनुवाद नहीं, भाषा विशेष की कृति लगेगी ।

मलयालम-हिन्दी भाषाओं का परस्पर अनुवाद तेज़ी से आगे बढ रहा है । समीक्षा की तरह अनुवाद भी कृति के साथ या तुरन्त बाद निकलनेवाले इस युग में 'आम भाषा' का संकल्प फैलने लगा है । यह सामान्य व्यवहार, राष्ट्रीय व्यक्तित्व के विकास का बुनियादी साधन है । इस निष्ठा का निर्वाह और दायित्व राष्ट्रभाषा पर है जो अन्य भाषाओं के सहारे संपन्न हो जाता है । इस ओर ज़रा सा प्रयास अनुवाद की पृष्ठभूमि में हिन्दी- मलयालम भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से हो सकता है । अखिल भारतीय भाषासंकल्प को मूर्त बनाने केलिए सभी भारतीय भाषाओं को हिन्दी के मार्ग तक पहुँचाना होगा । भाषा संप्रदायों तथा क्षेत्रीय आन्दोलनों के जकड में पडे निर्माणात्मक सिद्धान्तों में तभी ढीलपन आ जाएगी और धीरे धीरे लोगों की मंजूरी मिल जाएगी । मिश्रित संस्कृति के अंगों को सामान्य रूप प्रदान करना होगा, वही मिश्रित लोकमानस आत्मसात कर सकता है ।

नैसर्गिक वस्तु होने के कारण भाषा में अतिरेकता है । इससे भाषा के प्रयोगों में बहिरन्तर परिवर्तन आ जाता है । अनुवाद की यान्त्रिक पद्धति के उदय से भाषा की अतिरेकताओं को कम करने की ओर ध्यान लगाया गया और 'मानक भाषा' के संकल्प की पूर्णता केलिए श्रम होने लगा । भाषा संबन्धी नियमों में जहाँ जहाँ कमियाँ और खामियाँ हैं, वहाँ वहाँ नियमों के कट्टर व व्यवस्थित रूप प्रस्तुत किए गए । भाषा को स्तरीय बनाने की कोशिश बराबर जारी है । उसके बहिरन्तर प्रवाह पर लगाम दिया गया । अनुवाद के संदर्भ में भाषा का पठन व लेखन इस दृष्टि से नहीं हो सकता । क्यों कि विशेष संदर्भ और विषय मात्र अनुवाद की सामग्री नहीं । अर्थसंपन्न शब्द समूहों, पारिभाषिक शब्दों और वैज्ञानिक धारणाओं के अलावा लोकदृष्टि से संपन्न व्यावहारिक जीवन के अस्थिर व अनुपेक्षणीय अंशों को भी प्रमुखता अनुवाद के संदर्भ में है ।

अनुवाद में व्याकरण को ढीलापन कभी कभी महसूस होती है । ग्रहण करनेवाली भाषा अपने व्याकरण को चढाने का उपक्रम करती है । लेकिन व्याकरण का आच्छादन अस्वाभाविक होने लगा तो भाषा का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा । अत: इससे बचने का उपाय व्याकरण की समानताओं-असमानताओं का पूर्ण ज्ञान है । ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य आदि के ग्रहण हो भी जाय तो वह व्याकरणिक शुद्धता तथा अपवादहीनता पर होनी चाहिए । और व्याकरणिक नियमों को ढीलापन को लेकर विवाद मत डालना चाहिए । व्याकरण भी, अनुवाद के संदर्भ में सिद्धान्त मात्र नहीं, प्रायोगिक, व्यावहारिक व व्यवस्थात्मक भाषाप्रयोग का पोषक तत्व है ।

अनुवाद की मूल इकाई वाक्य की गठन, संरचना पर आधारित है । उनकी तुलना वस्तुत: समानता की खोजमेंबहुत ही सहायक है । मलयालम तथा हिन्दी की सामान्य संरचनात्मक समानताओं के अलावा विशेष व्यवस्था भी मौजूद व प्रयुक्त है । सरल, मिश्रित और संक्षिप्त वाक्य की समानताएं हिन्दी-मलयालम भाषाओं के अनुवाद में बहुत सहायक हैं । अंग-अंगी वाक्यों का स्थानान्तरण और भाषाप्रयोग की विशेष शैली आदि का परिचय है तो अनुवाद की संरचना व्यवस्थित रहेगी । यही व्यवस्था सौन्दर्यात्मिकता की नियामक है ।

शब्दों का अर्थनिर्धारण वर्तमान युग में सामान्य हो गया है, पर वाक्य संरचना में यह नियोजन साथ नहीं रहता । अत: वाक्य दुर्बोधता की विभिन्न स्थितियों में अनुवादकीय दायित्व संकट का सामना करता है । 'प्रयोग' या 'वादीयता' के नाम पर निर्मित, सृजित और लिखित उलझाव से भरी कृतियों के अनुवाद में मूलसामग्री पचाए बिना अधकचरे अनुवाद निकलने का यही कारण है । अव्यवस्थित वाक्य संरचना में सौन्दर्य देखनेवालों की रचनाओं के अनुवाद में भी यही समस्या उभर आती है, चाहे उनके शब्द व रूप सरल ही हो ।

भाषावैज्ञानिक दृष्टि अनुवाद में प्रादेशिक-प्रान्तीय प्रभाव का निर्धारण करती है । सामान्य जनता भी अनुपेक्षणीय व्याकरण जानती है । उनकी भाषा अव्यवस्थित होने पर भी लयबद्ध है । उनके अनुवाद में अन्तर्लीन व्याकरण के अनुसार भावपूर्ण सहजता बरतनी होगी । एकरूपता तथा भाषा का मानदण्ड सीखना परखना होगा । इस तरह संदर्भों का अनुवाद व्याकरण से बढकर भाषावैज्ञानिक हो जाता है ।

यथा भाषा की व्यवस्था में वैज्ञानिकता का पुट है । इसलिए अनुवाद में भी लक्ष्यभाषा की वैज्ञानिक व्यवस्था की सहायता लेना पडता है । विभिन्न युगीन रचनाओं का अध्ययन-विश्लेषण तथा अनुवाद होता है । काल, स्थान व समय सापेक्ष कृतियों का सामयिक अनुवाद युगीनश्रेय बन गया है । अत: औचित्य और ज्ञान की आकांक्षा केलिए अनुवाद माध्यम बन गया है ।

अनुवाद तुलनात्मक भाषाविज्ञान के अंतरगत आता है । पर, उसका संपूर्ण विकास अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के विषय के रूप में है । अनुवाद आधुनिक युग में जीवन के निकट होकर व्यावहारिक गरिमा से मण्डित काम बन गया है । अर्थविज्ञान के सहारे बिना भावानुवाद संभव नहीं ।

सामान्य व्यवहार के साथ सांस्कृतिक परंपरा के निर्वाह का दायित्व भी अनुवादक पर है । भाषा का व्यक्तित्व बहुप्रादेशिक बनाने में कुछ रोकथाम आते रहते हैं । यह भाषा की प्रकृति और निजता के ज़रिए उत्भूत होते हैं । चयन, विचलन आदि की कुशलता से इन्हें निपटना चाहिए । पर, कुछ अवस्थाओं की जटिलता में अनुवादक असफल पड जाते हैं । वहां बात उनके वश में नहीं रहती । क्यों कि शैली का प्रसंग सैद्धान्तिक नहीं है, सौन्दर्यात्मक व अभिव्यक्तिपरक भी है । उसकी सौन्दर्यशास्त्रीय महिमा का अनुवाद कठिन है । वह उसकी है, जिससे असली व सच्ची अभिव्यक्ति खोली हुई है । पर, ऐसा कठिनतम काम भी कभी कभी भावपूर्ण सहजता एवं परिचयसंपन्नता से सिद्ध अनुवादक क्षमता से करता है । इस प्रकार के उदाहरण अनूदित साहित्य में, विरले ही सही, मिलते हैं ।

अनूदित सामग्री की प्रभावात्मकता व्यक्ति की सहज वृत्ति से उत्पन्न है । यह सर्जनशील प्रतिभा भी सामान्य नहीं है । उपार्जन से ठीक ही ज्ञान व परिचय आत्मसात कर सकता है, पर प्रतिभा का सामान्य प्रयोग अनुवाद में औचित्यपूर्ण है, होना चाहिए । यह सामान्य भाषाप्रयोग की कसौटी से ऊंचा है ।

अनुवाद की दृष्टि से सामान्य भाषा का परिमार्जन तथा परिष्करण आवश्यक हो उठा है । लेकिन इसके नाम पर अलोकतन्त्रीय रूप में भाषाप्रचार व शब्दचयन की रीति उचित नहीं है । भाषा औपचारिक प्रक्रिया मात्र नहीं, उसमें सहज बहाव होता है । प्रत्यक्ष कर्म होने के साथ साथ उसमें अप्रत्यक्ष ज्ञान रहता है । सहजता और कृत्रिमता से सहजता को तरहीज देना है । व्यावहारिक राजभाषा, कार्यालयीन भाषा, वैज्ञानिक या तकनीकी भाषा के नाम पर तत्समप्रधान संस्कृत शब्दावली का कट्टर अनुकरण नहीं करें, समय समय पर स्थानीय व जनकीय भाषा से शब्द लें ।

परिशुद्धता, सुनिश्चितता तथा एकरूपता के क्रम पर शब्दों की रचना तथा भाषा की व्यवस्था करनी चाहिए । व्यवहार केलिए मन और मस्तिष्क की भाषा चाहिए, न कि नत्थी । राष्ट्र व्यवहार केलिए भाषा व्यवहार - इसतरह के अनुवाद की प्रेरणा शक्ति होनी चाहिए । इसलिए नई संकल्पनाओं तथा आशयों के चयन में भी आरोप या अधिरोपण के बिना अयाचित या श्रमसाध्य न होकर राष्ट्रीय अस्मिता की पूर्ति के रूप में होना चाहिए ।

भाषा को आधुनिकीकरण पर चर्चा होने के इस संदर्भ में यह सूचित करना ठीक होगा कि वह प्रक्रिया कभी कुछ पहलुओं पर सायास है, तो कभी कहीं अनायास भी । सहज व अनायास रूप में प्रवाहित शब्दों, रूपों व शैलियों का जनमानस में स्वाभाविक प्रतिष्ठा मिलती है । पर जानबूझकर गठनेवालों का सायास प्रभाव होता है । हिन्दी के मार्ग पर हुए सायास प्रभाव गलतफहमी की कारण बन गया है, जिसे दूर करना बहुत जरूरी बात है । हिन्दी के मार्ग पर पूरी भारतीय भाषाओं की देन है, उसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखना अखिल भारतीयता केलिए अनिवार्य है ।

भाषा के माध्यम से प्राप्त एकता का मार्ग मजबूत व स्थायी होता है । भाषिकी प्रान्तों का आपसी समन्वय अभिव्यक्ति के द्वारा संभव है, चाहे सिद्धान्त व नियम कितने भी न्याय क्यों न कहे । इसलिए भाषा के स्वाभाविक भविष्य पर बाधा नहीं डाले । पथ दिखाना हमारा कर्तव्य है, चुनना भाषा को अपनी । वेगमयी भाषा को नियमों में आबद्ध करने के बदले नियमों के सहारे भाषा के विविधलक्षी व्यवहार की वृद्धि करना मुनासिब होगा, ताकि अधिकाधिक लोग लिख सकें, समझ सकें, सदुपयोग में ला सकें ।

****** ******

परिशिष्ट

हिन्दी एवं मलयालम में अनूदित साहित्य

(मूल रचना, लेखक, अनुवादक और प्रकाशन वर्ष के क्रम में)

1. मलयालम से हिन्दी में

- अयल्कार - केशवदेव, पड़ोसी - सुधांशु चतुर्वेदी 1976
- अरनाषिकनेरम - पारप्पुरत्तु, आधी घडी - डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर 1974
- कथकळ 1953 - कारूर नीलकंठ पिल्ले, मलयानिल कहानियाँ - भारती विद्यार्थी
- इंदुलेखा - चन्दुमेनोन, केशवन नंपूतिरि 1978.
- ओटयिल निन्नुं - केशवदेव, नाली से - सुधांशु चतुर्वेदी 1964.
- न्टुप्पाप्पाक्कोरानेण्डार्न्नु - बषीर, दादा का हाथी - रविवर्मा 1960.
- कथा भारती - विभिन्न लेखक, सुधांशु चतुर्वेदी 1972
- कण्णटी - केशवदेव, आईना-केशवन नंपूतिरि 1973
- केरळसिंहम् - के. एम. पणिक्कर, रत्नमयी दीक्षित 1959.
- चेम्मीन - तकषि, मछुवारे - भारती विद्यार्थी 1956
- चेरुकथकळ - विभिन्न लेखक, मलयालम का श्रेष्ठ कहानियाँ - सुधांशु चतुर्वेदी 1970.
- तकषियुटे कथकळ - तकषि, वी. डी. कृष्णन नंबियार 1985.
- तत्वमसि - सुकुमार अषीक्कोड, सुधांशु चतुर्वेदी 1991
- नवीन कथकळ - विभिन्न लेखक, समकालीन मलयालम कहानियाँ - लक्ष्मीकुट्टिअम्मा 197
- नरकत्तिल निन्नुं - के. दामोदरन, पद्मावती - लक्ष्मण शास्त्री 1960.
- नालुकेट्टु - एम. टी. वासुदेवन नायर, चार दिवारों में -पद्मिनी मेनोन 1972
- पात्तुम्मायुटे आटु, बाल्यकालसखि - बषीर, रत्नमयी दीक्षित 1971
- प्रोफेसर - जोसेफ मुण्डश्शेरी, सुधांशु चतुर्वेदी 1967
- बाल्यकालसखि - बषीर, सुधांशु चतुर्वेदी 1976.
  मंञ्ञु - एम. टी. वासुदेवन नायर, तुषार - श्रीमति हफ्सन सिद्दीकी 1982.
- रण्टिटङ्ङषि - तकषि, दो सेर धान - भारती विद्यार्थी 1957
- विरुतन शंकु - अच्युतन काराट्टु, के. पी. सी. मेनोन 1974.
- वेरुकळ - मलयाट्टूर रामकृष्णन, जड़ें - डॉ. एन ई. विश्वनाथ अय्यर 1976.
- सुधा - टी. एन. गोपिनाथन नायर, सुधांशु चतुर्वेदी 1966.
- एकांकङ्ङळ - विविध लेखक, मलयालम का श्रेष्ठ एकांकी - सुधांशु चतुर्वेदी 1970
- कन्यका - एन. कृष्णपिल्ले, सुधांशु चतुर्वेदी 1972.
- कांचन सीत - श्रीकंठन नायर, सुधांशु चतुर्वेदी 1966.
- कूट्टुकृषि - इटश्शेरी, सहकारी खेती के. रविवर्मा 1970.
- गीतानन्दम् - मेक्काडे परमेश्वरन पिल्ले, पी. जी. वासुदेव 1967
- निङ्ङळेन्ने कम्यूनिस्टाक्कि - तोप्पिल भासी, उत्थान - लक्ष्मण शास्त्री 1960.

- परीक्षा - टी . एन . गोपिनाथन नायर, सुधांशु चतुर्वेदी 1966 .
- प्रतिध्वनि - ,,
- मलयालम एकांकङ्ङळ - विविध लेखक, मलयालम एकांकी - सुधांशु चतुर्वेदी 1977
- मूलधनम् - तोप्पिलभासी, पूँजी - लक्ष्मण शास्त्री 1960 .
- विवाहक्कार्यम - पद्मनाभ पिल्ले, विवाह की बात - सुधांशु चतुर्वेदी 1977 .
- वेलुत्तपिदलवा - ,, 1966 .

काव्य-

- 56 कतिकळ - बालामणि अम्मा, छप्पन कविताएँ - जी . एन . पिल्ले 1971
- अध्यात्म रामायणम् - तुन्जत्तेषुत्तच्छन, एन . के . कुट्टन पिल्ले 1974 .
- आधुनिक कवितकळ विभिन्न कवि, मलयालम की नई कविताएँ - जी . गोपिनाथन 19
- आधुनिक मलयालम् कविता - विविध कवि, डॉ . ए . अरविन्दाक्षन 1985 .
- ओटक्कुषल - जी . शंकरक्कुरुप, जी . एन . पिल्ले - लक्ष्मीचन्द जैन 1966 .
- करुणा - आशान, के . शिवराम अय्यर 1974
- कविश्रीमाला - जी . शंकरकुरुप, श्रीधरमेनोन 1961
- गौरीशंकरम् - एम . पी . अप्पन, एन . चन्द्रशेखरन नायर 1981
- चिन्ताविष्टयाय सीत - आशान, राघवन एस . 1974
- ,, , हरिहरन उण्णित्तान 1974 .
- प्रेमसंगीत - उल्लूर, शिवराम अय्यर 1978 .
- मलयालम काव्यधारा - विविध कवि, डॉ . एन . ई . विश्वनाथ अय्यर 1976 .
- ,, ,, 1978 .
- महात्यागी - एम . ओ . अवरान, पं . नारायणदेव 1984 .
- महाभारतम् - एषुत्तच्छन, मलयालम महाभारत - के . एस . एस . अय्यर 1976 .
- भक्तिदीपिका - उल्लूर, शिवराम अय्यर 1974
- सीता, चण्डालभिक्षुकी, करुणा - आशान, तीन कविताएँ - श्रीधर मेनोन 1973 .
- वळ्ळत्तोळ कवितकळ - वळ्ळत्तोळ, वळ्ळत्तोळ की कविताएँ - रत्नमयी दीक्षित 1959 .
- ,, ,, 1972
- काव्यपीठिका (समीक्षा) - जोसेफ मुण्डश्शेरी, डॉ . रामचन्द्रदेव 1972 .
- केरळत्तिले काळिसेवा (निबन्ध) - चेलनाट्टु अच्युतमेनोन, केरळ की काळिसेवा - विजय कुमारन सी . वी . 1978 .
- मलयालसाहित्यचरित्रम् - परमेश्वरन नायर, मलयालम साहित्य का इतिहास - नागप्पा सी . आर . 1976 .
- संतुष्ट जीवितम् - स्वामिनी मालायोगी, के . सी . सुकुमारन् 1985 .

2 . हिन्दी से मलयालम में

- अमृत और विष - अमृतलाल नागर, सुधांशु चतुर्वेदी 1973 .
- अनाथ - राहुल सांकृत्यायन, पी . एम . कुमारन नायर 1964 .
- अग्निपर्वत - अनन्तपाल शेवडे, मोहन डी . कङ्ङष़ 1956 .

- आगामी अतीत - कमलेश्वर, ऋतुभेदङ्ङळ - वी.डी.कृष्णन नंबियार 1985.
- एक तारा - प्रभाकर माचवे, अभयदेव 1955.
- एकदा - भगवतीप्रसाद वाजपेयी, मनुष्यन्चयुम् मरीचिकयुम् - कुन्नुकुषि कृष्णनकुट्टि 1966
- काला आँधी - कमलेश्वर, कोटुंकाट्टें - वी.डी.कृष्णन नंबियार 1979
- गिरिजाकुमारी - इलाचन्द्रजोशी, जे.आर.जोष्वा 1955.
- तमस - भीष्मसाहनी, पी.माधवन पिल्ले 1991
- नारी - सियारामशरण गुप्त, एस.के.भट्टतिरिप्पार्ट 1960.
- प्रतिज्ञा - प्रेमचन्द, ए.के.दिवाकरन पोट्टि ।
- सफेद शैतान - दुर्गाप्रसाद खत्री, मोहन डी.कङङष 1962.
- प्रेमाश्रम - प्रेमचन्द, ई के दिवाकरन पोट्टि
- बाणभट्ट की आत्मकथा - हजारीप्रसाद द्विवेदी, रत्नमयी दीक्षित 1956.
- विदा - प्रताप नारायण श्रीवास्तव, विटवाङङल - अंबिका के मेनोन 1954.
- मधुरस्वप्न - राहुल सांकृत्यायन, विद्वान टी.के.रामन मेनोन 1967
- मय्यादासिन्टे माळिका - भीष्मसाहनी, पी.माधवन पिल्ले 1991.
- मृगनयनी - वृन्दावनलाल वर्मा, के दिमणि 1965.
- मृत्युकिरण - दुर्गाप्रसाद खत्री, मोहन डी.कङङष 1979.
- मैला आँचल - फणीश्वर नाथ रेणु, पी.गोपालकृष्णकम्मत्त 1954.
- सुखदा - यशपाल, ई.के.शारदा देवी 1985.
- सेवासदन - प्रेमचन्द, दिवाकरन पोट्टि 1955.
- स्वप्नमयी - विष्णुप्रभाकर, पी.जी.वासुदेव 1960
- स्वयंवर - सत्येन्द्रशरत, वरनेत्तेडी - श्रीमान नुपूतिरि 1965.
- वरदान - प्रेमचन्द, ए.के.दिवाकरन पोट्टि 1954
- विसर्जन - पं.मोहनलाल महतो वियोगी, आत्मपरित्यागम् - के.एन.पोट्टि 1959.
- ममता - हरिकृष्णप्रेमी, एन परमेश्वरमेनोन
- कथाभारती - हरिकृष्णप्रेमी, वी.डी.कृष्णन नंबियार 1971
- प्रेमचन्द की कहानियाँ - सं.राधाकृष्णन 1973.
- , 4 - जेयिल - जी.एस.धारासिंह 1946.

प्रेमचन्द की अच्छी कहानियाँ - पी.शंकर 1955.
- 23 हिन्दी कहानियाँ - सं.जैनेन्द्रकुमार, पी.एन.भट्टतिरि 1959.

****** ******

सहायक ग्रन्थसूची

हिन्दी ग्रन्थसूची

- अच्छी हिन्दी - रामचन्द्र वर्मा , बारहवाँ संस्करण 1966 , लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद ।

- अच्छी हिन्दी सुन्दर हिन्दी - श्री शरण , प्रथम संस्करण 1990 , दिनमान प्रकाशन दिल्ली - 6 ।

- अच्छी हिन्दी कैसे बोलें कैसे लिखें - भोलानाथ तिवारी , संशोधित संस्करण 1988 लिपि प्रकाशन दिल्ली - 2 ।

- अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान - सं ·रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, भोलानाथ तिवारी, कृष्णकुमार गोस्वामी , प्रथम संस्करण 1980 , आलोक प्रकाशन दिल्ली

- अनुवाद कला - डॉ एन ·ई ·विश्वनाथ अय्यर , प्रथम संस्करण 1990 , प्रभात प्रकाशन दिल्ली ।

- अनुवाद भाषाएँ, समस्याएँ - डॉ एन ·ई · विश्वनाथ अय्यर , प्रथम संस्करण 198 दक्षिण भरत प्रेस हैदराबाद ।

- अनुवाद सिद्धान्त एवं स्वरूप - डॉ मनोहर सराफ , डॉ· शिवाकान्त गोस्वामी , प्रथम संस्करण 1989 , विद्या प्रकाशन कानपुर ।

- आधुनिक भाषाविज्ञान - डॉ · मोतीलालगुप्त , प्रथम संस्करण 1972 , रिसर्च पब्लिकेशन इन सोश्यल साइन्सेस दिल्ली - 6 ।

- आर्य-द्रविड भाषाओं की मूलभूत एकता - डॉ · भगवान सिंह , प्रथम संस्करण 1973, लिपि प्रकाशन दिल्ली ।

- ऋतम्भरा - डॉ ·सुनीत कुमार चाटर्जी , दूसरा संस्करण 1958 , साहित्य भवन प्राइवट लिमिटेड इलहबाद ।

- कार्यालय पद्धति - डॉ · पी ·जयरामन , प्रथम संस्करण 1988 , मयंक प्रिंटिंग एण्ड पेकेजिंग ।

- कालिदास ग्रन्थावली -रघुवंश चौथा सर्ग - सं सीताराम चतुर्वेदी , तीसरा संस्करण 1962 , बद्रीप्रसाद शर्मा, भारतीय प्रकाशन मंदिर अलीगढ ।

- पश्चिमी हिन्दी बोलियों की व्याकरणिक कोटियाँ - डॉ कैलाशनाथ शुक्ल , प्रथम संस्करण 1973 , प्रमोद पुस्तकमाला इलाहबाद ।

- पारिभाषिक शब्दावली की विकासयात्रा - सं डॉ गार्गी गुप्त , प्रथम संस्करण 1986 , भारतीय अनुवाद परिषद् ।

- प्रामाणिक ग्रन्थों के आधार पर हिन्दी एवं मलयालम व्याकरणों का विकास - शोध प्रबन्ध - डॉ के नारायणन नंबीशन , 1984

- प्रारंभिक अनुवाद विज्ञान-सिद्धान्त और प्रयोग - अवधेश मोहन गुप्त , प्रथम संस्करण 1990 , सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली - 7 ।

- भारत का भाषा सर्वेक्षण खण्ड 2, भाग 2 - सर जार्ज एब्राहाम ग्रियर्सन अनु. उदय नारायण तिवारी , दूसरा संस्करण , प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश ।

- भारत के प्राचीन भाषा परिवार और हिन्दी खण्ड 2, आर्येन्द्र और जनपद - रामविलास शर्मा , प्रथम संस्करण 1979, राजकमल प्रकाशन दिल्ली ।

- भारतीय भाषाविज्ञान - डॉ. किशोरीदास वाजपेयी , प्रथम संस्करण 1959 , चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी ।

- भारतीय भाषाशास्त्रीय चिन्तन - सं सर्वश्री विद्यानिवास मिश्र, अनिल विद्यालंकार , माणिकलाल चतुर्वेदी , प्रथम संस्करण 1976 , राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर ।

- भारत में आर्य और अनार्य - डॉ. सुनीतकुमार चाटर्जी , प्रथम संस्करण 1959 सूचना तथा प्रकाशन संचालनालय मध्यप्रदेश ।

- भाषाविज्ञान और हिन्दी - सरयूप्रसाद अग्रवाल , दूसरा संस्करण 1970 , लोकभारती प्रकाशन ।

- भाषा विज्ञान का अनुशीलन - डॉ. कैलाशनाथ पाण्डेय , प्रथम संस्करण जनप्रकाशन औद्योगिक उत्पादन ।

- भाषाविवेचन - डॉ॰ भगीरथ मिश्र , प्रथम संस्करण 1990 , साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद ।

- भारतीय भाषाएं और हिन्दी अनुवाद समस्याएं, समाधान - डॉ कैलाशचन्द्र भाटिया , प्रथम संस्करण 1992 , वाणी प्रकाशन दिल्ली ।

- भाषावैज्ञानिक निबन्ध - डॉ॰ जगदीशप्रसाद कौशिक , प्रथम संस्करण 1981 , यूनिक ट्रेडर्स , जयपुर ।

- ब्रजभाषा और खड़ीबोली के व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन - डॉ॰ गेंदलाल शर्मा प्रथम संस्करण 1965 , प्रकाशन प्रतिष्ठान मेरठ ।

- व्यावहारिक राजभाषा - डॉ॰ आलोककुमार रस्तोगी , प्रथम संस्करण 1986 , जीवन ज्योतिप्रकाशन दिल्ली ।

- व्यावसायिक हिन्दी - डॉ॰ रामप्रकाश , डॉ॰ दिनेशगुप्त , प्रथम संस्करण 1991 राधाकृष्णप्रकाशन दिल्ली ।

- शैली विज्ञान - सुरेश कुमार , प्रथम संस्करण 1977 , दि माकमिलियन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड ।

- संपर्क भाषा हिन्दी - डॉ॰ भोलानाथ तिवारी , डॉ कमलसिंह , प्रथम संस्करण 1987 , प्रभात प्रकाशन दिल्ली ।

- सरल हिन्दी व्याकरण - डॉ॰ तनसुखराम गुप्त , प्रथम संस्करण 1989 , हिन्दी पुस्तक भवन दिल्ली ।

- सर्वनाम , अव्यय और कारकचिह्न - डॉ॰ सीताकिशोर , प्रथम संस्करण 1989 आराधना ब्रदर्स कानपुर ।

-सुगम हिन्दी व्याकरण - जीवन शास्त्री , संशोधित संस्करण , राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली ।

- सुबोध हिन्दी व्याकरण - डॉ॰ आरज्योति , दूसरा संस्करण 1969 , राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली ।

- सुबोध हिन्दी व्याकरण - फूलचन्द जैन सारंग , प्रथम संस्करण 1971 , कैलाश प्रिन्टिंग प्रेस आग्रा ।

- हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास - रामशेरसिंह नरूला , प्रथम संस्करण 1957 , राजकमल प्रकाशन दिल्ली ।

- हिन्दी और भारतीय भाषाएं - सं॰ डॉ॰ भोलानाथ तिवारी , डॉ॰ कमलसिंह , प्रथम संस्करण 1987 , प्रभात प्रकाशन दिल्ली-6 ।

- हिन्दी का वाक्यात्मक व्याकरण - डॉ० सूरजभान सिंह , प्रथम संस्करण 1985 , साहित्य सहकार दिल्ली -5 ।

- हिन्दी की ध्वनिसंरचना - डॉ० भोलानाथ तिवारी , प्रथम संस्करण 1987 , साहित्य सहकार दिल्ली -5 ।

- हिन्दी का मौलिक व्याकरण - राष्ट्रभाषा पतंजली निगमानंद परमहंस , प्रथम संस्करण 1987 , साहित्यागार जयपुर ।

- हिन्दी कार्यालय निर्देशिका - गोपीनाथ श्रीवास्तव , प्रथम संस्करण 1987 , सामयिक प्रकाशन दिल्ली ।

- हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास - शोधप्रबन्ध - डॉ० शिवराजशर्मा , प्रथम संस्करण 1970 , रामलाल पुरी , आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली ।

- हिन्दी के साथ द्रविड भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण - विविध लेखक , प्रथम संस्करण 1963 , दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ।

- हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि - भैरवप्रसाद शुक्ल , प्रथम संस्करण 1988 , मयंक प्रिंटिंग एण्ड पैकेजिंग लखनऊ -3 ।

- हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास - डॉ० उदयनारायण तिवारी , प्रथम संस्करण 1969 , भारतीभंडार प्रेस इलाहबाद ।

- हिन्दी भाषा का रचनात्मक व्याकरण - यज्ञदत्त शर्मा , प्रथम संस्करण 1985 , लाइब्रेरी बुक सेन्टर दिल्ली ।

- हिन्दी भाषा का विकास - रामदेव त्रिपाठी , देवेन्द्रनाथ शर्मा , प्रथम संस्करण 1971 , राधाकृष्ण पब्लिकेशन्स ।

- हिन्दी भाषा का स्वरूप विकास - डॉ० अवधेश्वर अरुण , प्रथम संस्करण 1973 , बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पाटना ।

- हिन्दी भाषा की सामाजिक भूमिका - डॉ० भोलानाथ तिवारी , मुकुल प्रियदर्शिनी प्रथम संस्करण 1982 , दक्षिण भारत हिन्दी प्रचारसभा मद्रास ।

- हिन्दी - मणिपुरी क्रिया संरचना - डॉ० इकबालसिंह काङजम , प्रथम संस्करण 1989 प्रवीन प्रकाशन , दिल्ली-30 ।

- हिन्दी व्याकरण - कामताप्रसाद गुरु , नवाँ संस्करण 1970 , नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी ।

- हिन्दी व्याकरण की रूपरेखा - डॉ० ज० म० दीमशित्स , प्रथम संस्करण 1966 , राजकमल प्रकाशन दिल्ली ।

- हिन्दी में व्यावहारिक अनुवाद - डॉ० आलोक कुमार रस्तोगी , प्रथम संस्करण 1984 , जीवन ज्योति प्रकाशन दिल्ली ।

- हिन्दी विज्ञापनों की भाषा - आशा पाण्डेय , प्रथम संस्करण 1986 , ब्लेकी एण्ड सन पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली ।

- हिन्दी साहित्य को हिन्दीतर प्रदेशों की देन - डॉ० मलिक मोहम्मद , प्रथम संस्करण 1977 , राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली ।

पत्र-पत्रिकाएँ

- अनुवाद जुलाई-सितंबर 1990 वर्ष-26, अंक-3 ।
- अनुवाद जनवरी-मार्च 1992 वर्ष 34, अंक-3 ।

-आलोचना त्रैमासिक अप्रेल-जून 1989 वर्ष - 37, अंक - 89 ।

- गगनांचल - विश्व हिन्दी अंक 1983 वर्ष - 6, अंक - 4 ।

- नागरी संगम - त्रैमासिक अप्रेल-जून 1990 वर्ष 12, अंक-46 । नागरी लिपि परिषद् , दिल्ली-2 ।

- भाषा - मार्च 1962 वर्ष 1, अंक 3
- भाषा - मार्च 1964 वर्ष 3, अंक 3
- ,, - सितंबर 1964 वर्ष 2, अंक 3
- ,, -मार्च 1965 वर्ष 4, अंक 5
- ,, - जून 1965 वर्ष 4, अंक 4
- ,, - सितंबर 1965 वर्ष 5, अंक 1
- ,, - दिसंबर 1965 वर्ष 5, अंक 2
- ,, - सितंबर 1966 वर्ष 5, अंक 2
- ,, - दिसंबर 1966 वर्ष 4, अंक 3
- ,, - मार्च 1970 वर्ष 9, अंक 3
- ,, - अप्रेल 1971 वर्ष 13, अंक 4
- ,, - फरवरी 1974 वर्ष 14, अंक 1
- ,, - मार्च 1978 वर्ष 17, अंक 3-4
- ,, -सितंबर 1984 वर्ष 24, अंक 1
- ,, - मई-जून 1992 वर्ष ,अंक

- इस्पात राजभाषाभारती - जुलाई-सितंबर 1984 वर्ष 5, अंक 3
- ,, - अप्रैल-सितंबर 1987 वर्ष 8, अंक 3
- ,, - मार्च-जून 1991 वर्ष 12, पूर्णांक 31

कोश - ग्रन्थ

- आधुनिक हिन्दी शब्दकोष - सं. गोविन्द चातक, प्रथम संस्करण 1986, तक्षशिला प्रकाशन दिल्ली ।

- अंग्रेज़ी हिन्दी शासकीय प्रयोग कोश - गोपीनाथ श्रीवास्तव, प्रथम संस्करण 1988, राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली ।

- अंग्रेज़ी हिन्दी कोश - फा. कामिल बुल्के, तीसरा संस्करण 1981, एस चन्द एण्ड कंपनी दिल्ली ।

- उच्चतर हिन्दी अंग्रेज़ी कोश - डॉ हरदेव बाहरी, प्रथम संस्करण 1988, वाणी प्रकाशन दिल्ली ।

- बृहद् पारिभाषिक शब्दसंग्रह विज्ञान खण्ड 2 - भारत सरकार, प्रथम संस्करण 1973 केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ।

- राजभाषा अंग्रेज़ी हिन्दी शब्दकोश - डॉ. श्यामसिंह शशि, प्रथम संस्करण 1989, प्रवीण प्रकाशन दिल्ली ।

- शिक्षार्थी हिन्दी अंग्रेज़ी शब्द कोश - डॉ. हरदेव बाहरी, प्रथम संस्करण 1981, भारत मुद्रणालय दिल्ली ।

- संस्कृत हिन्दी कोश - वामन शिवराम आप्टे, दूसरा संस्करण 1961, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली ।

मलयालम कोश ग्रन्थ

- इंग्लीश मलयालम भरणशब्दकोशम् - पी. दामोदरन नायर, प्रथम संस्करण 1974,

- मलयालम इंग्लीश निघण्टु - सी. माधवन पिल्लै, प्रथम संस्करण 1976, साहित्य प्रवर्तक सहकरणसंघम ।

- भरण शब्दावली - सं. एन वी. कृष्ण वारियर, ए एन पी. उम्मरकुट्टि

अंग्रेजी कोश ग्रन्थ

- A Practical Hindi English Dictionary - Dr. Bholanadh Tivari, Mahendra Chathurvedi , 10th Edition, 1983 , National Publishing House

- Terms in Education, Mathematics, Zoology , Chemistry, Botany, Geology etc. First Edition 1952 , University of Travancore.

मलयालम ग्रन्थ सूची

- अभिनव मलयाल व्याकरणम् - वासुदेव भट्टतिरि , प्रथम संस्करण 1980 .

- अर्थविचारम् - वेदबन्धु , प्रथम संस्करण 1972 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट .

- कल जीवितम् तन्ने - कुट्टिट कृष्णमारार , दूसरा संस्करण 1970 , साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम्

- काव्यभाषायिले प्रश्नङ्ङल - देशमंगलम् रामकृष्णन , प्रथम संस्करण 1986 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट .

- के.एम्. जॉर्जिन्टे प्रबन्धङ्ङल - के . एम् जॉर्ज , प्रथम संस्करण 1989 , डी सी . बुक्स् कोट्टयम

- केरल कौमुदी - कोवुण्णी नेट्टुङ्ङाड़ी , चौथा संस्करण 1990 , पूर्णा पब्लिकेशन्स् कालिकट .

- केरल भाषा विज्ञानीयम् - डॉ . गोदवर्मा , प्रथम संस्करण 1951 , विभागीय प्रकाशन, त्रावनकोर विश्वविध्यालय .

- केरलीमित्रम् - सी . कुञ्ञियल , प्रथम संस्करण 1979 , विद्यार्थीमित्रम् प्रेस कोट्टयम् .

- गवेषणत्तिन्टे प्रश्नङ्ङल - सं . के . रामचन्द्रन नायर, पी . वी . वेलायुधन पिल्लै , प्रथम संस्करण 1976 , मलयालम विभाग, केरल विश्वविध्यालय .

- गवेषण मेघला - डॉ . वेल्लायणि अर्जुनन , प्रथम संस्करण 1972 ,

- तेट्टिल्लात्त मलयालम - पन्मन रामचन्द्रन नायर , प्रथम संस्करण 1990 ,

- द्राविडम् - सुनीत कुमार चाटर्जी , प्रथम संस्करण 1975 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- द्राविड भाषकल - एम एस· आन्द्रोनोव , अनु · डॉ वो आर · प्रबोध चन्द्रन , पो · ई · दामोदरन नंबूतिरि , प्रथम संस्करण 1974 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- द्राविड भाषा व्याकरणम् - डॉ · काल्डुवेल , दूसरा संस्करण 1985 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- द्राविड भाषाशास्त्रम् - ए एन मूसत् , प्रथम संस्करण 1973

- नल्ल मलयालम - सी · वो वासुदेव भट्टतिरि , प्रथम संस्करण 1979 ,

- निघण्टु विज्ञानम् - वो सोमशेखरन नायर , प्रथम संस्करण 1982 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- प्राचीन मलयालम - डॉ · पुतुश्शेरि रामचन्द्रन , प्रथम संस्करण 1985

- प्रयोगशैली - विद्वान एन · कोयिक्कुट्ट , प्रथम संस्करण 1959 , पो के · ब्रदेर्स, कालिक्कट ·

- भाष ओर॰ पठनम् - चात्तनात्त अच्चुतनुण्णी , प्रथम संस्करण 1971 , साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम्

- भाषा गवेषणम् - डॉ के · कुंजुण्णिराजा , प्रथम संस्करण 1962 , मंगलोदयम् प्रेस , तृश्शूर

- भाषा चरित्रम् - जे · पत्मकुमारी , प्रथम संस्करण 1974 ,

- भाषा दर्शनम् - सो जे · राय , प्रथम संस्करण 1982 ·

- भाषापरिचयम् - कुट्टिकृष्ण मारार , दूसरा संस्करण 1962 , पो · के · ब्रदेर्स , कालिक्कट ·

- भाषाशास्त्र चिंतकल - चंपक्कुलम अप्पुक्कुट्टन नायर , प्रथम संस्करण 1968 ·

- भाषासाहृयम् - साहित्य विशारद हाबेलजो वर्गीस , प्रथम संस्करण 1956 , ओरियेन्ट लौंगमेन्स , मद्रास ·

- भाषयुम् गवेषणवुम् - उल्लाट्टिल गोविन्दनकुट्टि नायर , प्रथम संस्करण 1958 , के आर ब्रदर्स , कालिकट ·

- भाषयुम् पठनवुम् - वी · ऐ सुब्रह्मण्यम् , प्रथम संस्करण 1974 , भाषाशास्त्र विभागम् , केरल विश्वविद्यालय ·

- भाषाशास्त्र दर्पणम् - देशमंगलम रामकृष्णन, हुमायु रषीद, जी · हेमलता , प्रथम संस्करण 1974 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- भाषाशास्त्रम् - वासुदेव भट्टतिरि , प्रथम संस्करण 1970 , करेन्ट बुक्स, तृश्शूर ·

- भाषाशास्त्रम् - एडमरत्तु वी सेबास्टियन , दूसरा संस्करण 1922 , साहित्य प्रवर्तक सहकारसंघम्, कोट्टयम् ·

- मध्यम व्याकरणम् - ए · आर राजराज वर्मा , प्रथम संस्करण 1970 , कमलालयम् तिरुवनन्तपुरम्

- मलयालत्तिले परकीय पदङ्ङल - डॉ · पी · एम जोसफ , प्रथम संस्करण 1984 केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- मलयालत्तिन्टे वलर्च्चयिल वशङ्ङल - सी · के चन्द्रशेखरन नायर , प्रथम संस्करण 1968 ,

- मलयाल भाषापठनङ्ङल - सं के · एम प्रभाकरवारियर, पी एन · रवीन्द्रन , प्रथम संस्करण 1974 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- मलयाल भाषाशास्त्रम् - आर लीलादेवी , प्रथम संस्करण 1973 , दि वीनस प्रेस बुक डिपोट, कोच्चि ·

- मोषियुम् पोरुलुम् - डॉ · के · एम प्रभाकरवारियर , प्रथम संस्करण 1988 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- रामचरितवुं प्रचीन भाषाविचारवुं - नटुवट्टम् गोपालकृष्णन , प्रथम संस्करण 1989 ·

- लिपिकलुम् मानव संस्कारवुम् - के ·ए · जलील , प्रथम संस्करण 1989 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- वलरुन्न केरली - के ·एम जार्ज , दूसरा संस्करण 1979

- वाक्यघटना - ई ·वी ·एन · नंबूतिरि , प्रथम संस्करण 1977, केरल भाषा इंस्टिट्यूट

- विवर्तनम् - विविध लेखक , प्रथम संस्करण 1973 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- विवर्तनत्तिन्टे भाषाशास्त्र भूमिका - डॉ वी आर प्रबोधचन्द्रन , दूसरा संस्करण 1986 केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

- व्याकरणमित्रम - साहित्यकुशलन एम. शेषगिरिप्रभु , चौथा संस्करण 1922 , कनारोस मिशन प्रेस एण्ड बुक डिपोट, मांगलूर ·

- शब्ददङ्डलुम चिह्नङ्डलुम् - ए · कोणट्टोव , प्रथम संस्करण 1974 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट

- शब्दसौभगम् - फादर जॉन कुन्नप्पल्लि , प्रथम संस्करण 1976 , प्रॉटोपिकल इंस्टिट्यूट, आलवे ·

- शैलोप्रदीपम् - वट्टक्कुम्कूर राजराजवर्मा , दूसरा संस्करण 1967, कमलालय बुक डिप्पो तिरुवनन्तपुरम्

- शैलीविचारम् - जे ·माथ्यूस , प्रथम संस्करण 1964 , करन्ट बुक्स ·

- स्वनमण्डलम् - वेणुगोपालप्पणिक्कर , प्रथम संस्करण 1981 ,

- संस्कृत व्याकरणत्तिनें केरलपाणिनियुटे संभावना - डॉ ·एन ·वी · कृष्णवारियर , प्रथम संस्करण 1987 , केरल भाषा इंस्टिट्यूट ·

अंग्रेज़ी ग्रन्थसूची

- A Linguistic theory of translation - J C Catford , First Edition 1965 , Oxford University Press

- Distribution of languages in India in States and Union Territories - Central Institute of Indian Languages First Edition 1973

- Language Structures and Translation - Engene A.Nida , First Edition 1975 , Stanford University Press, California

- Linguistics General and Dravidian - Chathanath Achyuthanunny , First Edition 1970 , Asian book stall, Pathanamth tta.

- Function and context in linguistic analysis - Ed.D.J.Allerton , First Edition 1979, Cambridge University Press.

- Hindi Semantics - Hardev Bahri , First Edition 1959, Bharathi Press Publications.

- I A Richard's theory of language - R.P.Sharma , First Edition 1979, S.Chand and Company Ltd, New Delhi.

- A comparative study of vocabulary of Hindi and Malayalam thesis - Dr.M.Easwari , First Edition 1973 Department of Hindi, Cochin University of Science and Technology.

- Language Acquisition, thought and disorder - M S thirumalai First Edition 1977, Central Institute of Indian Languages, Mysore.

- Language and Power - Edr. Cheris Kramarae , First Edition 1984, Sage Publications, London.

- Linguistics - Edr. Archibald A.Hill , First Edition 1969, Voice of America forum lectures.

- Linguistic theories and their application - Council for cultural co-operation , First Edition 1967 AIDELA.

- Modern Technical writing - Theodore A Sherman, Simon S Johnson Third Edition 1975, Prentice Hall

- Our Experience of language - Walter Nash , First Edition 1971, B T Batsford Ltd, London.

- Pioneers in linguistics Series I - L.V.Ramaswamy Iyer & Seshagiri Prabhu , First Edition 1978, DLA, Trivandrum.

- Practical Technical Writing - Edr. R.M.Ohmann, First Edition 1968, Ritchie R.Ward, New york.

- Proper punctuation - Kellog Smith & Leighton G. Steele First Edition 1959, The English Universities press Ltd., London.

- Psycho Linguistics - Edr. Judith Greene , First Edition 1972, Penguin books.

- Sense and Sense development - R.A. Waldron , First Edition 1980, Claria books, Delhi.

- Structuralism-an introduction - Edr. David Robey , First Edition 1973, Oxford University Press.

- Studies in Malayalam Grammar - K.M.Prabhakara Warrier , First Edition 1979, University of Madras.

- Style - F.L.Lucas, First Edition 1955, Cassell & Company Ltd., London.

- Style and Structures in Literature - Edr. Roger fower , First Edition 1975, Basil Blackwell & Mott Ltd., Oxford

- The craft of writing - Edr. H.K.Kaul, First Edition 1978 Arnold Heinemann Publications(India).

- The History and origin of language - A.S.Diamond LLd, First Edition 1959, Methmen & Co. Ltd., London

- The Indianisation of English - Braj B Kachru , First Edition 1983, Oxford University Press.

- The learning of language - Edr. Carrll Erreed , First Edition 1961, National Council of Teachers of English.

- The language process - Donald A Sanborn , First Edition 1971, Monton, The HAGUE.

- The origin and diversification of language - Edr. Joel Sherzer , First Edition 1972, Rontledge & Kegan Paul, London.

- Thinking and Speaking - Otis M.Walter & Robert h. Scott, First Edition 1962, Macmillian London.

- Write what yo mean - R.W.Bell, Fourth Edition 1966, George Allen & Ltd, London.

* * * * *